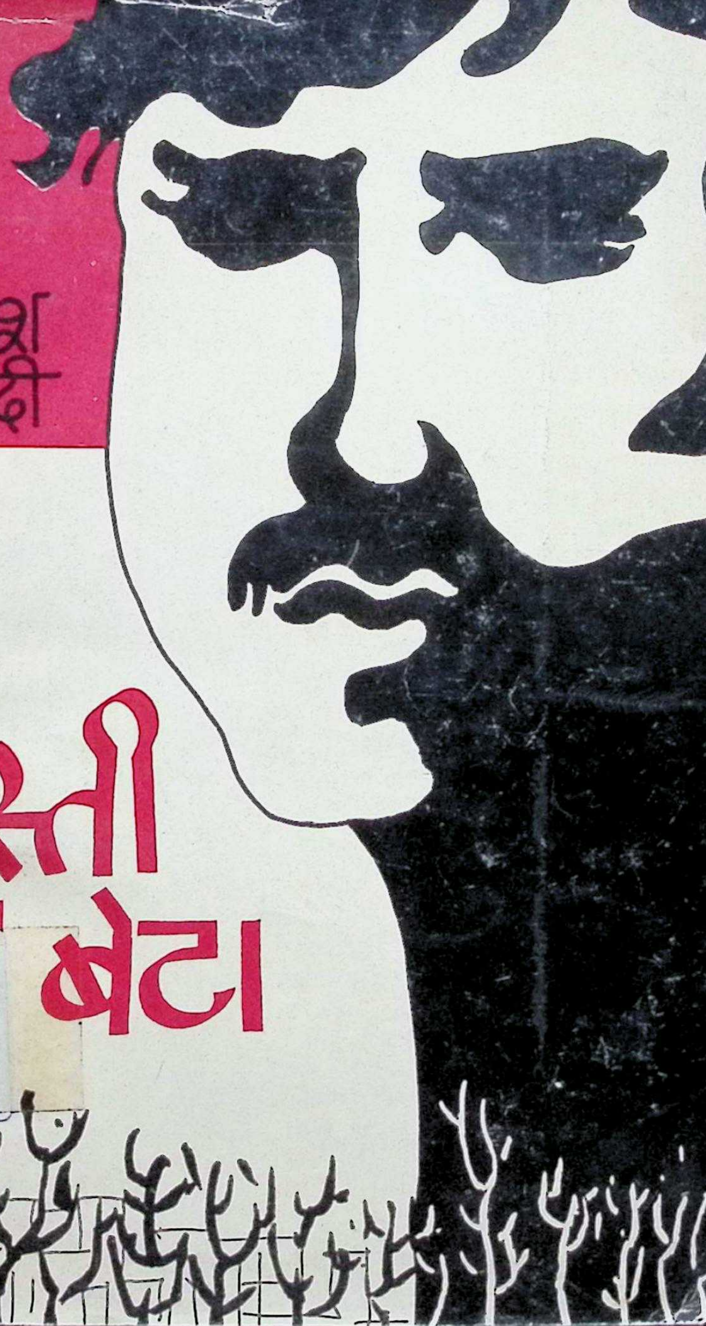

जगदीश चतुर्वेदी

बस्ती
बेटा

9·833
394ब

बस्ती का बेटा

जगदीश चतुर्वेदी

जगदीश चतुर्वेदी

१५ अगस्त १९२९ में जन्में जगदीश चतुर्वेदी ने सन् १९४५ तक उत्तर प्रदेश के विभिन्न स्थलों पर रहने और अध्ययन करने के बाद १९४६ से राजस्थान को अपना कार्य क्षेत्र बनाया। मूलतः कवि, पर जीविका का साधन पत्रकारिता। हिन्दी-अंग्रेजी के गद्य-पद्य पर समान अधिकार। कुछ काव्य पुस्तिकाओं के लेखन से राज्य सरकार के कोप भाजन हुए और जन सम्पर्क अधिकारी का सरकारी पद छोड़ना पड़ा।

संघर्षशील कवि, स्वतंत्र लेखक-पत्रकार के रूप में कम से कम दो दर्जन पुस्तक-पुस्तिकाओं के रचयिता। हिन्दी, अंग्रेजी के अनेक दैनिक पत्रों से जुड़े और अलग हुए। यह आपकी पहली औप-न्यासिक कृति है।

सम्पर्कसूत्र :
चम्पालाल राका एण्ड कं०
चौड़ा रास्ता, जयपुर (राजस्थान)

"यदि इस उपन्यास के पात्र व घटनाओं की कहीं कोई समता मिले, तो वह आकस्मिक ही होगी। किन्तु एक दृष्टि से वही इस उपन्यास की सफलता भी है। झूठ पर चढ़े सत्य के मुल्लमे की वह चमक भी है। इस काल्पनिक सृष्टि को और कुछ न माना जाय।"

प्रचारक बुक क्लब
हिन्दी प्रचारक संस्थान
पो० बा० ११०६ पिशाचमोचन, वाराणसी—२२१००१

जगदीश चतुर्वेदी

बस्ती का बेटा

भारत के प्रथम बुक क्लब
प्रचारक बुक क्लब
हिन्दी प्रचारक संस्थान
पो० बा० ११०६, पिशाचमोचन, वाराणसी–२२१००१ के लिए
विजय प्रकाश बेरी द्वारा प्रकाशित तथा
सीमा प्रेस, भरत मिलाप कालोनी, वाराणसी में मुद्रित।

सन् १९८४

Jagdish Chaturvedi
BASTI KA BETA

मूल्य : ९.००

डा. डिल्ली रमण रेग्मी
कल्याणी ... ... नगर
हैदराबाद
2654

बेटा

लखपतिया कटले में लगी आग में लाखों का सामान जला। एक गाय, तीन बकरियाँ और एक शिशु को भी यह अग्नि स्वाहा कर गई। जब आग लगी थी तो लोग परेशान हुए थे और उन्होंने आग बुझाने की कोशिश भी खूब की थी।

दो वर्ष बाद वह बस्ती एकदम नई हो गई। लोग चटखारे ले लेकर आग में हुई तबाही का किस्सा सुनाते और फिर गर्व से नई बस्ती को देखते। कुछ लोग तो खुले आम उस आग को साधुवाद देने लगे। जो पुराना और जीर्ण शीर्ण था, वह नष्ट हो गया। तभी तो नया उसका स्थान ले सका।

इतिहास दो साल को कोई महत्व नहीं देता। किन्तु उसकी स्मृति में भी इस तरह नाश और निर्माण के असंख्य उदाहरण हैं।

कहते हैं, यह आग जान बूझ कर लगाई गई थी। लाला छदामी लाल की पुराने कटला मार्केट में तीस में से ग्यारह दुकानें थीं। यह भी कहा जाता है कि लाला ने जिस दिन आग लगी उससे एक दिन पहले अपनी दुकानों का माल हवेली में मँगवा लिया था। कहने में क्यों चूकें, लोगों का विश्वास है कि आग भी लाला ने लगवाई थी, क्योंकि उनकी सभी दुकानों का आग का बीमा था और लाला किश्तें देते देते परेशान हो उठे थे।

नये मार्केट में लाला छदामी लाल की ग्यारह की जगह पन्द्रह दुकानें हैं, पहले से ज्यादा बड़ी, ज्यादा शान-शौकत वाली। इन पन्द्रह में से पाँच दुकानें नुक्कड़ों पर हैं और पाँच दुकानें डबल, जिनमें बड़े बड़े शो रूम हैं। इन दो वर्षों में लाला की हैसियत में दो बिन्दियाँ और बढ़ी हैं और वे लखपति से बढ़कर करोड़पति बन चुके हैं।

खैराती रंगरेज, मौलाबख्श धोबी और फ्रन्टियर वाला बिसाती इस आग में ऐसे तबाह हुए कि उठ न पाये और इस बार नई बस्ती या नये बाजार में न बस कर सबसे पुरानी ऊपर वाली बस्ती में जा बसे।

इतिहास व्यक्तियों को तो महत्व देता है, पर खैराती या मौलाबख्श जैसे सामान्यजन को नहीं। इतिहास सिकन्दरों की बात करेगा, राष्टों के उत्थान पतन की बात करेगा, उसे एक गाय, तीन बकरियों व एक शिशु के करुण दाह पर आँसू गिराने की फुरसत नहीं है।

और हम लोग भी मौलाबख्श को भूल कर आगे बढ़ेंगे। खैराती रंगरेज था, मौलाबख्श धोबी था। लखपतिया कटले की आग में इनकी दुकानें जलीं, और घर जले क्योंकि ये रहते भी वहीं थे। आग से तो वे जान बचाकर बाल बच्चों को बटोर कर भाग आये, किन्तु जान बचाना उन्हें मंहगा पड़ा। यदि वे आग में से कपड़े बचा लाते और खुद आग में जल जाते, तो बस्ती वालों की निगाह में ठीक रहता। इन बस्ती वालों ने ही बेचारों को तानों की आग में तिल तिल जला कर मार दिया।

वे मर गये और उनकी कहानी खत्म हुई। लाला छदामी लाल अभी जिन्दा हैं और बुढ़ापे में भी यह सपना देखते हैं कि जैसे लखपतिया कटला निराला बाजार बना वैसे ही वे अभी और बढ़ेंगे और नई सीमायें तोड़ेंगे।

2

कुल्लो की कहानी लखपतिया कटले से भी पहले समाप्त हो चुकी थी।

कुल्लो का नाम शायद कुलसुम रहा होगा। राजा मौलाबख्श के यहाँ बचपन में कपड़ों के लिये कहने जाता, तो कुल्लो धुले हुए कपड़ों का बंडल सिर पर उठा कर उसके साथ घर तक आती थी। राजा ने उसे कुल एक बार डाँटा था और वह उससे पन्द्रह दिन तक रूठी थी। किन्तु इस बात पर उसे अपने घर और राजा के घर हमेशा डाँट खानी पड़ती थी कि वह राजा पर अधिकार जताती रहती थी।

लखपतिया कटले से बाबू मोहल्ला ,ज्यादा दूर नहीं है। कुल्लो और राजा को यह बात तब भी खलती थी जब वे कपड़ों की पोटली लाते ले जाते थे। कुल्लो राजा से मैले कपड़ों की पोटली सिर पर रखवाती और राजा को अपने घर तक खींच कर ले जाती ।

एक दिन कुल्लो ने राजा से पूछा, "मैं चपातियाँ पकाऊँ तुम खा लोगे ?"

पांच साल की कुल्लो, सात साल का राजा। राजा शुद्ध आहार विहार वाले ब्राह्मणों के कुल का था। कुल्लो का स्पर्श भी उसके लिए वर्जित था। यह तो उसके मोहक बाल सौन्दर्य का चमत्कार था कि कुल्लो मुसलमान होकर भी घर के बहुत भीतर तक घुस आती थी और राजा की माँ उसे क्षमा कर देती थी। वह कभी कभी हंसकर इठलाकर घर के बर्तन भी छू लेती थी और माँ उसे बिलकुल वैसे ही मीठी घुड़की देती थीं, जैसे शरारत करने पर राजा को ।

राजा ने उत्तर दिया, "कुल्लो बीवी जूतियाँ पहन कर चपातियाँ पकायेगी" और हंसकर एँड़ो पर घूम कर तालियाँ बजाई।

"नहीं, मैं नहाकर चौके में बैठकर माँ की तरह पतली पतली रोटियाँ बनाऊँगी।"

राजा ने अपना ज्ञान टटोला—मुसलमानों के हाथ का छुआ नहीं खाना चाहिए, वे जूठे गिलास को घड़े में डाल कर पानी पी लेते हैं, वे जूठ-कूठ का विचार नहीं करते, इत्यादि। हां, वे नहाते धोते भी नहीं हैं। कुल्लो नहा धो कर चौके में रोटी बनाये तो ?

राजा के सामने यह समस्या इसलिए और विकट हो गई थी कि कुल्लो ने अपनी कसम दिलाकर यह बात और किसी को न बताने के लिये उसे पाबंद कर दिया था,।

देखें क्या होता है, राजा ने कह दिया, "नहीं खाऊँगा" और कुल्लो को जीभ दिखा दी।

"मत खाना, पर जीभ क्यों दिखाता है ?"

"जीभ हमारी। हम दिखायेंगे। टिली लोली।"

"अच्छा हम भी जीभ दिखायेंगे। टि-ली-ली-ली। और अँगूठा भी दिखायेंगे।"

अब तो हम कभी-क ब् ब् ब् ब् भी तेरे हाथ की रोटी नहीं खायेंगे। कुल्लो मुसलमाननी।"

शायद राजा की यह बात गलत हो गई। इन दो अबोध बच्चों के बीच जाति-धर्म की दीवार बुजुर्गों के घर पर दिये ज्ञान के कारण खड़ी हो गई थी। यही वह दिन था, जब राजा ने कुल्लो को डाँटा (मुसलमाननी कहा) और वह तीन बार कपड़ों के आदान प्रदान के बीच रूठी रही। चौथी बार राजा को कुल्लो से यह कह कर मेल करना पड़ा कि कुल्लो मुसलमाननी नहीं है, अच्छी है और राजा उसकी हाथ की रोटी खा लेगा।

इस बार राजा को कहना पड़ा कि उसकी कसम, कुल्लो यह बात किसी और से न कहे। और तब जीभ से जीभ मिलाकर कुल्लो और राजा ने मेल किया।

3

राजा के उन दिनों के मित्र थे हंडू और उसकी बहिन गंगादेई, उम्र दस वर्ष और इस कारण कभी कभी लीडर। डाक्टर का लड़का विजय भी इनके साथ खेलता था।

बाल टोली का प्रिय खेल था, पहाड़ियों में खड़िया और गेरू की खोज। पत्थर की ये पहाड़ियाँ ज्यादा ऊँची नहीं हैं और इनमें किसी-किसी पत्थर पर गेरू या खड़िया मिलती है।

एक दिन डाक्टर का लड़का विजय गेरू खड़िया के खेल में गिर पड़ा, उसे चोट लगी और वह रोने लगा।

खेल में यह विघ्न भयंकर था। यदि घरवालों से न्याय कराया जाता, तो टोली छिन्न-भिन्न होना वयस्क न्याय का पहला चरण होता। इसलिए विजय के इलाज की वहीं व्यवस्था आवश्यक थी।

राजा ने कहा, "इसे बर्फी खिलाओ।"

गंगादेई के पिता रामभरोसे जजमानी में उस दिन बर्फी लाये थे जो थोड़ी थोड़ी सब बालक चख चुके थे। पंडित रामभरोसे उस समय घर पर नहीं थे (गंगादेई और हंडू मातृहीन थे)। गंगादेई बर्फी की व्यवस्था करने उसी भाव से रवाना हुई जिस भाव से हनुमान संजीवनी की खोज में गये थे।

"इसके गेरू लगाओ और थूक में खड़िया मिला कर चटाओ।" हंडू ने सुझाव दिया। शायद उसे गंगादेई पर विश्वास न था। जाने कितनी बर्फी निकाल लाये।

विजय ने इस पर, जैसा अप्रत्याशित न था, विद्रोह किया और दुगने जोर से रोने की धमकी दी। अभी वह सिसक रहा था।

"विजय, तू मेरी पीठ में एक मुक्का मार ले,"—यह सुझाव जोगी का था, जो पीठ पर मुक्के खाने का अभ्यस्त था। यह प्रकट रहस्य था कि उसके शरीर पर बालिश्त भर चरबी होने के कारण उसको लगती कम है।

यह सुझाव दो बार माना गया। पहले मुक्के को राजा और हंडू द्वारा हल्का होने के कारण फाउल करार दिया गया। इसलिये दूसरा मुक्का सब लोगों द्वारा एक, दो, तीन के समवेत नारे की शक्ति के साथ भरपूर प्रहार से मारा गया, और विजय को हंसी आ गई।

अभी बर्फी नहीं आई थी, इसलिये विजय की चोट का इलाज अधूरा था। विजय ने हँसी के बीच में ही आँसू निकाल कर और हंसते हुए मुंह को रोते हुए मुँह में परिवर्तित करके यह विश्वास दिलाना चाहा कि अभी जो मुक्के के साथ आई थी हंसी नहीं थी, बल्कि रूदन की ही एक मुद्रा थी।

विजय को हंडू की पीठ पर सवारी मिली, चोट के स्थान पर गेरू मला गया, सबसे दुगना बर्फी का हिस्सा मिला और उसकी चोट ठीक हो गई।

मगर गंगादेई और हंडू को घर पर तब तक मार खानी पड़ी, जब तक इलाज की पूरी कथा पंडित रामभरोसे के कान में न पड़ गई। इसके बाद एकाध हल्का उदासीन झापड़ और फिर पंडित जी की हंसी।

पंडित रामभरोसे ने जब उनके पुत्र के इलाज की यह कथा डाक्टर राम-

बाबू सक्सेना को सुनाई, तो वे भी खूब हंसे। विजय की रिपोर्ट थी कि उसकी चोट पूरी तरह ठीक हो गई। लेकिन उसका आग्रह था कि चोट के ठीक होने में मुक्के से अधिक हाथ हंडू की पीठ पर सवारी और बर्फी का है।

एक दिन हंडू, विजय, जोगी, गंगादेई और राजा पहाड़ी के नीचे एक पट्टी पर बैठे बैठे गिट्टियां निगलने का खेल खेल रहे थे। सबसे पहले गंगा-देई एक गिट्टी उठाती, सबको दिखाती और उसे मुंह में रख कर सफाई से गटक जाती। फिर बाकी बच्चे कोशिश करते, लेकिन गंगादेई इस खेल में सबकी लीडर साबित हुई।

बच्चों ने तय किया कि गंगादेई बड़ी है, इसलिये वह गिट्टी निगल लेती है। दूसरा नम्बर हंडू का था और हंडू भी राजा और विजय से बड़ा था। जोगी, राजा और विजय सिर्फ एक एक गिट्टी निगल पाये थे। राजा ने अपनी गिट्टी निगली नहीं थी, मुंह में छिपा ली थी।

गंगादेई इस बात पर नाराज हुई, उसने सचमुच पाँच गिट्टियां निगली थीं। उसका तर्क था अगर पेट में दर्द हो गया तो? यों गिट्टी निगलने का खेल उसी की सूझ थी और खेल में वह जीत भी गई थी।

पेट में दर्द न हो, इसलिए चूरन बनाकर खाने का निश्चय हुआ। जोगी अपने घर से अमचूर और नमक मिर्चा लाया, राजा ने थोड़ी चीनी घर से ली और जैसे ही चूरन तैयार हुआ, बच्चों के पास हवा में उड़ता हुआ एक छप्पर आकर गिरा।

"विजय, देख यह पटिया हिल रही है।" चूरन खाते खाते सबने देखा, पत्थर की वह बड़ी-सी शिला जिस पर वे बैठे थे, हिल रही थी।

हंडू और गंगादेई ने छप्पर पहचाना, यह उन्हीं के घर का था। विजय और राजा को घर से नौकर बुलाने आ गये।

उस दिन भूकम्प आया था।

लुढ़कते हुए पत्थर पर काई नहीं जमती। राजा के बचपन के मित्र स्थाई नहीं रहे। उसके पिता का तबादिला हर साल होता और राजा को हर साल नई जगह और नये चेहरों से दो चार होना पड़ता। एक बार दूर

के किसी स्थान पर जाने से पहले राजा का परिवार बाबू मोहल्ले वाले घर में कुछ दिनों के लिए आकर रहा।

वहीं पर पता चला कुल्लो राजा बाबू को याद करते करते चली गई। कहाँ चली गई, यह बहुत दिन तक राजा को पता न चल पाया। उसे कुछ संदेह तो हुआ था कि कुल्लो मर गई है, लेकिन इस बात की पुष्टि न राजा के घरवालों ने की और न मौलाबख्श ने। सब यही कहते थे कि कुल्लो चली गई हैं। कहाँ गई, यह रहस्य न बड़ों को ज्ञात था और न वे राजा को समझा सके।

राजा को कुल्लो के न रहने पर पता चला कि कपड़े धुलवाने का काम अब कोई बढ़िया काम नहीं रहा। मौलाबख्श राजा से अब भी बात करता, मगर उन बूढ़ी बातों में रस न था।

4

लाला छदामी लाल पुण्यात्मा प्राणी थे। पाप उनसे जो भी हुए हों, किसी ने नहीं देखा। किन्तु उनके पुण्य उजागर हैं।

मुरली मनोहर के मंदिर का चौक उखड़ने लगा था। लाला छदामी लाल से यह नहीं देखा गया। उन्होंने अपनी स्वर्गवासी माता श्रीमती चम्पोदेई की स्मृति में मंदिर का फर्श पक्का संगमरमर का करवा दिया। आज मंदिर में घुसते ही लाला जिस पत्थर पर पहले पहल माथा टेकते हैं वह पत्थर चम्पोदेई के नाम का है।

छदामी लाल जब पूजन करके सफेद बुर्राक धोती और रामनामी दुपट्टे में निकलते हैं, तो उन्हें देखकर श्रद्धा होती है। और लाला भी अपना यह रूप लोगों को दिखाने के लिये सुबह चार बजे से साधना प्रारम्भ कर देते हैं।

सुबह की मालिश लाला अपनी ललाइन की देखरेख में धन्ना नाई की घरवाली के हाथ से करवाते हैं। पेमा एक बार ललाइन की मालिश कर रही थी। छदामी लाला को मालिश का स्टाइल या मालिश करने वाली यह दोनों

ही पसंद आ गये। और ललाइन की उपस्थिति की दुहाई देकर पेमा को लाला की मालिश के लिये भी तैयार कर लिया गया।

• चमेली के तेल की मालिश के बाद लाला आधा घण्टा स्नान में और बीस पच्चीस मिनिट स्नानोत्तर शृंगार में लगाते हैं। शृंगार के लिये सबसे कठिन विषय उनकी चोटी है। उनके मुखमण्डल का क्षेत्र निरन्तर विकास पर है, जो उनकी चोटी के इर्द गिर्द समाप्त होता है। चांद से गुद्दी तक जो बाल बचे हुए हैं, उन्हें सहेज सँवार कर और बढ़ा कर चोटी का रूप दे दिया जाता है।

चंदन छापों के स्थान भी नियत हैं। चंदन, केशर चंदन और रोली से अंग प्रत्यंग पर तिरंगा मेक अप होते ही लाला खड़ाऊं चटकाते हुए मुरली मनोहर को दर्शन देने चल पड़ते हैं, ठाकुर की मूर्ति भी छदामी लाला ने ही खरीद कर यहां लगवाई थी।

कीर्तन या आरती के समय छदामी लाला इतने विभोर हो उठते हैं कि उन्हें कोरस के साथ गाने की सुध नहीं रहती। विधाता ने जब उनके गले में आवाज की मशीनरी लगाई थी, तो उसने उसमें संगीत का कोई प्रावधान नहीं किया था। किन्तु इनके इस विसंगत संगीत पर किसी को हंसने टोकने का अधिकार न था। केवल छोटे बच्चे आयु के अनुपात से हंस या रो सकते थे या कभी कोई निपट अपरिचित हँसने को भूल कर बैठता था।

निस्संदेह आरती कीर्तन के उपरान्त छदामी लाला में भक्ति और पुण्य का ज्वार आता। वे बंदरों को चने और भिखारियों को पाई देने का पुण्य अर्जित करने के बाद ही अन्न ग्रहण करते थे। तब तक उनका काम पिश्ते-बादाम की दूध में छनी ठंडाई से ही चलता था।

अगर मंदिर में, या लौटते समय उनके अबला सदन से कोई बुलावा आ जाता, तो लाला भूख प्यास भूल कर पहले वहीं जाते। उनका यह आश्रम बालविधवाओं के लिये था, किन्तु उसमें उपयुक्त आयु की अ-विधवा भी प्रवेश पा सके, इसलिये आश्रम का नाम 'अबला सदन' रखा गया।

अबला सदन में लाला को बाबूजी के नाम से सम्बोधित किया जाता था। यह सम्बोधन इतना लोकतांत्रिक था कि छोटे से लेकर बड़े तक के लिए समान

उपयोग के योग्य पाया गया। वावू जी जब आश्रम में आते, तो आश्रम वासिनियाँ उन्हें माला पहनातीं, मसनद पर बिठातीं, और गीत संगीत से उनका स्वागत करतीं।

यदि आश्रम में कोई नई 'अबला' आती, तो स्वागत-गीत गाने का श्रेय उसे ही मिलता। आश्रम में लाला को बुलाने का अवसर प्रायः तभी बनता था जब कोई नई भरती होती थी। ऐसे अवसरों पर लाला बड़ी उदारता से कार्य लेते थे और पूरे आश्रम वासियों को विशेष भोज के अतिरिक्त अच्छी खासी राशि भी भेंट करते।

यह भी एक विचित्र संयोग था कि इस आश्रम में कभी बारह से अधिक अबलाएं नहीं रहीं, या बारह से कम की कोई अबला भरती होने नहीं आयीं।

5

धन्ना लाला से उम्र में दस वर्ण छोटा और देखने में दस वर्ष बड़ा था। वह रोज सेठ जी की हजामत बनाने जाता था। मंगल, वृहस्पति और शनिवार को सेठ जी क्षौर कर्म नहीं कराते थे, इसलिये 'रोज' में ये तीन दिन शामिल नहीं थे।

धन्ना की घरवाली दो बेटियाँ छोड़कर मर चुकी थी। दोनों बेटियाँ ससुराल जा चुकी थीं। धन्ना का घर 'बिन घरनी भूत का डेरा' था।

उस दिन दाढ़ी बनाते बनाते धन्ना ने जिक्र छेड़ा, "मालिक, तीन साल पहले पेमा को आश्रम में लाये थे, याद है?"

"उस दिन की भी जब यह अनगढ़ छोकरी रोते रोते आश्रम में आयी थी, और आज दिन की भी जब वह बरसाती नदी की तरह उफनती फिर रही है", लाला ने रसिकता से कहा।

"मालिक, जब से श्यामली की मां मरी और श्यामली ससुराल गई, घर काटने को दौड़ता है।"

"तो, अब बुढ़ापे में फिर से घर बसाना है क्या ?" लाला ने पूछा।

"मालिक तो जानते हैं, बेटियों से कुल नहीं चलता। श्यामली की मां भी एक बेटे का मुंह देखने को तरसती चली गई।"

लाला छदामी लाल की दाढ़ी बन कर तैयार थी, मगर पेमा की बात वह कुछ और चलाना चाहते थे। इसलिये बगल के बाल कटवाने के लिये बनियान उठाते हुए बोले, "तेरे लिये पांची ठीक रहेगी।"

"मालिक, 'धन्ना ने कहा' पेमा से मैं बात पक्की कर चुका हूं। बस, आपकी आज्ञा की देर है। पांची मुझ बूढ़े के वश में नहीं आयेगी।"

"लेकिन पांची के पर निकल रहे हैं," लाला ने चिंतित स्वर में कहा।

"तू अगर न पकड़ कर लाता, तो उस दिन वह नजर बचा कर भाग ही ली थी।"

"मालिक, पेमा आपकी दयालुता की बड़ी तारीफ कर रही थी। आपने जो साड़ी उसे दी है, उसे पाकर वह फूली नहीं समाती।"

"अच्छा, पेमा ही सही, लाला ने बगल के बाल साफ कराते हुए कहा, पर पांची का भी तिया पांचा कर देना है।"

"आप कहें, तो सेठ भिक्खीमल से......"

"नहीं, भाई। बिरादरी का मामला है। फिर अपना भेद भी तो उन्हें देना पड़ेगा। अभी तो आश्रम की तरफ किसी की निगाह नहीं गई है।"

"अखबार में फोटू तो छपी है। आश्रम से तो आपका नाम चमका है, मालिक।"

लाला छदामी लाल ने पेमा के साथ धन्ना को घर बसाने की अनुमति दे दी। किन्तु पेमा की मरजी जानने के लिये पहले उसे अपने घर ललाइन की सेवा में तैनात किया गया।

लाला छदामी लाल जानते थे, धन्ना इस समय मक्खन लगा रहा है, किन्तु धन्ना काम का आदमी है।

6

अबला सदन का चित्र जयदेव के साप्ताहिक पत्र 'बात का धनी' में छपा था। चित्र छापने और उस पर फीचर लिखने के लिए जयदेव ने लाला से ढाई सौ रुपये लिये थे। कुल्लो का चहेता राजा पढ़ाई लिखाई के बाद अब जयदेव मिश्र के रूप में जाना जाता था। यों नगर में पढ़े लिखे लोगों की कमी नहीं है, किन्तु जयदेव का दो वर्ष का अज्ञात वास उसे एक रहस्यमयी गरिमा से मंडित किये हुए था। फिर जयदेव ने नौकरी के लिये हाथ पैर न फेंककर सीधे ही अखबार निकालना शुरू किया, तो जयदेव की विशिष्टता में और वृद्धि हुई।

उस दिन जब बाबूजी अबला सदन में प्रविष्ट हुए, तो पांची मौका ताड़ कर गेट से बाहर हो गई। पीली साड़ी आश्रम की कन्याओं की पहचान थी। एक पीली साड़ी वाली कन्या को आश्रम से भागते देखकर जयदेव उसके सामने आ गया।

"रुको।"

पांची रुक गई। उसके मुख पर भय न था, बेसब्री थी। बोली "जाने दो मुझे।"

"क्यों?" जयदेव ने पूछा। "तुम अबला सदन में रहती हो?"

"देखो, मैं अबला सदन के बाहर हूं। अब इसी मिनट से मैंने अबला सदन छोड़ दिया है।"

'इसी मिनट' सुनकर जयदेव चौंका। पूछा, "ऐसी क्या बात हुई?"

पांची ने अपना असंतोष तो व्यक्त किया, किन्तु बात नहीं बताई। वह यही कहती रही कि आश्रम नहीं लौटेगी और जो आश्रम में रहकर उसे करना पड़ता है, वही करना हो तो वह "खुले आम शहर की छाती पर मूंग दलेगी।"

जयदेव और कुछ जान पाता, इससे पहले आश्रम में पांची के खोने का शोर हुआ और धन्ना नाई ने पांची और जयदेव को देख लिया।

लाला छदामी लाल और धन्ना जब जयदेव और पांची के पास पहुंचे, तब तक लाला पुनः धर्मावतार रूप धारण कर चुके थे। आते ही उन्होंने घोषणा की कि वे आश्रम की कन्याओं की मांग पूरी कर रहे हैं और उन्होंने बीस रुपये पांची के हाथ पर रख दिये।

"आश्रम की कन्यायें बीस रुपया मासिक हाथ खर्च की मांग कर रही थीं, और पांची ने कठोर कदम उठाकर हमें यह मांग पूरी करने पर विवश कर दिया है।"

पकड़ी गई पांची बीस रुपये लेकर धन्ना के साथ आश्रम लौट गई और लाला ने जयदेव को आश्रम की स्थापना, उसके उद्देश्य एवं प्रवृत्तियों और अब तक की प्रगति की जानकारी दी।

जयदेव ने जब यह बताना चाहा कि 'बात का धनी' पत्र केवल छाती के जोर से चलता है, तो लाला उड़ती चिड़िया पहचान गये और 'बात का धनी' के एक अंक के प्रकाशन का व्यय भार उन्होंने खुद उठाने का जिम्मा ले लिया।

'बात का धनी' के पास धन और बात दोनों का अभाव था। हमारे यहाँ न्याय शास्त्र की तुलना उस साधु से की गई है, जो भगवद् भक्ति के लिये वैराग्य लेता है, किन्तु भिक्षा मांगते मांगते जिसे भक्ति के लिये समय ही नहीं निकल पाता। न्याय इस बात का करना था कि ईश्वर है या नहीं, किन्तु वह अपने प्रमाण शास्त्र में ऐसा उलझा कि यह न्याय हुआ ही नहीं।

जयदेव इसे स्वीकार न करे, किन्तु पत्र निकालते समय जयदेव ने उसके माध्यम से धनी बनने का स्वप्न भी देखा था। पत्र के कुछ अंक चन्दे से निकले और जयदेव को पता चला कि अखबार में रुपया बोलने लगता है। जिन लोगों के बारे में यह संदेह भी नहीं हो सकता था कि वे कभी कुछ लिखना बोलना चाहेंगे, वे सौ रुपये के नोट के माध्यम से बोलना चाहने लगें।

मदन गोपाल बस आपरेटर 'बात का धनी' के माध्यम से सड़क परिवहन के राष्ट्रीयकरण के विरोध में और परिवहन के सरकारी दफ्तरों की कार्य-प्रणाली के दोषों के विषय में बहुत कुछ कहना चाहता था।

हरिमोहन वकील सौ की जगह दो सौ रुपया देकर उन मुवक्किलों की पोल खोलना चाहता था, जिन्होंने स्याह का सफेद करने में उसकी कानूनी मदद ली थी। वकील साहब चाहते थे, इस तरह पत्र का काम भी चलता रहे और मुवक्किलों को कानूनी मदद की खातिर दुबारा उनके पास आना पड़े।

लालू खाँ ठेकेदार के दामाद चाँद खाँ 'पीयूष' साहित्यिक व्यक्ति थे। खान ब्रदर्स में बीस पच्चीस खान बंधुओं का हिस्सा था, जो अलग अलग कारोबार करते थे, किन्तु मूल कम्पनी 'खान ब्रदर्स' की शाखाओं के रूप में। सी० के० पीयूष की 'खान ब्रदर्स' में दो पैसे की पत्ती थी और उसका काम नकदी का लेन देन और तिजोरी की चाभी व बैंक की पासबुकों की हिफाजत का था।

पीयूष ने 'बात का धनी' के बीच के दो पृष्ठ साहित्य चर्चा के लिए रिजर्व करा लिये, क्योंकि 'बात का धनी' का रिजर्व बैंक स्वयं पीयूष था। इस डबल पेज को सृजन-धर्म स्थाई स्तम्भ बना दिया गया और इसमें कविताओं के साथ साहित्य और साहित्यकारों की चर्चा होती। 'पीयूष का पन्ना' पत्र का एक नियमित फीचर बन गया। पीयूष का कहना था इससे प्रदेश का साहित्यिक व्यक्तित्व बनेगा। लोगों का कहना था, इससे पीयूष का साहित्यिक व्यक्तित्व बन रहा है।

प्रोफेसर रामचरण विद्रोही श्रमजीवी राजनीतिज्ञ थे। उनको घर से निकालना और घर के बाहर उनके समय का उपयोग कराना जनता का काम था। घर से निकालने का अर्थ, विद्रोही जी के संदर्भ में, उन्हें बिना चाय नाश्ता किये ही काम में जोत देना और उनके घर पर श्रद्धा अथवा आवश्यकतानुसार वित्तीय व्यवस्था करना था। यों प्रोफेसर विद्रोही घर से न निकलें तो घर बैठे गृहस्थी का खर्च निकालने का कोई मंत्र उनके पास न था। किन्तु वे सेवाभावी थे और सेवा की ताली एक हाथ से नहीं बजती। कुछ ऐसा समझ लीजिये कि वे जनता की सेवा करते थे और जनता उनकी।

प्रोफेसर रामचरण विद्रोही को दिन का भोजन या सुबह का नाश्ता घर पर किये हुए बरसों बीत गये थे। वे घर के नहीं बाहर के जीव थे, राजनीति के। प्रोफेसर साहब ने प्रति सप्ताह पहला पृष्ठ लिखने और दस वार्षिक ग्राहक देने का जिम्मा अपने ऊपर ले लिया।

और भी कई लोग थे जो छोटी छोटी 'खबरें' देकर अखबार की थोड़ी बहुत सेवा करना चाहते थे। कुछ लोगों के पास संस्थायें थीं। कुछ लोग बात बात पर वक्तव्य देना चाहते थे, कुछ किसी अधिकारी विशेष की मनमानी से परेशान पत्र में अपनी भंड़ास निकालना चाहते थे। गरज यह कि कोई यह नहीं चाहता कि सम्पादक की कलम भी चले।

जयदेव को इसलिये बचा खुचा काम करना पड़ता था। मदन गोपाल की उल्टी सीधी हिन्दी, हरिमोहन की अगले अंक में भंडा-फोड़ों की धमकियां, विद्रोही जी की राजनीतिक अटकलवाजी आदि के पांच छह पृष्ठ जयदेव को दुबारा लिखने पड़ते और न कुछ को सब कुछ बनाने में अपनी भाषा और सम्पादन की समूची कलायें खर्च करनी पड़तीं। पीयूष के दो पृष्ठ सधे हुए और सही आते थे। पीयूष का पन्ना कभी कभी साहित्य जगत में छोटा मोटा विस्फोट कर जाता था। किन्तु वह सारी ऊहापोह साहित्यिक होती थी। यह स्वाभाविक था कि पीयूष के पन्ने में पीयूष की बात ही सर्वोपरि हो। जिन साहित्यिक दिग्गजों की चर्चा होती थी, यह पन्ना उनका नहीं था।

और सम्पादन और मुद्रण के इन झंझटों से भी बड़ा झंझट था, प्रति सप्ताह ढाई सौ रुपये एकत्र करना, ताकि दो रीम कागज और दो फर्मों की छपाई, डाक-व्यय आदि की व्यवस्था हो सके। जयदेव की अपनी व्यवस्था पत्र की व्यवस्था के समक्ष गौण हो गई थी।

'बात का धनी' अब तक सत्रह अंक पुराना हो चुका था। विद्रोही ने पच्चीस तीस ग्राहक बनाकर अब तक केवल एक अंक का खर्चा दिया था। तीन अंक हरिमोहन वकील और तीन मदन गोपाल बसवाला के खर्च से निकले। छह अंकों का खर्च पीयूष ने उठाया था और अब तक केवल 'परांठा पिटाई कांड' के अभियुक्त ने जयदेव की चुप्पी पन्द्रह सौ रुपये में खरीदी थी।

इन पांच महीनों में लगभग सवा चार हजार रुपया अखवार के हिस्से में और सात-आठ सौ रुपया जयदेव के हिस्से में आया था।

इसलिये जब लाला छदामी लाल ने जयदेव को दो फोटो और एक कालम मैटर छापने के ढाई सौ रुपये देने की बात कही तो जयदेव की पांची के प्रति जागी हुई उत्सुकता सो गई।

7

पांची क्यों भागी ?

अभी वह अपनी कोठरी में बैठी आँसू बहा रही है। नहीं, आँसू अपने आप बहे हैं, उसने नहीं बहाये।

पांची का बचपन लात घूंसों और गालियों से भरा था। उसकी बहनें उसे मारती थीं, उसकी माँ उसे कोसती थी और बाप हमेशा हड्डी तोड़ने पर उतारू रहता था।

बंसी को शिकायत थी कि रामकली जब जनती है लड़की जनती है। क्या वह एक लड़का नहीं दे सकती ? जब वह रामकली को लाया था, उसके यहां पाँच भैंसें थीं। लेकिन रामकली और उसके बाप परभाती ने मिल कर उसे तबाह कर दिया।

बंसी को तबाह करने में रामकली का दोष केवल इतना ही था कि वह हर दूसरे साल एक लड़की को जन्म देती रही।

परभाती अपनी लड़की से मिलने आता, तो घर की खींची कच्ची शराब की दो चार बोतलें भी साथ लाता। हाथ आ जाते, तो एकाध तीतर और खरगोश भी पकड़ लाता।

शहर में मीट की प्लेट कभी खास मौके पर ही नसीब होती थी। घर में बनाओ, तो दस पांच की एक ही पतीली चढ़ जाये। इसलिये तीतर, खरगोश और शराब देने वाला ससुर पाकर बंसी शुरू में बड़ा प्रसन्न था।

पहली बार बोतल खुली तो परभाती को बंसी को शराब पिलाने की ट्रेनिंग देनी पड़ी।

"बता, यह राजा महाराजा शराब क्यों पीते थे ?" परभाती ने सवाल किया।

"वे राजा महाराजा थे। हम उनकी होड़ थोड़े ही कर सकते हैं।"

"नारायण सिंह को जानता है न ?"

"जो फौज में है ? बड़नगर के नाथूसिंह का बेटा।"

"हाँ, वही।" वह तो राजा महाराजा नहीं है। फिर सरकार उसे अंग्रेजी की बोतल क्यों देती है ?

नारायण सिंह अपने गांव बड़नगर या शहर की तरफ छुट्टियों पर आता, तो रम की बोतलें लाता था। यह बंसी जानता था। पर सरकार उसे दारू की बोतल क्यों देती है, इस बारे में वह ज्ञान अथवा चिन्तन से नितान्त शून्य था। अपनी यह अज्ञानता बंसी को प्रकट करनी पड़ी।

और ऐसे प्रश्नों और दृष्टान्तों से बंसी की जिज्ञासा जागृत करने के बाद परभाती ने उसे ज्ञान दिया कि शराब से मनुष्य में हाथी के समान बल आ जाता है, वह मर्द बन जाता है। इसीलिए फौजियों को शराब पिला कर लड़ाई पर भेजा जाता है। लड़ाई में हाथी-घोड़ों को भी शराब पिलाई जाती है।

और शराब से बंसी का परिचय इस तरह रामकली के साथ ही हुआ, जो सिर्फ लड़की जनना ही जानती है।

अब बंसी के घर में पांच भैंसों की जगह पांच बेटियाँ बचीं। दो भैंसें परभाती के यहाँ चरने छोड़ी, तो वापस नहीं लौटीं। बंसी भैंस का तकाजा करता, परभाती मरते दम तक ब्याज में उसे दारू की बोतलें पहुंचाता रहा। मगर मूल की वापसी नहीं हो पाई। दो भैंसें मर गईं, और एक कर्जे में चुक गई।

पांची साल भर की थी, तब से बंसी ने रिक्शा चलाना शुरू किया। मजदूरी से कमाये हुए पहले चार रुपये रिक्शा मालिक के होते, जो दिन मे डेढ़ बजे सुभाष चौक पर मालिक को खुद पहुंचाने जाना जरूरी था। दिन में चार बजे तक की कमाई के तीन रुपये, जो बीड़ी, चाय और कलेवा के बाद बचाने होते थे, रामकली के पास पहुंचते और उसके बाद बंसी आजाद हो जाता

था। शाम की मजदूरी शराब खाने के आस पास शराब और शराबियों के लिये होती।

बंसो रात में रोज घर पर कैसे आ पहुंचता था, आश्चर्य है। रिक्शे से उतर कर अपनी खाट तक पहुंचने में बंसी को चार पांच बार झूमते हुए गिरना पड़ता था। गिरते ही बंसो के मुंह से गालियाँ शुरू हो जातीं, जिन्हें बंद करने के लिये जल्दी से जल्दी बंसो को रोटी खिलाकर सुला देना होता था।

दो साल में बंसो के अंजर पंजर ढीले हो गये। उसके साथी रिक्शे वाले रोज मलाई खाते और दूध पीते। चाय के होटलों पर इनकी मलाई की प्लेटें रिजर्व होती थीं। बंसी तब चाय पीकर बीड़ी फूंकता और अपने साथियों को रईशों का मजाक बनाता। लेकिन सुबह नौ बजे से रात तक की सूखी खिंचाई से शरीर के जर्जर होने पर बंसो को रिक्शा चलाने के लिये 'पेट्रोल' यानी पाव भर शराब की जरूरत महसूस होने लगी।

और रामकली और उसकी छह बेटियों के लिये मिलने वाले तीन रुपये एक नियमित दैनिक क्रम न रहकर आकाशवृत्ति बन गये। कभी बंसी चार बजे ही नशे में धुत्त घर पर आ धमकता। फिर उसका रिक्शा भी छिन गया।

एक दिन पांची पांच बार खेल कर घर में लौटी और उसने पांचों बार रोटी माँगी। पांच बरस की पांची आखिर रोते रोते सो गई। मां ने घर में आज दिन भर चूल्हा ठंडा ही रखा था, और ठंडी बासी सब जठराग्नियों में जल चुकी थीं।

पांची ने सपने में अपने नाना परभाती को देखा जो उसके जन्म के थोड़े ही दिन बाद मौत को गले लगा चुके थे। घर में नाना के आने और दावतों की चर्चा होती थी। सपने में पांची ने देखा, नाना आये हैं और जैसा मां कहती है, साथ में दो खरगोश और पांच तीतर लेकर आये हैं। उसने लहसुन छीले हैं और उसकी बहन लल्ली ने मसाला पीसा है।

नाना और बापू बाहर खाट पर बैठे दारू की गुटकें ले रहे हैं।

उसके बाद का सपना कुछ गड़बड़ा सा गया। पांची को लगता जैसे वह

चरके फरके मांस की बोटी तोड़कर मुंह में रखती है, और उसका हाथ मुंह तक नहीं पहुंचता। फिर सपने में उसने देखा कि बापू नशे में घुत्त घर में घुसा है और उसने मांस की पतीली घर के बाहर फेंक दी है। किन्तु पतीली में मांस की जगह दाल है। वह धरती से दाल बटोर कर खाना चाहती है कि सपने में बापू का एक जोरदार झापड़ पड़ता है।

पांची की आंख खुलती है। यह सपना नहीं था, रामकली बंसी को रोटी खिला रही थी। छोटी सी पांची का मन अपनी मां से एकदम विरक्त हो गया, जो उसे भूखा सुलाकर बापू को चोरी से रोटी खिलाती है। रामकली उसे सुलाकर पड़ोस के घर में काम करने गई थी और जरूर वह नेताजी के घर से रोटी लेकर आई होगी। उसने मन ही मन लात, घूंसों, गालियों और भूख के इस कलह भरे घर को त्यागने का निश्चय किया, और इस बार सुबह तक के लिये सो गई।

दूसरे दिन सुबह पांच बरस की पांची घर छोड़कर चली गई।

उसे भरपेट रोटी मिल गई। सड़क पर एक साइकिल खड़ी थी, जिसके पीछे टिफिन कैरियर था। पांची की पांचों ज्ञानेन्द्रियाँ टिफिन में गरम खाना होने की सूचना दे रही थीं, और आस पास मैदान साफ था। पांची ने हिम्मत की और टिफिन बाक्स लेकर गलियों गलियों भाग कर गांधी पार्क की गंगाजमनी में जा पहुंची जहाँ बैठकर उसने छककर खाया, पानी पिया और टिफिन को वहीं एक झाड़ी के पीछे रख दिया।

पांची उस समय पहली बार अपने पांव पर खड़ी हुई, जब उसने अपने बाल मन से इस समस्या पर गंभीर विचार किया कि टिफिन बाक्स का अब क्या उपयोग किया जाय।

पांची ने उसका नाम नहीं पूछा, लेकिन उस लड़के ने उसकी यह समस्या

सुलझा कर उसके दिन भर बिताने, रात के खाने और सोने तक की व्यवस्था अपने ऊपर ले लो। लड़के के पास एक चवन्नी थी, जिसके एवज में वह किराये की साइकिल लाया। साइकिल पर टिफिन बाक्स रख कर लड़का इस तरह रवाना हुआ, जैसे किसी दफ्तर में साहब का लंच बाक्स लेकर जा रहा है। आधा पौन घंटा बाद लड़का वापस आ गया। उसके पास न साइकिल थी, न टिफिन बाक्स।

उसके पास रुपये थे। कितने थे, पांची की समझ से बाहर की बात है। उन दोनों ने तरह तरह की चीजें खाईं, दिन भर फुटपाथ पर लगने वाले जादू के खेल तमाशे देखे और रात को एक एक ठेले पर सो गये।

नगर की पिछली जनगणना में बब्बन की गणना शायद ही हुई हो। अभी तक पांची अपने घर लौट सकती थी, किन्तु बब्बन का घर पूरा शहर था। बब्बन बारह वर्ष की उम्र में यह पता रखता था कि रात बिताने का निरापद स्थान कौन सा है।

बब्बन को नींद चुराने की आदत हो गई थी। वह जानता था कि रात के इस समय अगर खतरा नहीं है, तो सुबह उजाला होने तक खतरे के लौटने की संभावना नहीं है। वह बब्बन है, इसके अतिरिक्त अपने बारे में उसे कुछ याद नहीं था। वह बब्बन है, और दुनिया के इस बीहड़ वन में उसे किसी तरह राह खोजने हैं।

अभी कल के पैसे बचे थे, इसलिए बब्बन और पांची ने चाय में भिगोकर टोस्ट खाये और एक दूसरे के नाम से परिचय पाये।

चार आने हाथ में देकर बब्बन ने पांची को अपने रास्ते जाने को कहा क्योंकि वह काम पर जायेगा और उसका काम दूसरी तरह का है।

"मगर शाम को तो मिलना पड़ेगा। मैं कहाँ मारी-मारी फिरूंगी ?"

"अच्छा बाबा शाम को गांधी पार्क में गंगाजमनी के पास मिलना," कह कर बब्बन ने अपनी राह नापी।

अब पहली बार पांची को अकेलापन खला। उसे लल्ली, निम्मो, संतो और विमली को भी याद आई जो उसे मारती रहती थीं। मगर घर की बंदिशों के मुकाबिले उसे यह आजादी पसंद आई और उसने घर की ओर रुख नहीं किया।

उसके हाथ में रखी चवन्नी उसे बोझ महसूस हुई और उसने चार आने के चने लेकर चबाना शुरू कर दिया और निरुद्देश्य सड़कों पर भटकने लगी।

एक गली में उसकी उम्र के बच्चे खेल रहे थे। वह उनका खेल देखती रही। थोड़ी देर बाद वह भी खेल में शामिल हो गई। उसने खेलना शुरू ही किया था कि उसके कान में बंसी की आवाज सुनाई पड़ी, 'कहाँ मर गई थी तू ?'

और पांची फिर से घर की गिरफ्त में आ गई।

लेकिन घर किसी की गिरफ्त में न रह सका। बंसी का रिक्शा छूट गया, पर प्याला नही छूटा। तब बंसी ने घर गिरवी रखकर उस पर कर्ज लेकर खाया।

इस बीच पांची दो बार और भागी, और एक बार खुद व एक बार बब्बन के साथ वापस घर लौट आई।

बंसी के खाट पकड़ने पर कर्जा और बढ़ा किन्तु बंसी इस कर्ज से मुक्त होकर परलोक वासी हो गया। रामकली अपनी लड़कियों को लेकर बाप के घर चली गई और पांची फिर दुनिया के झमेले में भटकने के लिये अकेली रह गई।

पांची अब एकदम अबोध बालिका नहीं रही थी। बब्बन के काम के बारे में न केवल वह जान गई थी, बल्कि कई वार उसमें सहयोग भी कर चुकी थी।

आपके लिये यह कुछ भी हो, इन दोनों के लिये वह काम ही था।

पांची और बब्बन किसी रिहाइशी बस्ती में जाते, जहाँ मकान आमतौर पर एक मंजिले होते और घर के पिछवाड़े आहाता होता। इन बंगलों में मेन गेट के अलावा एकाध छोटा पीछे का या बगल का रास्ता भी होता। दोपहर के वक्त रसोई वगैरह के काम से छुट्टी पाकर, कपड़े पिछवाड़े के लान में सुखाकर गृहणियाँ जब पड़ोसिनों से गपशप करती होतीं, तव मौका देख कर ये लोग दो चार कपड़े, या वरतन वगैरह उठाकर चल देते।

यह चोरी होगी, पर चोर कौन नहीं है? हम लोग प्रकृति के भंडार से चोरी करते हैं। हमने किससे पूछ कर खानों में से सोना निकाला और सागर से मोती? यों देखा जाये, तो एक एक सांस जो हम लेते हैं, वायु की चोरी है।

बब्बन अपने मां बाप को नहीं जानता। पांची धीरे धीरे उन्हें भूल रही है। अब ऐसे बच्चे जिनके कोई मां बाप नहीं है, पूरी बस्ती के ही माने जाने चाहिये। उनके पास निजी कुछ नहीं है, लेकिन जो दुनिया में है उसमें उनका हिस्सा भी तो होगा। यह हिस्सा उन्हें प्यार से, दुलार से कोई नहीं देता, तो जैसे बने, वे उसे लेते हैं। आप कानून से पकड़ कर इन्हें सजा देंगे, तो न ये वकील करना चाहेंगे, न अपील और आपकी सजा को भी मान लेंगे।

यों बब्बन सिलाई का काम सीखता है। ए० आर० टेलर्स के मास्टर अबुल रशीद उसके उस्ताद हैं। मगर वे उस्ताद हैं और जो काम बब्बन से कराते हैं, उसका पैसा इसलिये नहीं देते कि वे हुनर सिखाने की कोई फीस भी नहीं लेते। वह भी किसी दिन इस योग्य बन जायेगा कि इस कुत्ताघसीटी के जीवन से उसे त्राण मिले।

पांची ने भी एक निजी काम सीख लिया है। गांधी पार्क का एक हिस्सा केवल जोड़ों के लिये है। इधर-उधर हरियाली के बीच से होती हुई बलखाती

सड़क वापस थोड़ी दूर पार्क के मुख्य मार्ग से मिल जाती है। इस मार्ग पर कभी कभी एकान्त चाहने वाले नवदम्पति या प्रेमी जोड़े एक दूसरे की कमर में हाथ डाले घूमते हुए देखे जाते हैं।

पांची इन जोड़ों में से एक नजर में वह जोड़ा पहचान सकती है, जो दो रुपये के एवज में पूर्ण, निर्विघ्न एकांत चाहता है। पांची इन्हें चौकीदारी की सेवा देती है। इस चौकीदारी में उसने बहुत निकट से जाकर वे सभी क्रियायें देखी हैं जो सृष्टि की सबसे प्राचीन क्रियायें होते हुये भी परम गोपनीय हैं।

एक बार पांची को न जाने क्या सूझा, वह रतिक्रिया में लीन जोड़े के सामने आ धमकी।

"बाबूजी, जल्दी करो, और मेरे दो रुपये दे दो।"

इस आकस्मिक व्याघात से नीचे पड़ी प्रेमिका ऐसी बौखलाई कि उसने अपना मुँह ढँक लिया।

8

बब्बन भाग गया था और पांची के पास चोरी के दो ब्लाउज बरामद हुए थे। किसी राहगीर ने पांची को पकड़ा था और पांच सात महिलायें मिलकर पांची की मरम्मत कर रही थीं।

तभी तमाशाबीनों में धन्ना नाई आ धमका। उसने पांची को आंख का इशारा किया और बेटी रम्मो कह कर उसे पुकारा। बेटी रम्मो के लिये यह डूबते को तिनके का सहारा था, वह आकर धन्ना के पैरों से लिपट गई।

"बता, वह कहाँ भाग गया, तेरा खसम.....अजी, एक छोरा और था इसके साथ....नहीं बताती तो ले....."

बस, वह छोरा ही सारे दोष का भागी बना और बेटी रम्मो को धन्ना ने हाथ पैर जोड़कर छुड़ा लिया। तब से पांची अबला सदन की सदस्या है।

यह सही है कि पांची के अबला सदन में आने से पहले ही पर निकल चुके

थे, किन्तु बचें खुचे परों को पूरा निकालने का प्रयास अबला सदन में भी जारी था।

अबला सदन में आकर पांची को धन्ना की हैसियत के बारे में पता चल गया। इसलिये धन्ना को उसने कोई लिफ्ट नहीं दी। बाबूजी अपनी मुक्तहस्त उदारता के कारण कभी कुछ पा जाते थे और पांची उन्हें जो भी देती, उसकी भरपूर कीमत वसूल करती।

बब्बन, जिसका कोई न था, अब अकेला नहीं था। उसे पांची अपनी कोई लगती थी। जब तक दोनों साथ रहे, कई बार झगड़े। मगर जब से पांची अबला सदन में पकड़ कर आई है, बब्बन ने स्वयं को कुसूरवार महसूस किया है। उसने वह काम भी छोड़ दिया है, जिसके कारण पांची पकड़ी गई। अब वह कटिंग और सिलाई दोनों में होशियार हो गया है और अरोड़ा टेलर्स में काम करता है।

अबला सदन बब्बन की दृष्टि में एक जेल है। लाला छदामी लाल उसकी नजर में शैतान है। धन्ना नाई, इस शहर का सबसे बड़ा गुंडा है।

क्योंकि इन लोगों ने पांची को उससे छीन कर उसकी सारी दुनिया इस आहाते में बन्द कर दी है। बब्बन महसूस करने लगा था कि उसकी भी दुनिया बन रही है। इतनो सारी भीड़ और शोर शराबे के बीच एक चेहरा पहचाना सा है, एक आवाज सिर्फ उसके लिये है। दुनिया में कुछ अच्छा लगने लायक है, जिन्दगी का कोई मतलब है। उसके पास पांची नहीं रहो तो अब कुछ नहीं रहा है, और जो रहा है, उसके इंतजार के सिवा कुछ भी नहीं है।

अपनी अनाथ अवस्था बब्बन को पहली बार खली। जैसे दुनियां में होते हैं, उसके मां बाप, भाई बहिन क्यों नहीं हैं ? पांची के मां-बाप थे, वे आज भी होते तो जैसे भी थे इस वक्त काम आते। एक वह है, तो उसकी हैसियत क्या है ?

हैसियत एक ऐसी चीज है, जो होनी चाहिये। यदि वह है, तो लाला छदामी लाल पुण्यात्मा और धर्मात्मा बने रहेंगे। बंसी के पास हैसियत होती, तो पांची क्यों खूँटा तुड़ाती ? उसके पास हैसियत हो तो वह आज ही धूम-धाम से बाजे गाजे के साथ जाये और पांची से शादी कर लाये। धन्ना ने कहा था कि आश्रम को इक्कीस सौ एक रुपये का गुप्त दान देकर, वह पांची के साथ विवाह कर सकता है।

बब्बन के लिये हैसियत का मतलब था बहुत सा रुपया, कुछ साथी, दोस्त, चाहने वाले और एक छोटा सा घर।

और बब्बन की हैसियत बनाने के लिये पांची बाबूजी को जितना दुह सकती थी, दुह रही थी।

9

'बात का धनी' के अंक में इस बार अबला सदन ने भी स्थान पाया था। पृष्ठ सात पर अबला सदन के दो चित्र थे—एक में दरवाजे पर 'अर्ध चन्द्राकार अबला सदन' पढ़ने में आता था, जिसकी पृष्ठ भूमि में सदन की इमारत लाला की पुरानी हवेली थी। दूसरे चित्र में अन्दर सदन की अबलायें 'बड़ी पापड़ उद्योग' के संचालन में लगी दिख रही थीं। चित्रों के नीचे मोटे टाइप में शीर्षक था :—नगर का अनूठा अबला सदन "अभागी महिलाओं द्वारा नई भाग्य रचना का प्रयास।"

"हमारे समाज में विधवा की व्यथा का क्या कहीं अंत है ? नगर की जनता की ओर से लाला छदामी लाल ने इस प्रश्न के समाधान के लिए अपना पुराना आवास गृह खाली करके उसे अबला सदन का रूप दे दिया है।"

सदन की आवासिनियों के रख रखाव और सदन के संचालन पर होने वाले व्यय की पूर्ति के लिए सेठ जी की ग्यारह फर्मों में से आय का एक प्रतिशत धर्मार्थ कोष में सुरक्षित रखा जाता है और सेठ जी समय समय पर

अतिरिक्त वित्तीय अनुदान भी सदन के लिए स्वीकृत करते रहते हैं।

"यहाँ बड़ी-पापड़ उद्योग, बुनाई, कशीदाकारी और सिलाई उद्योग, प्लास्टिक के थैले, पर्स आदि बनाने के कई उद्योग संचालित करके इन अबलाओं को सबला बनाने का अभिनव प्रयास किया जा रहा है।"

"सदन की आवासिनियों के सांस्कृतिक उत्कर्ष के लिए सदन में देवालय, संगीत भवन और रंगमंच भी हैं, जिनमें धार्मिक अथवा स्वस्थ अभिरुचि के मनोरंजन आयोजित होते रहते हैं।"

"सदन में इस समय बारह आवासिनियां हैं।"

जयदेव ने लाला छदामी लाल द्वारा दिये गये मुद्रित साहित्य में से सामग्री लेकर अपनी भाषा में यह विवरण तैयार किया था। मुद्रित पुस्तिका में लाला जी का नाम 'धर्मावतार', 'दानवीर' आदि विशेषणों के बिना कभी प्रयुक्त नहीं हुआ था और उसमें धार्मिक ग्रंथों के उद्धरण, जन्म जन्मान्तर तक चलने वाले नियति के चक्र और समाज में विधवाओं के करुण जीवन पर नाटकीय विलाप शैली में लेख दिये हुए थे। अंत में लालाजी द्वारा इन अबलाओं के उद्धार से अर्जित पुण्य और कीर्ति की विशालता और अनन्तता के गुणगान थे। और इस सातवें पृष्ठ के सहारे पत्र ने अपने जीवन के ६ माह पूरे करके इक्कीसवें अंक में प्रवेश किया।

'बात का धनी' के इस अंक को एक निरक्षर पाठक मिला, बब्बन। उसने यह अंक खरीदा और पत्र के सम्पादक से भेंट की।

"बाबूसाहब, इस अखबार में कोई बात छापनो हो तो बहुत पैसे लगते होंगे न?"

"हाँ और नहीं। यह इस पर निर्भर करता है कि बात कैसी है, क्या है। अगर बात ऐसी हो कि दुनिया को बताई जाय, तो बिना पैसे भी छपेगी। किसी एक आदमी या संस्था की बात छापने पर पैसे लगेंगे।"

"तो बाबूसाहब, अबला सदन के बारे में जो छापा है, उसके लिये तो आपने बहुत पैसे लिये होंगे।"

निरक्षर बब्बन ने किस सहज बुद्धि से यह बात पकड़ी, यह बात जयदेव को अभी समझनी थी। फिलहाल उसने मोर्चा लिया, "क्यों क्या अबला सदन चला कर सेठ जी समाज की जो सेवा कर रहे हैं, वह बात बिना पैसे नहीं बताई जा सकती ?"

"समाज की सेवा नहीं बाबूसाहब, लाला छदामी लाल ने अपने बुढ़ापे में ऐयाशी करने के लिए यह परिस्तान खोल रखा है।"

वह पीली साड़ी वाली लड़की क्या कह रही थी ? आश्रम में रहकर उसे क्या करना पड़ता है, वह क्यों भागी थी ? प्रोफेसर विद्रोही भी तो कोई ऐसा ही व्यंग कर रहे थे— क्यों, छदामी लाल ने तुम्हे अपनी किसी अबला की रिश्वत दे दी है क्या ? जयदेव ने इसे अपने कुंआरेपन पर वक्रोक्ति मात्र माना था। क्या इसमें और कोई गहराई भी है ? जयदेव का पत्रकार जगा और उसने दो बार चाय मँगा कर बब्बन और पांची के विषय में बहुत कुछ जान लिया।

उसने जान लिया कि अबला सदन जेल है और लाला छदामी लाल शैतान से किसी तरह कम नहीं है।

बब्बन गया तो जयदेव को सोचने का एक विषय दे गया—हैसियत। लाला की इतनी बड़ी हैसियत है कि वे अपने पाप को पुण्य बना कर 'बात का धनी' में छपवा सकते हैं। बब्बन की यह हैसियत नहीं कि वह अबला सदन से पांची को छुड़ा सके। और उसकी अपनी क्या हैसियत है ?

उसने भी तो 'बात का धनी' के माध्यम से समाज को कुछ कहना चाहा था। वह और लोगों को 'बात का धनी' पर सवारी नहीं गांठने देना चाहता था। लेकिन हुआ क्या ? हैसियत वाले लोगों ने उसे अपना माध्यम बना लिया। प्रवेशांक में सम्पादकीय स्तम्भ में लिखे अपने ही शब्द उसे आज मुँह चिढ़ा रहे थे— "यह पत्र केवल उनका ही नहीं होगा, जो इसे लिखते छापते

हैं, बल्कि उनका भी जो इसे पढ़ते हैं। हम चाहेंगे कि पत्र अपने पाठकों का अधिक हो और हमारा कम हो।"

कुछ ऐसा ही हो गया है। पत्र में जो आवाज है, वह पैसे की है, उसकी अपनी नहीं। प्रोफेसर विद्रोही अपने राजनीतिक पटाखे छोड़ते रहते हैं, वकील साहब इसलिये नाराज हैं कि जयदेव ने उनके दिये स्कैन्डलों को कैश नहीं किया। पीयूष अब अपने दो पेज का मैटर देने को तो तैयार है, मगर उसके यहाँ कैश में १५-२० हजार रुपये शार्ट पड़ गये हैं। पीयूष का कहा है कि उसका कुल इतना ही तो साल भर का हिस्सा बनता है। अगर शार्टेज उससे वसूल हुई तो उसे लेने के देने पड़ जायेंगे। मदनगोपाल का अखबारी भूत कुछ उतर गया है। इसलिये अब बात का धनी और उसकी किराये की कलम के धनी जयदेव की आज की हैसियत क्या है ?

अगले अंक के लिये पीयूष ने 'खान ब्रदर्स' के विभिन्न हिस्सेदारों को पत्र का वार्षिक ग्राहक बनाने का प्रोग्राम तय किया था। दस पन्द्रह वार्षिक ग्राहक बने तो डेढ़ सौ रुपये आयेंगे, बाकी का इन्तजाम विद्रोही के जिम्मे है। उधर कागज मंहगा हो गया है और मुश्किल से मिल रहा है। कुछ लोग न्यूज प्रिन्ट की जगह ह्वाइट प्रिन्ट पर अखबार छपा रहे हैं। प्रेस ने अल्टीमैटम दिया है कि दो दिन में अखबार नहीं छपाया गया, तो रोल लिस्टें आने के बाद अखबार नहीं छप सकेगा।

उधर हैसियत वाले छदामी लाला को अपना अबला सदन बुढ़ापे में ऐयाशी के लिए परिस्तान चलाने में भी कोई दिक्कत नहीं है। उनकी ग्यारह फर्में इसके लिये धर्मादा काटती हैं। वे बीस रुपये जो बब्बन अपनी बात सुनाने के एवज में जयदेव को देना चाहता था, शायद वही थे, जो हाथ खर्च के नाम पर उसके सामने लाला ने पांची के हाथ पर रखे थे। जो रुपया इस शहर के बाजार में चलता है, वह बिना एक दो बार छदामी लाला के हाथ में आये अपनी यात्रा पूरी नहीं कर सकता।

बब्बन को उसने क्या समझाया है ? यही न कि एक दिन वह शैतान की जेल से पांची को छुड़ा सकेगा ? कैसे ? अगर उसका प्यार सच्चा है तो।

जयदेव ने सिर्फ बब्बन को प्यार के कुएँ में धकेला है— वह शैतान की जेल में कैसे पहुंचेगा ? 'बात का धनी' अबला सदन की वकालत करता है, कर चुका है। क्या वह बब्बन और पांची की बात दुनिया को समझा सकता है ? अबला सदन ने पांची को एक सामाजिक अपराध, चोरी, करने से रोका है। अप्रत्यक्ष रूप से उसने बब्बन को भी इस अपराध से रोका है। घर से भाग कर बब्बन के साथ आवारागर्दी करने वाली लड़की की जगह अबला सदन में न होती, तो वह क्या करती ?

और बब्बन अब क्या चाहता है—एक मामूली सी बात। वह पांची को अपने साथ रखना चाहता है और शायद वे दोनों मिलकर दुनिया को कुछ और बच्चे दे जायें। अभी जो बच्चे दुनिया में हैं, उनके सामने क्या भविष्य है ? दुनिया के पास ही भविष्य के नाम पर क्या है ? अलग अलग राष्टों और विचारधाराओं में बँटी इस धरती ने देशों की सीमायें इधर से उधर कई बार खिसकाई है मगर ये सीमायें अभी हैं, और दुनिया के टुकड़े किये हुए हैं। राष्ट्र के नाम पर ही नहीं, समाज तो अभी और कई सीमाओं में बँटा हुआ है। इसीलिये बब्बन और पांची भी अलग हैं।

जयदेव ने सोचा, छदामी लाला ने अबला सदन खोलकर अपने पुण्य की पताका फहराई, क्योंकि समाज ने विधवाओं और निराश्रित नारियों के प्रति अत्याचार का पाप संजो रखा है। यदि परिवार, कुल, जाति, धर्म आदि की कृत्रिम मर्यादा हटा कर समाज में केवल दो ही जातियां रहें, स्त्री और पुरुष और परिवार पूरा मानव समाज हो, तो ऐसी व्यवस्था बैठ सकती है कि न कोई चोर हो, न विधवा।

फिलहाल, पांची को अबला सदन से मुक्त कराने की बात सोचो और विश्वक्रांति को स्थगित रखो—जयदेव ने अपने दिमागी घोड़ों की लगाम कसी।

10

विद्रोही ने पांची की कथा सुनी, तो वे फड़क उठे। पांची की माँ रासकली कभी कभी उनके घर काम करने आती थी और उनकी पत्नी इसका अर्थ

अपने आप लगा लेती थी। जाते समय वह रामकली को बचा खुचा खाना दे देती थी, क्योंकि बंसी खाट पकड़े पड़ा था। उन्हें पांची से पूरी हमदर्दी थी, मगर बब्बन को उन्होंने संदिग्धा दृष्टि से देखा।

"क्या हर किसी चोर लफंगे के कहने पर लाला छदामी लाल के अबला-सदन की सदस्या छुड़ाई जा सकती है ?"—विद्रोही ने कहा।

"अगर वे चोर लफंगे न होते आज जिन्दा कैसे मिलते ? उन्हें कोई गोद में बिठा कर रोटी खिलाने वाला तो था नहीं। इस बात को समझने की कोशिश कीजिये कि बब्बन ने एक साथी पाकर जिन्दगी को बदला और जिन्दगी को समझने की कोशिश की।"

"जयदेव भाई, तुम ठहरे भावुक प्राणी। जिन लोगों पर कभी समाज का अंकुश नहीं रहा…"

"वे अब उस अंकुश को स्वेच्छा से स्वीकार करना चाहते हैं। आप पाँची की बात लें, वह लाला से रुपये झटक कर बब्बन को पहुंचाती है।"

"यह समझ में नहीं आया कि इतने ताले पहरे के बावजूद ये लोग मिल कैसे लेते हैं ?"

"बिल्कुल सीधी बात है। हवेली के जीने का झरोखा सड़क की ओर है। बब्बन वहाँ खड़ा होता है और प्रतीक्षा करता है। पांची उसे देखकर प्लास्टिक का एक बटुआ फेंक देती है।"

बब्बन ने बताया था, दोनों ने एक दूसरे से बात की नहीं है, पर समझी है। बब्बन साफ सुथरा रहने लगा है, कपड़े तमीज से पहनता है, यह बात पांची ने देखी है। बब्बन को इससे पहले वह उदास देखती थी। आजकल दोनों एक दूसरे को देखकर मुस्कराते हैं। पांची के पास बटुए और पैसे कहाँ से आते हैं, यह अनुमान बब्बन ने लगाया है।

अंत में विद्रोही ने एक 'व्यावहारिक मनुष्य' के रूप में जयदेव से बात की। यदि विद्रोही और जयदेव बब्बन के इन दिनों के रहन सहन और आचरण को गोपनीय जाँच के बाद सही पायें, तो दोनों की शादी में प्रोफेसर रामचरण विद्रोही इक्कीस सौ एक रुपये के गुप्तदान वाली बात को

रुकावट नहीं बनने देंगे। "आखिर हमारा भी तो इस जनता पर असर है, जो लाला छदामी लाल भी जानते हैं। उनसे एक ही बात कहनी होगी—लाला तुम्हारे नाम पर इक्कीस सौ एक की रकम इकट्ठी करने के लिये बाजार में टीन का डब्बा घुमाऊंगा। इक्कीस सौ क्या, कहो तो ज्यादा का चंदा कर दूं—और लाला की फिर क्या दम है, जो इक्कीस पैसे भी माँगे जायें।"

पीयूष के साथ खान बंधुओं को 'बात का धनी' का वार्षिक ग्राहक बनाते समय जयदेव ने बब्बन और पांची का जिक्र छेड़ दिया। पीयूष ने बब्बन में आदमियत जागने की बात बिना कहे पहचान ली और वह उसी क्षण एक शर्ट और एक पैन्ट का पीस खरीद कर अरोड़ा टेलर्स के यहाँ सिलने देने और बब्बन से हाथ मिलाने के लिये तैयार हो गया।

"मेरा हमेशा से मानना रहा है कि मनुष्य के भीतर अनन्त शक्तियां छिपी रहती हैं। अब बब्बन को देखो जयदेव, न पढ़ा न लिखा, न उसे कोई ज्ञान और विवेक की बात समझाने वाला, फिर भी उसने कैसे प्यार की एक फुहार में ही अपने मन का सारा मैल धो दिया।"

"यही बात "जयदेव ने उत्तर दिया," मैंने विद्रोही को समझाने की कोशिश की, किन्तु विद्रोही ने पांची में इसलिये उत्सुकता जाहिर की कि वह उसे जानता है। बब्बन के जीवन पर पांची ने जो प्रभाव डाला है, विद्रोही उसे समझने में पूर्णतः असफल रहा।"

"अपनी अपनी सीमायें हैं। विद्रोही के लिए जमाने में मोहब्बत के सिवा और भी गम हैं।"

"प्रोफेसर मुश्किल से काबू में आ पाया। फिर भी उसकी दृष्टि ठोस बातों पर है। विद्रोही ने दोनों की शादी में इक्कीस सौ एक रुपये के गुप्त दान की शर्त हटवाने का जिम्मा लिया है। लेकिन उससे पहले वह बब्बन की गोपनीय जांच करके यह जानना चाहता है कि उसका रहन सहन और आचरण इस योग्य है या नहीं।"

"कुछ लोग" पीयूष से कहा, "सीता की अग्नि परीक्षा से भी संतुष्ट नहीं होते। अरे भाई सीधी बात है। एक लड़का और लड़की जब मिलते हैं, एकदम आवारा हैं। वे जो कुछ करते हैं उस पर नीति और विधान के आधार पर आपत्तियाँ खड़ी की जा सकती हैं।"

"वे जो कुछ करते हैं, आपद्धर्म के अंतर्गत एकदम सही है।"

"यह तुम उनकी दृष्टि से कहते हो। समाज ऐसी बातों को आसानी से माफ नहीं कर सकता। इन दोनों ने कपड़े चुराये, बर्तन चुराये।"

"ठीक है, लेकिन जरूरत भर। संत न बाँधे गांठरी, उदर समाता लेय।"

"इसके अलावा वह उनके वचपन की अबोधावस्था भी थी। फिर भी जो वे करते थे, अपराध था, और इसका अहसास उन्हें तब हुआ जब सामाजिक दण्ड की प्रक्रिया की चपेट में ये लोग आये, अलग हुए और उन्होंने महसूस किया कि एक बार साथ रह कर अब अलग रहना बेमानी है, क्योंकि उनके मनों में एक दूसरे की जगह बन चुकी है।"

"और" जयदेव ने पूछा, "क्या दण्ड की यह प्रक्रिया पूरी नही हुई ? अब तो बब्बन ने वह काम छोड़ दिया, जिसने पांची को उससे अलग किया।"

"दण्ड का प्रयोजन सुधार है, जो पूरा हो चुका है। जिसमें सुधार हुआ है, उसके प्रति तुम्हारे मन में और मेरे मन में सहानुभूति जगी है। इस सहानुभूति का दायरा निश्चित रूप से अभी और बढ़ेगा।"

इस चर्चा के बीच 'बात का धनी' के बारह ग्राहक बने और पीयूष की पैन्ट और शर्ट का कपड़ा भी खरीद लिया गया। इन लोगों का रुख अब अरोड़ा टेलर्स की ओर था।

जयदेव और पीयूष की बातचीत अब सिद्धांत और दर्शन की ओर झुकने लगी थी। जयदेव का कहना था कि जिस व्यवस्था की विकृतियों का ही सीधा परिणाम बब्बन और पांची जैसे बच्चों को समाज की मुख्य धारा से काट देना होता है, उसी व्यवस्था को अपनी विकृति दूर किये बिना किसी एक पांची-बब्बन को दण्ड देने का कोई अधिकार नहीं।

पीयूष कहता था, तुम सामाजिक यथार्थ से झगड़ रहे हो। यथार्थ को

समझा जाता है, उससे नाराज नहीं हुआ जाता। हो सकता है समुद्र ने टिटहरी के अंडे बहा दिये हों, किन्तु टिटहरी का अपनी चोंच से समुद्र खाली कर देने का संकल्प एक दुस्साहस मात्र है। अकेला बब्बन पूरे समाज से लड़ नहीं सकता, लड़े तो वह जीतेगा नहीं। इस व्यवस्था में पांची और बब्बन सर्वथा नगण्य इकाइयां हैं, लाला छदामी लाल जैसे लोग इस व्यवस्था के स्तम्भ हैं।

इस संदर्भ में यह चर्चा भी हुई कि क्या 'बात का धनी' में लाला छदामी लाल की शैतानियत और उनके अबला सदन की असलियत का पर्दाफाश करना अभी ठीक रहेगा? पीयूष का कहना था इससे 'बात का धनी' को अनावश्यक संघर्ष लेना पड़ेगा और बब्बन का पक्ष कमजोर होगा। उनके अपराधों के गड़े मुर्दे उखाड़े जायेंगे, उनके मन में छिपी प्यार की निष्कलुष मूर्ति लोगों को नहीं दिखेगी। जयदेव की एक ही रट थी कि धर्मात्मा का मुखौटा लगाये इस शैतान को बेनकाब किया जाये।

"मेरे ख्याल से यही है अरोड़ा टेलर्स। लेकिन इस पर तो अरोड़ा टेलरिंग हाउस लिखा हुआ है,"—पीयूष ने प्रश्न किया।

"यहां बब्बन दिखाई नहीं देता। इसलिये पता लगाना होगा।"

पता चला कि अरोड़ा टेलर्स कुछ दुकान आगे इसी कतार में है। यह भी पता चला कि दोनों दुकानें सगे भाइयों की हैं, जिनमें आपस में बोलचाल नहीं हैं। पीयूष और जयदेव बब्बन से भेंट करने के लिये आगे बढ़े।

"नमस्ते सम्पादक जी।"—बब्बन ने आवाज लगाई।

"नमस्ते, बब्बन। हम तो तुम्ही से मिलने आये हैं—हम दोनों। और तुम्हारी दुकान के लिये धंधा भी लाये हैं।"

यह कह कर जयदेव ने कपड़ों का पैकेट निकाल कर मास्टर साहब को दिया और पीयूष को नाप देने के लिये आगे कर दिया।

"मास्टर साहब, हम आपकी दुकान पर इसलिये आये हैं कि हमने बब्बन की मार्फत इसका नाम सुना। हम आपको नाप देकर कुछ देर के लिये बब्बन को अपने साथ ले जायेंगे।"

पीयूष की यह बात हँस कर अरोड़ा ने मान ली और बब्बन को कुछ देर के लिये छुट्टी मिल गई।

पीयूष ने दुकान से उठते हुए बब्बन को भरपूर नजर से देखा। गेहुँआ रंग, तीखे नाक-नक्शा, ऊँचा कद और कुल मिलाकर आकर्षक व्यक्तित्व। बब्बन के हाथ में किताबें होतीं, तो वह विश्वविद्यालय का छात्र लगता।

"सम्पादक जी ने तुम्हारे बारे में बताया तो तुमसे मिलने की इच्छा हुई। मेरा नाम सी० के० पीयूष हैं, चाँद खाँ पीयूष और उसने बब्बन से हाथ मिलाया।"

"अखबार में आपका नाम भी है," उसे बताया। साथ ही उसने यह भी जता दिया कि जिस पत्र को उसने खरीदा है, निरक्षर होते हुए भी उसने उस पत्र में क्या है यह जानने की कोशिश की है। पीयूष ने यह भी नोट किया कि बब्बन की जबान साफ है और सामाजिक सभ्यता में उसका प्रवेश काफी भीतर तक हो चुका है।

" क्या तुम यह पसंद करोगे कि अखबार में तुम्हारा नाम भी कहीं छपे ?" पीयूष ने पूछा।

"नहीं साहब"—बब्बन ने कुछ शरमा कर कहा, "मैंने ऐसा क्या तीर मारा है ?" और एक क्षण बाद फिर बोला, "समझा था, एक तीर निशाने पर लगा है, पर अब लगता है हम जैसों को तीर मारने का कोई हक नहीं है पीयूष साहब।"

"अपना मन छोटा मत करो, बब्बन भाई। तुम्हारा वह तीर भी निशाने पर लगा था, और तुम्हारा एक तीर और सही निशाने पर लगा है—तुम्हारे सम्पादक जी के, क्यों जयदेव, झूठ है क्या ?"

"जी नहीं, इत्तिफाक से आप इस बार सच बोले हैं, लेकिन थोड़ा कम बोले। बब्बन ने एक तीर से दो शिकार किये हैं, और वह दूसरा शिकार आप खुद हैं।"

भूतपूर्व चोर और निरक्षर बब्बन भी उन्मुक्त भाव से उनके इस परिहास में शामिल हुआ और बोला, "जी हाँ। और देख रहा हूँ, घायल होकर दोनों शिकार खुद ही शिकारी की तरफ दौड़ पड़े हैं।"

तीनों एक रेस्तराँ में चाय की टेबिल पर बैठे बात कर रहे थे। भेंट के प्रारम्भ में तीरन्दाजी की पहली घटना के स्मरण से बब्बन में जो गाम्भीर्य आया था, वह छँट चुका था। बातचीत में पता चला कि अरोड़ा टेलर्स के दो और कारीगर जिस कमरे में रहते हैं, वह भी उनके साथ रहने लगा है।

"इन लोगों के साथ कमरे में आने से पहले मुझे अटैची, बिस्तर व कुछ और सामान जुटा कर एक किरायेदार का पूरा स्वांग बनाना था। इस काम में मुझे तीन महीने लगे और एक दिन मकान मालिक से झगड़ा हो जाने का जो नाटक गढ़ कर मैं मंगल और संतराम के साथ तीसरा पार्टनर बन गया।"

"यह सामान कैसे जुटाया गया—पूछ सकता हूँ ?" जयदेव ने सवाल किया।

"पूछिये, पूछिये। तीन महीने इसलिये लगे कि सामान नया, बाजार से खरीदा गया। अब मैं बारह रुपये रोज का कारीगर हूं और सीजन के दिनों में यही मजदूरी दुगुनी तक हो जाती है।"

"एक सवाल और बब्बन," जयदेव ने उसे टोका, 'फिर तुम पांची के फेंके गये रुपये क्यों ले रहे हो ? इन रुपयों के लिये क्या पांची को जलील नहीं होना पड़ता होगा ?"

"यह सवाल मैंने अपने आप से कई बार पूछा है। शायद पांची इक्कीस सौ एक रुपये जमा करने में मेरी मदद कर रही हो, या शायद वह चाहती हो कि कुछ निजी मशीनें खरीद कर मैं अपनी दुकान शुरू करूँ। कुछ भी हो, पांची द्वारा दी हुई चीज को न उठाना भी मेरी समझ में नहीं आया।"

पीयूष ने वातावरण पर कोहरा छाते देखकर कहा, "भाई बब्बन ! तुम अपना नाम पूरा करो—बब्बन क्या ? बब्बन लाल, बब्बन खाँ या और कुछ ?"

"क्यों साहब, क्या इतने से काम नहीं चलेगा ? अच्छा देखता हूं, आप लोगों के दो दो, तीन तीन नाम हैं-जयदेव मिश्र, चांद खां पीयूष। लेकिन क्या नाम आदमी खुद रखता है ? नाम तो रखा जाता है।"

चाय खतम की गई। यह भी तय हुआ कि अगली बार पैन्ट शर्ट लेने आने पर दोनों मित्र बब्बन के लिये कोई नाम तय करके जरूर लायेंगे।

11

वकील हरिमोहन से जब बब्बन के बारे में जयदेव ने बात की तो उसने एक ही बात पूछी, "पांची वयस्क है ?"

इस बात का निश्चित उत्तर देने की स्थिति में जयदेव नहीं था, इसलिये उसने बात को कानूनी पक्ष से न देखकर मानवीय दृष्टि से देखने पर जोर दिया। उसने यह भी याद दिलाया कि वह या बब्बन अभी उसके मुवक्किल नहीं हैं। यह चर्चा तो 'बात का धनी' परिवार में पारिवारिक नाते से ही चल रही है।

"लाला छदामी लाल मेरे मुवक्किल हैं, और अबला सदन का विधान मैंने ही बनाया है," हरिमोहन ने बताया। फिर कहा—"लेकिन इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। मेरी राय में 'बात का धनी' को इस मामले में नहीं पड़ना चाहिये, क्योंकि कीचड़ में पत्थर डालने से अपने ऊपर भी छींटे पड़ सकते हैं।"

जयदेव इतनी जल्दी यह मानने को तैयार न था। उसने एक छोटा सा सुराग मिलते ही पूरी बात निकलवा कर अपना पत्रकारिता धर्म निबाहा था। जो 'स्टोरी' उसे अब तक मिली थी, उसमें विस्फोटक तत्व थे। वह केवल इतनी ही बात पर विचार करना चाहता था कि उस 'स्टोरी' का उपयोग किस प्रकार किया जाये ताकि 'अपने पक्ष' को हानि न पहुंचे। वकील हरिमोहन ने इतनी जल्दी यह राय कैसे दे डाली कि 'बात का धनी' इस पचड़े में बिल्कुल न पड़े ? उसने प्रतिवाद के स्वर में कहा, "हम कीचड़ में पत्थर नहीं फेंकना चाहते। इस कीचड़ में जो कमल है, उसे उपयुक्त स्थान पर अर्पित करना चाहते हैं।"

हरिमोहन जयदेव की बात पर हंस पड़ा, बोला, "तुमको तो कविता सूझती है, मगर एक बार फिर सोचो। हम चुप रह कर लाला से आसानी से सौदा कर सकते हैं। अभी सौदा सस्ता है, शोर मचने पर इसकी कीमत लाला की

इज्जत हो जायेगी। लाला उस समय इज्जत को देखेगा, पैसे को नहीं।''

''माना'' जयदेव ने कहा, ''हम इस बारे में कुछ छापना अभी स्थगित रखें। किन्तु हमें इन दोनों के बारे में तो कोई कदम उठाना होगा।''

''सवाल यह है कि पांची को अबला सदन से बाहर कैसे निकाला जाये। अबला सदन प्रकटतः नगर की एक समाजसेवी संस्था है, जो अपने विधान के अनुसार पंजीकृत है। इसे 'बात का धनी' जैसा नगर का प्रतिष्ठित पत्र भी स्वीकार करता है। पांची संदिग्ध आचरण वाली एक बेघरबार लड़की है। उस पर किसका नियंत्रण और अधिकार हो सकता है?''

''अबला सदन के विधान में भी तो ऐसा कोई प्रावधान है, जिसके अन्तर्गत विवाह द्वारा उसे सदन से छुड़ाया जा सकता है।''

''हाँ, मेरी अगली बात यही थी। अभी तक जितनी लड़कियाँ सदन से निकली हैं, उनका छदामी लाला ने वैदिक पद्धति से विधिवत कन्यादान किया है। हम लोग वर पक्ष बनकर पांची के विवाह की बात चला सकते हैं।''

तब जयदेव ने धन्ना नाई की शर्त बताई। पांची के विवाह के लिये वे गुप्तदान के रूप में सौदा करना चाहते हैं। जयदेव यह भी पता लगा चुका था कि गुप्तदान की यह शर्त केवल उन लड़कियों के लिये लगाई जाती है, जो लाला की नजर में चढ़ी हुई होती हैं। विवाह के इच्छुक लोगों को शेष साधारण कन्यायें ही दी जा सकती हैं।

''लाला ने यहाँ भी अपनी वणिक बुद्धि लगा रखी है'' जयदेव ने कहा, ''बब्बन जैसी हैसियत के लोग जो गरीबी के कारण सस्ती शादी करना चाहते हैं, इस शर्त को पार नहीं कर सकते। बब्बन को भी तीन और लड़कियां दिखाई जा चुकी हैं।''

''अबला सदन के संस्थापक और संरक्षक होने के नाते छदामी लाल सदन की सभी लड़कियों के अभिभावक हैं। वे जिस लड़की को शादी के योग्य मानेंगे, उसी की शादी करेंगे। बाकी लोग इस बारे में बाहर के लोग हैं।''

यह जयदेव जानता था और इसीलिये वह पत्र के माध्यम से छदामी लाल को झुकाना चाहता था। वकील हरिमोहन ने सलाह दी कि वह अगले अंक

में एक प्रतिष्ठित आश्रम की एक कन्या की व्यथा कथा प्रकाशित करने की घोषणा करके लाला से मिले।

जयदेव इस प्रकार पत्र को छिछले स्तर पर नहीं उतारना चाहता था। उसका मानना था कि जो छापना है, छाप दिया जावे, उसकी घोषणा करके फिर चुप कैसे रहा जा सकता है ? और यदि चुप न रहना हो तो पूर्व घोषणा से समाचार की नाटकीयता समाप्त हो जाती है। इस प्रकार की बातें वे इससे पूर्व भी कर चुके थे।

इसलिये हरिमोहन की पहली बात मानकर चुप रह कर लाला से सस्ता सौदा करने के लिये जयदेव लाला छदामी लाल के पास पहुंच गया।

लाला इस समय निराला बाजार में सी० एल० लाला एण्ड सन्स में बैंठते थे। उनसे मिलने के लिये परची भेजनी पड़ती थी और लाला सिद्धांततः सामान्य लोगों को दस बीस मिनट प्रतीक्षा करवाते थे। इसलिये जयदेव ने दरबान को ताकीद की कि वह सेठ जी को कह दे कि काम एकदम अर्जेन्ट है, और वह फौरन मिलना पसन्द करेगा।

लाला के कान खड़े करने के लिये जयदेव ऊंचे स्वर में बोला था। इसलिए मुनीम रामगोपाल ने परची सेठ जी के पास पहुंचाने और उनसे तत्काल मिलाने का जिम्मा खुद लिया, और उसे एक मिनट बाद ही लाला छदामी लाल के कार्यालय में प्रवेश की अनुमति मिल गई।

लाला के कार्यालय में लक्ष्मी के चित्र के साथ ही जयप्रकाश नारायण और प्रधानमंत्री के चित्र लगे थे। गांधीजी और नेहरू के चित्र पहले से लगे थे, केवल इन्दिरा गांधी और संजय के चित्र हटाये गये थे। लाला ने कुर्सी पर बैठे बैठे व्यस्त भाव से अभिवादन का उत्तर दिया और जयदेव से बैठने को कहा।

"कैसे कष्ट किया सम्पादक जी ?"

"कुछ ऐसी विशेष बात ही है कि आपको कष्ट देना पड़ा है। आपके अबला सदन में पांचो नाम की एक लड़की है, जो विधवा नहीं है।"

"हाँ, कभी कभी पथभ्रष्ट और अनाथ लड़कियाँ भी आश्रम में ले ली जाती हैं। बारह में से दो या तीन इस तरह की लड़कियाँ हैं।"

"मैं पांची के विषय में ही बात करने आया हूं। बाकी ग्यारह लड़कियों से मुझे वास्ता नहीं है।"

"पांची ?"

"जी, और आप और मैं दोनों ही उससे एक बार एक साथ मिल चुके हैं, और आपने उसे मेरे सामने बीस रुपये देकर आश्रम में वापस बंद कराया था।"

'अच्छा, अच्छा वह लड़की जो भाग रही थी। आश्रम में आने से पहले वह लड़की एकदम आवारा थी और चोरी करते हुये पकड़ी गई थी।"

"तो आपने उसे पुरस्कृत क्यों किया? क्या उसके आचरण में कोई उल्लेखनीय सुधार हुआ है ?"

लाला को दाल में कुछ काला नजर आया। टटोलने के लिये पूछा "पुरस्कार कैसा ?"

"याद कीजिये, आपने कहा था कि आश्रम की कन्यायें मासिक हाथ खर्च के लिये आन्दोलन पर हैं और पांची ने कठोर कदम उठाकर आपको आन्दोलनकारियों की मांग मानने पर मजबूर कर दिया है। आपकी यह बात मनगढ़ंत थी।" जयदेव ने अंधेरे में तीर मारा।

लाला ने घण्टी बजाई और सम्पादक जी के लिये कॉफी मंगवाई। फिर जयप्रकाश नारायण की ओर देखते हुये उन्होंने कहा, "क्या आपको यह ज्ञान किसी जादू के जोर से प्राप्त हुआ ?"

शायद तीर कहीं लगा। लाला की मुद्रा बदल गई थी। इसलिये जयदेव ने एक तीर और चलाया, "और पांची आपके आश्रम को शरण नहीं, जेल मानती है।"

लाला ने चित्रों का अध्ययन छोड़ कर एक बार जयदेव की ओर देखना चाहा, किन्तु इस बार प्रधान मंत्री के चित्र ने उनकी नजर अपनी ओर खींच ली। पांची को उन्होंने कितना समझाना चाहा है कि वह ऐसा न सोचा करे। उन्होंने साम-दाम-दंड और भेद सभी नीतियां तो अपनाई हैं। मगर इतना रुपया ऐंठने के बाद भी लड़की अड़ियल है और आश्रम को जेल कहने से बाज नहीं आती।... लेकिन इस सम्पादक के बच्चे को यह सब कैसे मालूम हुआ ?

"लाला कुछ स्थिर हुए और उन्होंने इस बार जयदेव को देखने में भी सफलता प्राप्त की। कहने लगे "जो लड़कियां बदचलन होती हैं, उन्हें अपनी आजादी में खलल क्यों अच्छा लगेगा? मगर क्या इन्हें खुला छोड़ दिया जावे?"

"नहीं, आप शहर की सब बदमाश लड़कियों को बांधे रखिये। किन्तु पांची के लिए तो विवाह का प्रस्ताव आ चुका है।"

"अगर ऐसा है, तो बड़ी खुशी की बात है। हमारा यही प्रयास रहता है कि इन अभागियों को घर बसाने का मौका मिले। लेकिन लड़का ठीक ठाक और रोजगार शुदा होना चाहिये। क्या ऐसा कोई लड़का आपकी जानकारी में है?"

"है और वह धन्ना से बात भी कर चुका है। धन्ना ने उसके सामने एक टेढ़ी शर्त रख दी है।"

"कैसी शर्त?"

"या तो वह धन्ना की बताई हुई तीन लड़कियों में से किसी एक से शादी करे वरना उसे इक्कीस सौ एक रुपये का दान अबला सदन को करना होगा।"

"आप कैसी बातें करते हैं? धन्ना तो अबला सदन का चपरासी है। उसे ऐसी शर्त रखने का कोई अधिकार नहीं है। अगर उसने ऐसी कोई हरकत की है, तो उसे देख लिया जायेगा।"

"आप उस लड़के के विषय में संतुष्ट हैं, तो उससे कह दीजिये, पांची का विवाह उसके साथ हो जायेगा।"

कॉफी आई, उस समय लाला बिल्कुल सामान्य हो चुके थे। पेमा और पांची दो ही लड़कियां तो उनके अबला सदन की शोभा थीं। पेमा पर धन्ना ने कब्जा कर लिया। यों, वे पेमा की सेवा से पूरी तरह वंचित नहीं हुए पर पांची तो पेमा से भी बढ़ चढ़ कर है। पांची के मामले में उन्हें घाटा हुआ, लाला को ऐसा मानकर संतोष करना पड़ा।

दूसरे दिन बब्बन को लाला जी से मिलाने का वादा करते हुए जयदेव सी० एल० लाला एण्ड सन्स से बाहर आ गया।

12

पीयूष ने जब जयदेव से इस तरह मोर्चा फतह होने की खबर सुनी तो वह उछल पड़ा। बोला "भाई, अब तो बब्बन ने एक अच्छा सा नाम कमा लिया है। अब उसका नामकरण भी कर दो।"

"यह अधिकार तो तुम्हारा है। प्रस्ताव भी तुम्हारा था और बब्बन की तीरंदाजी की तारीफ भी तुमने ज्यादा की थी।"

"तुमने तो नामकरण कर दिया। अर्जुन लाल ठीक रहेगा न ?"

जैसा द्रोणाचार्य ठीक समझें। संयोग से आज तुम्हें पैन्ट लेने भी जाना है, चलो अर्जुन लाल को उसका नया व्यक्तित्व और विवाहित भविष्य भी सौंप आयें।"

मार्ग में पीयूष ने भी एक समाचार दिया। उसके ससुर लालूखां ने कैश की शार्टेज को फर्म के खाते में डाल कर उस पर 'ऐहसानात का बोझ' लाद दिया था। जयदेव ने इस बोझ को हल्का करने के लिए उसे बताया कि कवि के रूप में उसकी ख्याति और प्रतिष्ठा खान ब्रदर्स फर्म में उस शार्टेज से कहीं अधिक मूल्य और महत्व रखती है। उसके और पार्टनरों को जिन अफसरों से मेलजोल बढ़ाने के लिये हजारों रुपये खर्च करने पड़ते हैं, वे अफसर और एकाध मिनिस्टर तो उसके कॉफी हाउस के मित्र हैं।

"तुम तो केवल एक बात गाँठ बांध लो," जयदेव ने पीयूष से कहा, "रोकड़ रखने वाले कहते हैं, पहले लिख और पीछे दे, भूल पड़े कागज से ले। तुम थोथे शिष्टाचार में आकर पेमेन्ट तो कर देते हो, लेकिन खातिरदारी करते करते वह पेमेन्ट लिखना भूल जाते हो।"

पीयूष ने बताया कि यह हिदायत उसे मिल चुकी है। फर्म के लोगों को उस पर पूरा विश्वास है कि वह किसी प्रकार की कोई बेईमानी नहीं कर सकता और जो रकम कम हुई है वह लिखापढ़ी की भूल के कारण ही हुई है। लोग उसका यह स्वभाव जानते हैं।

अरोड़ा टेलर्स के यहां पहुँच कर दोनों मित्रों ने सिले हुये कपड़े लिये और बब्बन को एक हफ्ते की छुट्टी दिला दी।

बाहर निकलते ही बब्बन ने अपने लिये नये नाम का तकाजा किया, तो दोनों ने इसके एवज में उससे चाय माँगी।

"यह चाय तुम्हें पिलानी चाहिये, क्योंकि हम लोगों ने तो तुमसे मिठाई खाने का हक हासिल कर लिया है।"—पीयूष ने समझाया।

"आपके लिये चाय और मिठाई दोनों ही हाजिर कर दी जायेंगी, पहले यह बता दीजिये कि मुझे एक हफ्ते की छुट्टी क्यों दिलाई गई है ?"

"क्यों, क्या शादी के बाद हनीमून के लिए श्री अर्जुन लाल को इससे भी अधिक समय चाहिए," जयदेव ने प्रश्न किया।

चमत्कृत 'अर्जुन' ठिठक कर खड़ा हो गया, तो हँसी मजाक के साथ उसे धकेलते हुए दोनों ने लाला छदामी लाल के आत्मसमर्पण की कथा उसे नमक मिर्च लगाकर सुनाई।

"लाला ने केवल एक बार पूछा कि क्या मुझे यह सब जानकारी जादू के जोर से हुई है, फिर तो ऐसे भींगी बिल्ली बने कि अपनी नाक के बाल धन्ना नाई को सजा देने तक के लिए तैयार हो गये।" जयदेव ने यह कर पूछा, "अब यह बताओ, कल तुम शादी के लिये तैयार हो क्या ?"

अर्जुन लाल ने बताया कि उसकी अटैची में करीब पौने तीन सौ रुपये हैं, जिसमें बब्बन और पांची दोनों की बचत शामिल है। यह तय किया गया कि विद्रोही जैसे दुनियादार आदमी से मिलकर आगे का प्रोग्राम बनाया जावे। पांची को अबला सदन से निकाल कर मंगल और संतराम की कोठरी में तो रखा जाना ठीक न होगा। एक अलग कमरे की व्यवस्था करनी होगी और कुछ घर गृहस्थी का सामान, दुलहिन के कपड़े वगैरह खरीदने होंगे।

इस बार विद्रोही ने अधिक उत्साह दिखाया और बातचीत में अपनी पत्नी को भी शामिल कर लिया। "सुनती हो, वह शराबी बंसी था न, उसकी लड़की पांची की शादी हो रही है।"

ऐसा लगा कि विद्रोही ने अर्जुन को देखकर ही अपनी गोपनीय जांच

डा. डिल्ली रमण रेग्मी
पुस्तकालय
28425

पूरी कर ली, क्योंकि इस विषय में उसने कोई बात नहीं चलाई और साफ था कि अर्जुन को पांची के लिये योग्य वर के रूप में स्वीकृति मिल गई है।

"जब तक बब्बन को....."

"अर्जुन कहिये, बब्बन नहीं," पीयूष ने याद दिलाया।

"सॉरी। जब तक अर्जुन को नया मकान न मिले, हम अपना एक कमरा खाली कर देंगे। ये लोग दो चार दिन में सुविधानुसार दूसरा मकान तलाश कर लेंगे। ठीक है न ?" विद्रोही ने अपनी पत्नी से सलाह मांगी

श्यामा भाभी बहुत उदार प्रकृति की महिला थीं। आम तौर से लोग उन्हें भाभी कह कर ही पुकारते थे और वे देवर के रूप में अपना स्नेह देने में किसी के साथ कृपणता नहीं बरतती थीं। उन्होंने यह प्रस्ताव इस संशोधन के साथ मान लिया कि इन नये गृहस्थों को और भी जो चीज चाहिये, तब तक के लिये दे दी जाये, जब तक ये अपनी गृहस्थी पूरी तरह से जमा न लें। पांची कौन सा दहेज लेकर आयेगी ?

चारों पांचों की सलाह से बाजार से खरीदे जाने वाले सामान की लिस्ट बनी, तो उसका अनुमानित मूल्य पांच साढ़े पांच सौ बैठा। पीयूष ने सौ रुपये जेब से निकाले और सौ रुपये इकट्ठा करने का जिम्मा विद्रोही ने ले लिया। बाकी रुपया एक माह में चुका देने का वचन अर्जुन ने दिया, तो भाभी बिगड़ गईं और कहने लगीं, "नहीं, तुम लोगों को जो बचत करनी हो, दूसरे महीने से करना। एक महीना तो तुम लोग आराम से गुजारो, फिर पेट काटते रहना।"

विद्रोही आज मूड में थे, उन्होंने तत्काल चुनौती स्वीकार करते हुए सौ की जगह दो सौ रुपये की व्यवस्था करने का बीड़ा उठाया। कुछ जूतियां घिसेंगी और काम हो जायेगा। आप लोग अभी प्रोफेसर विद्रोही की इस कला से परिचित नहीं हैं। इतने बड़े शहर में मुझे सिर्फ तीन चार ऐसे लोगों की तलाश करनी है, जो पचास पचास रुपया दे सकें। फिर भी कमी रही तो ठेला यूनियन, रिक्शा यूनियन और धोबी यूनियन से चंदा ले लूंगा।

इधर दूसरे दिन सुबह जब धन्ना अपनी हजामत की पेटी लेकर छदामी लाला के यहां पहुंचा, तो लाला बरस पड़े।

"क्या अंट शंट बकते रहते हो तुम? पांची से कौन शादी करना चाहता था? तुमने मुझे क्यों नहीं बताया? तुम कौन होते हो, उससे इक्कीस सौ का गुप्तदान मांगने वाले?"

धन्ना ने फौरन लाला के पैर पकड़ कर माफी मांगी और कैफियत दी कि यह बात सिर्फ उस लड़के को टालने की गरज से कही गई थी, क्योंकि 'मालिक' पांची पर मेहरबान रहे हैं। थोड़ा गुस्सा उतरने के बाद लाला ने यह जानना चाहा कि आखिर यह बातें अबला सदन के बाहर निकल कर सीधे अखबार वाले के पास कैसे पहुँचीं? उनकी व्यवस्था और चौकसी में कहाँ पर चूक हुई है?

"मालिक, उस दिन जब पांची भागी थी और उस अखबार वाले से टकराई थी, तब तो उन्हें बात करने का कोई मौका मिला नहीं। मैं उसके पीछे ही था। मेरे और आपके अलावा आश्रम में किसी अन्य व्यक्ति का आना जाना नहीं है। भंगिनों तक पर निगरानी रखता हूँ, मालिक।"

"हमने उस दिन उस अखबार वाले को जो कुछ कहा, उसने आँख मूँद कर मान लिया। कल वह गद्दी पर आया तो उसने हमें हमारे मुंह पर ही झूठा बना दिया।"

"मालिक, बड़ा बोला माफ करें। यह तो उस अखबार वाले की सरासर नमक हरामी है कि वह हमसे ही खाये और हम पर ही गुर्राये।"

"उस अखबार वाले ने कहा कि आश्रम पांची के लिये जेल है। ठीक वही बात जो पांची कहती है। हो सकता है। तुम्हारे पहुँचने से पहले पांची ने कहा हो कि आश्रम उसके लिये जेल है।"

"फिर अखबार वाले ने उसे क्यों जाने दिया? और वह बीस रुपया लेकर क्यों लौट गई?" धन्ना ने प्रश्न किये।

"हाँ, यह रुपये वाला चक्कर भी है। लड़की आश्रम से बाहर नहीं जाती, तुम कहते हो पांची की आलमारी में रुपया पैसा कभी नहीं मिलता, तुम्हारी

सी आई डी कहती है, पांची के पास कभी उन्होंने रुपये नहीं देखे। लड़की करीब सौ सवा सौ रुपये झटक चुकी है, उसका उसने आखिर क्या किया ?"

दोनों ने एक दूसरे के सवालों पर बहुत सर खपाया, मगर इसके सिवा उनकी समझ में कुछ नहीं आ सका कि पांची के पास आश्रम के बने हुए पर्स हर समय पांच सात पड़े रहते थे। पांची इसी शर्त पर काम करती थी कि चार पर्स बनाने के बाद पांचवाँ पर्स उसका होगा।

लाला ने उसे बताया कि आज वह लड़का जयदेव के साथ उससे मिलने गद्दी पर आयेगा और तीन चार साल से पली पोसी पांची को उनसे छीन कर ले जायेगा।

नहा धोकर मंदिर से लौटते ही लाला को विद्रोही ने घेर लिया।

"एक शुभ कार्य में आप जैसे दानवीरों की सहायता के लिये आपके पास उपस्थित हुआ हूँ", विद्रोही ने अभिवादन के बाद लाला को अपना आशय बताया।

आप जैसे सेवाभावी नेताओं के हाथ से शुभ कार्य के अलावा और कुछ हो ही क्या सकता है," लाला ने याद करने की कोशिश करते हुए कहा कि विद्रोही को चंदा लेने आये कितना समय हुआ है। लाला इसी तरह चंदा मांगने वालों को तौलते थे। बार बार आने वालों को ग्यारह रुपया, साल में तीन चार बार आने वालों को इक्कीस रुपया और साल दो साल में एक बार आने वाले के मामले में इससे आगे बढ़ते थे।

विद्रोही से अधिक बात करने पर इक्यावन की जगह एक सौ एक न देने पड़ जायें, इसलिये लाला ने तुरन्त इक्यावन रुपये की परची देकर हाथ जोड़ दिये और कहा, "आप गद्दी पर पधार जायें और मेरी ओर से यह पत्र पुष्प स्वीकार करें।"

और दोपहर पहले ही विद्रोही ने निर्धारित दो सौ रुपये की राशि में ग्यारह रुपये और जोड़कर जयदेव के हाथ पर रख दिये और बताया कि

आज का पहला शिकार उसने लाला छदामी लाल को बनाया और आसानी से इक्यावन रुपये झटक लिये। इसके बाद पांच सात रुपये भागदौड़ में खर्च हुए और आखिर उसे इक्यावन रुपये देने वाले और मिल गये क्योंकि रिक्शे पर थोड़ा इधर उधर भटकते ही उसकी तुरन्त बुद्धि ने काम दिया और वह एक थानेदार के पास गया जिसने कई बार सेवा का मौका मांगा था। उसने थाने में दो आसामी बुलवाये और प्रोफेसर साहब को पचास-पचास रुपये भेंट करवा कर उन्हें डपट कर भगा दिया।

''अब तुम अर्जुन को लाला से मिलवा आओ और शादी की तारीख तय कर आओ। शुभस्य शीघ्रं।''

13

शादी हुई और उसमें अर्जुन के साथ आने वालों में जयदेव, पीयूष, विद्रोही, वकील हरिमोहन और पांच सात अन्य लोग थे, जैसे मंगल और संतराम। उधर आश्रम की हर शादी पर आने वाले कुछ स्थाई अतिथि कन्या पक्ष की ओर से शामिल हुए और कुल मिलाकर शादी धूमधाम से हुई।

अबला सदन की ओर से होने वाली शादी में वर को केवल ग्यारह रुपये संस्था को देने पड़ते थे। विवाह समारोह का, जो बिल्कुल आडम्बरहीन होता था, बाकी खर्चा आश्रम की ओर से कर दिया जाता था। विवाह में उपस्थित सभी लोगों को लड्डू लाला छदामी लाल की ओर से दिये जाते थे।

इस विवाह की एक विशेषता यह थी कि अर्जुन और पांची का चित्र 'बात का धनी' में छपा, जिसमें इसे आदर्श विवाह बताया गया। पत्र की दृष्टि में एक प्रेमी पहाड़ खोदकर दूध की नहर तो नहीं निकाली, किन्तु दुनिया की ऊंची ऊंची दीवारों में कैद एक निरीह आत्मा को अवश्य मुक्त कराया है। इस मुक्ति यात्रा के अंत में बस्ती को अपने खोये हुए दो बेटे बेटी मिले हैं, और इन दोनों अनाथों को सनाथता।

शादी के तुरन्त बाद पीयूष मचल पड़ा कि अर्जुन और पांची और कहीं जाने से पहले उसके और जयदेव के साथ शहर के प्रमुख रेस्तरां 'तृप्ति' में दावत लेंगे, इन्हीं दूल्हे-दुलहिन के जोड़ों में। नई लाल साड़ी में बिना दुलहिन के मेकअप के भी पांची आज कुछ ज्यादा ही फब रही थी। उसकी आंखों में इतने सितारे, हंसी में इतने फूल, श्वास में ऐसा संगीत और धड़कन में ऐसी ताल पहले आई ही कब थी ? आज उसके लिये सब कुछ नया-नया था, नया अर्जुन नई जिन्दगी का नया दिन, और जो इतनी पुरानी सृष्टि है, आज तो वह भी उसके लिये एकदम नई थी। शहर के ये पुराने बाजार, क्या इससे पहले भी कभी आज जैसे अच्छे थे ?

अर्जुन के रूप में बच्चन ने इस समाज में बहुत भीतर तक पैठ कर ली थी और आज अर्जुन पांची को पाकर लगभग उतना ही पा चुका था, जितना किसी ऋषि-महर्षि ने सदेह मोक्ष के रूप में कभी पाया होगा। पांची बार बार उसे देख लेती थी, और जितनी बार वह देखती उतनी ही बार उसकी आत्मा में प्रकाश के विस्फोट होते। यही तो स्वर्ग है, उसके साथ चलते हुए पीयूष और जयदेव देव गण हैं, और इस स्वर्ग की जननी है पांची की हर चितवन।

जयदेव और पीयूष को भी आज इन दोनों के आनन्द में अनन्त पुण्यों के लाभ का संतोष मिल रहा था। हास परिहास के बीच सब एक दूसरे को आपसी छोटी छोटी बातें बता रहे थे। अर्जुन ने बताया कि उसके हाथ तीस पैसे में अलादीन का चिराग आ गया, जब उसने 'बात का धनी' का एक अंक खरीदा। इससे अच्छा सौदा उसने जिन्दगी में और कोई कभी नहीं किया।

पांची ने अबला सदन के बाहर जयदेव से हुई अपनी मुठभेड़ याद दिलाई जहां से पूरी घटना का जन्म हुआ और 'बात का धनी' अर्जुन की जिन्दगी का सबसे अच्छा सौदा बनने योग्य हुआ। पीयूष और जयदेव ने मिलकर तीर

चलाने और निशाने पर लगने की और इसके फलस्वरूप हुए अर्जुन नामकरण की बात छेड़ी। इस पर जयदेव ने सुझाव दिया कि क्यों न पांची भी नयी जिन्दगी नये नाम के साथ शुरू करे?

और पांची के नाम को थोड़े संशोधन के साथ 'पांचाली' के रूप में स्वीकार कर लिया गया।

'तृप्ति' में खा-पीकर जब ये लोग विद्रोही के यहां पहुंचे, तो भाभी ने शिकायत की कि वे लोग सीधे घर पर क्यों नहीं आये, घर पर सब तैयारी थी। अर्जुन और पांचाली ने भाभी के पैर छुए। भाभी ने दोनों के सर पर हाथ रखा और पांचाली की ठोड़ी पकड़ कर प्यार से उसे गले लगाया तो गालों पर खिले गुलाब और आँखों में छलके मोती लिये पांचाली धन्य हो उठी।

"पांचाली।"

"अर्जुन।"

यह इन दोनों का सुहागरात का प्रथम वार्तालाप था, जो दोनों को हंसी और खुशी से सरावोर कर गया।

और उसके बाद दोनों एक दूसरे के गले लग कर रोये। शायद वे एक दूसरे को अपनी प्रतीक्षा की व्यथा एक दूसरे के आंसू पोंछकर बताना चाहते थे, क्योंकि मुक्ति और आनंद की इस पहली रात में वे अपने भयावह अतीत को मुँह पर नहीं लाना चाहते थे।

"जानती है पांची, नहीं नहीं, श्रीमती पांचाली देवी......"

"आज तो श्रीमान् अर्जुन लाल जी, हमने सब कुछ जान लिया है, इतना कि अब और कुछ जानने की इच्छा नहीं रही है।"

"नहीं पांची, तुझे खोकर और दुबारा पाकर मैंने एक बहुत बड़ी चीज और भी पाई है और उस पर मुझ अकेले का ही नहीं, तेरा भी अधिकार समझता हूं। इसीलिये कहता हूं।"

"तो कह डाल बाबू, जो जी में आये। आज तो तेरी हर बात मंजूर।"

"जब हम दोनों खुले घूमते थे और सिर्फ मनमानी करते थे, तब हमें वह बात नहीं दिख सकती थी। यह तो मैंने तब जाना, जब मेरे देखते देखते उन जालिमों ने तुझे पकड़ा और पकड़ कर इस जेल में बंद कर दिया।"

"मुझे ? और मुझे ऐसा लगा कि जैसे इस जेल ने तुझे बंद कर दिया है। रोटी खाती, तो तेरी याद आती, सोचती तू भूखा होगा। बिस्तर पर लेटती और सोचती कि बब्बन कहां सोया होगा।"

"देख, तुझे मेरी कसम हैं पांचो जो तूने आज ऐसी वैसी बात की। मुझे तो तू यह बता कि उस दिन मुझे खिड़की से देखकर तू हँसी क्यों थी ? उससे पहले तो तू उदास उदास दिखती थी।"

उस दिन तू नहाया धोया, नये कपड़े पहने मुझे बड़ा अच्छा लगा था। पहले तू रोनी सूरत लेकर आता था।"

"अरी, यही वह बात थी जो मैं तुझे बताना चाह रहा था। उस दिन मैंने अपनी कमाई से खरीदे और अपने हाथ से सिले कपड़े पहने थे, दो कदम चलते ही मुझे जाने क्या हुआ कि मैंने कसम खाई कि जिस काम की वजह से हम दोनों अलग हुए, वह काम दुबारा कभी नहीं करूंगा और मुझे ऐसा लगा कि जैसे सर पर से कोई भारी बोझ उतर गया हो।"

"फिर तूने इन दो तीन सालों में अपना काम कैसे चलाया ?"

"तेरे खिड़की में फेंके हुए रुपयों से। बता तू यह रुपये क्यों फेंकती थी ?"

"ऊँ हूँ : ह। आज नहीं, फिर कभी बताऊँगी। तू सच सच बता, कैसे काम चला तेरा ?"

"अरी, इन दो तीन सालों में एक सिलाई की दुकान पर काम करके मैं पूरा जेन्टिलमैंन बन गया हूँ, दुकान पर आये ग्राहकों को देखता। देखता वे कपड़े सिलाने देते समय या उसे ट्राई करते समय कैसे नखरे करते, कैसे बोलते अरोड़ा साहब, कैसे उनसे पेश आते। कभी दुकान के लिये सौदा लाता तो पता चलता, सौदा सिर्फ पैसा फेंक कर माल तुलाना ही नहीं होता, उसके लिये कुछ और अक्ल भी होनी चाहिये-चार जगह भाव पूछो-माल परखो-

याद रखो कि चार दिन पहले भाव क्या था, और मालिक को यह सब जताओ कि कितनी मशक्कत से जाकर यह सौदा किया है। तब सौदा सौदा होगा, वर्ना डांट पड़ेगी।"

"मैंने भी प्लास्टिक के पर्स बनाना सीखा है। तेरे पास जो पर्स मैं फेंकती थी, वे मेरे ही बनाये होते थे। हाँ, तू अपनी बात कह, अच्छी लग रही है।"

मैंने तेरे सब पर्स रख रखे हैं। कहना क्या है ? अब मुझे इस दुनिया का डर नहीं रहा। अब किसी से मुंह छिपाने की जरूरत नहीं, बल्कि जरूरत पड़ने पर उनसे चार बात करके वह जरूरत पूरी की जा सकती है। अब मैंने जीना सीख लिया है।"

"वह मैं तुमसे सीखूंगी, मेरे अर्जुन बाबू।"

"तो पाँचो रानी, थोड़ी सी बात तो यह थी कि मेहनत की खाओ तो दुनिया से डरने की जरूरत नहीं। इतनी बात तुम्हारे खोने से मुझे हासिल हुई। जब तुम्हें वापस पाया, तो बात पूरी हुई-कि सही रहो तो दुनिया बड़ी अच्छी है। देखा तुमने भाभी को, विद्रोही जी को, जयदेव और पीयूष को ? देखते ही लगता है जैसे तपती हुई धूप से छाँह में किसी झरने के पास आ गये हैं।"

"और हमारे बाबूजी–लाला छदामी लाल और धन्ना नाई जैसे आदमियों को देख कर कैसा लगता है, यह कभी फिर सुनाऊंगी, आज नहीं।"

और आज जो होनी चाहिये ऐसी बहुत सी शब्दहीन बातें हुईं और इस रात का एक भी पल उन्होंने नष्ट नहीं किया।

●

बस्ती

जयदेव अपने परिवार से अलग अकेला रहता था। 'तृप्ति' से लौट कर जब वह अपने कमरे पर आया, तो मन में कुछ भारीपन था। उनकी सहज भावुकता ने जिस समारोह को एक पुण्य कार्य माना था, जिस विवाह के लिए जयदेव ने स्वयं इतनी भागदौड़ की थी, उस पर अब वह तर्क बुद्धि से विचार कर रहा था। साथ ही वह सोने का प्रयास भी कर रहा था।

अर्जुन ने पाँचाली को जीत कर समाज में अपनी जड़ें जमा ली थीं। अब वे दोनों उसी समाज के सदस्य थे, जिसमें कुछ वर्ष पूर्व वे पूर्णतः अनाथ और अनिकेतन थे। यह समाज ऐसा क्यों है? जो इतने गौरवशाली अतीत का धनी और इतने विशाल ज्ञान-विज्ञान से समृद्ध है, उसी समाज में कोई भिखारी कैसे बनता है, चोर कैसे बनता है, या कोई बालक अनाथ कैसे हो जाता है? क्या उस अनाथ बालक के प्रति समाज का कोई दायित्व नहीं है? यहाँ व्यक्ति के लिए इतने नियम इतने विधि निषेध हैं क्या कोई विधि निषेध इस समाज के लिये नहीं?

जयदेव ने नींद आने के लिये उठकर एक गिलास पानी पिया। किन्तु बिस्तर आज वह चैन नहीं दे पा रहा था, जो उसे सुला दे। अर्जुन और पांचाली की गाथा में तो एक चमत्कार था, अपवाद होने का। ऐसे कितने अर्जुन पांचाली अभाव उपेक्षा और अपराध के जीवन की कुत्सा से मुक्त हो पाते हैं?

जयदेव के मन में भी बहुत सा विद्रोह दबा पड़ा था। वह भी इस समाज में बार बार भूमिगत रह कर फिर से इसमें प्रवेश करने आया था। जब उसने पहली बार घर छोड़ा था, तो एक बार उसकी भी पूरी दुनिया खाली

हो गई थी। शायद इसीलिये बव्वन की कहानी में उसकी सहानुभूति और रुचि जगी थी। पांची अपराधों के अधम पाताल लोक से अर्जुन को सभ्य मानव-लोक में आने के लिये संघर्ष की प्रेरणा तो बनी, किन्तु बव्वन का यह संघर्ष और संघर्ष का प्रयोजन भी धन्यता का पात्र है।

उसे नींद नहीं आई और पिछले जीवन की कुछ बातें उसके मानस-पटल पर उभरने लगीं।

अपराध कौन नहीं करता ?

एक बार भूमिगत होने के लिये जयदेव ने जेब टटोली और स्टेशन की ओर रवाना हो गया। पहले वह कोटा तक पहुँचा, फिर उसने रतलाम का टिकिट लिया और बिना किसी सामान के फ्रन्टियर मेल में जा बैठा।

रतलाम में उसकी कोई जान पहचान न थी और यही वह चाहता था, इस अनजान दुनिया की भीड़ में खोना। किन्तु अभी कुछ भी पास न होते हुए भी जेब थोड़ी बहुत सलामत थी, इसलिये उसने होटल में खाना खाया, और सोने के लिए धर्मशाला में चारपाई लेकर रात बिता ली।

दूसरे दिन जब वह बम्बई की तरफ के स्टेशनों की किराया सूची रत-लाम स्टेशन पर देख रहा था तो उसने हिसाब लगाया कि अब वह टिकिट-युक्त यात्री के रूप में दोहद से आगे नहीं पहुँच सकता। दोहद ही सही। वह गाड़ी में बैठा और दोहद उतर कर उसने अपनी जेब खाली की।

यहां भटकने के सिवा उसे और कोई काम न था। वह कुछ देर कस्बे के बाजार में घूमा, जहां अधिकांश दुकानदार बोहरा सम्प्रदाय के थे। इसके बाद पानी के लिये खाली घड़े लेकर जाती एक स्त्री के पीछे चलता हुआ, वह दोहद के (जिसका उच्चारण वहाँ के लोग दाहोद जैसा कुछ करते हैं) तालाब पर पहुँच गया।

सुबह दस बजे के आस पास का समय था और जयदेव का इरादा उस तालाब में नहाने का था। तालाब के पानी की गंदगी देख कर इसका साहस उसमें मुँह तो क्या, पैर धोने तक का न हुआ। वह वहीं छाया की जगह देख कर बैठ गया, दूसरों को नहाता धोता देखने के लिये। इस समय तालाब पर

जो उपस्थिति थी, उसमें महिलाओं की प्रमुखता थी। रस्सी या संटी थामे कभी कोई पुरुष दिखता, जो अपने गधों या गाय-बैलों को पानी पिलाने आया होता। इक्के दुक्के पुरुष घाट के किसी कोने में या अलग पड़े किसी बड़े पत्थर पर नहाते धोते देखे जा सकते थे।

घाट पर औरतें घर के जूठे बर्तन धो रही थीं, गंदे कपड़े धो रही थीं, अपने सर के बाल धो रही थीं, या नहा रही थीं। वे रोज यहाँ ऐसा करती थीं और उन्हें तालाब के पानी से कोई शिकायत नहीं थी। उल्टे, वे तो हर रोज अपने घरों की गंदगी लाकर इस पानी की गंदगी और बढ़ा रही थीं।

नहाने धोने वालों की इस तन्मयता में जयदेव भी खो गया और कुछ देर के लिए उसका शुचिता-बोध भी तिरोहित हो गया। कपड़ा धोने वाली या बर्तन माँजने वाली औरतों के हाथों की गति में एक लय थी। इन्हीं में से कभी कोई एक अपने काम से निवृत्त होकर तालाब के पानी में डुबकी लगाने पहुंच जाती। इक्की दुक्की कुछ दूर तैर कर भी गई और वापस घाट पर लौट आईं।

कपड़े कूटते हुए या नहाने के बाद गीले कपड़े खोल कर सूखे बदलते हुए कभी कभी हवा का कोई शोख झोंका आता और इन बहू बेटियों के वे अंग उघाड़ जाता जिन्हें सभ्यता ने ढंकना सिखाया है। जयदेव इस समय अध्यात्म-ग्रन्थों में वर्णित आत्मा के तटस्थ, कूटस्थ, अनासक्त भाव की सदेह मूर्ति बना बैठा था। उसे लग रहा था, जैसे घाट की इस मल्हार राग पर सृष्टि का अनंत मौन ताल दे रहा है।

जयदेव को आभास हुआ जैसे जीवन और सृष्टि के कुछ रहस्यों की गाँठ खुलने लगी है। देह की आवश्यकतायें जीव को कर्म के लिये प्रेरित करती हैं, अन्यथा वह निश्चेष्ट पड़ा रहे। जिन अंगों की झलक उसे मिल रही थी, उन्हीं का आकर्षण जीवन की रचना का मूल है।

वह न जाने कितनी देर वहां बैठा रहा। घाट की भीड़ छँटने लगी, सूर्य सर पर आ गया और तालाब की लहरें बैठीं, तो जयदेव उठा। महाजनो येन गतः स पंथः, उसने भी पानी के ऊपर जमी गंदगी को हाथ से हटाया,

और पानी में कुछ कदम आगे बढ़ कर मुंह हाथ धोये फिर निस्संकोच भाव से उसी पानी को मुंह में लेकर कुल्ले किये।

तालाब से उठकर वह पूछते पूछते नगरपालिका के कार्यालय में पहुंचा और उसने एक अनाम यात्री के रूप में वहां यह प्रस्ताव लिखित रूप में दिया कि इस नगरी का यह सार्वजनिक जलाशय साफ रखा जाये।

जयदेव अभी जग रहा था और अपने प्रतीत में खोया था।

दोहद से यह अनाथ यात्री, जब रेल में बैठा, तो वह पूरी तरह भूमिगत हो चुका था। इस भवसागर को पैसे के जहाज से ही पार किया जा सकता है। जयदेव पूर्णतः मुद्राहीन था, और उसकी यह रेल यात्रा टिकिट-हीन।

जीवन का व्यापार रेल के उस छोटे से डब्बे में भी चल रहा था। शौचालय व्यस्त था, क्योंकि उसके द्वार पर प्रतीक्षारत दो व्यक्ति खड़े थे। कुछ लोग ऊंघ रहे थे, कुछ ऊपर की बर्थ पर जगह देख कर सो गये थे। कुछ लोग घुटनों पर तौलिया बिछा कर ताश की बाजी लगाये हुए थे। एक तरफ कटोरदान खुल कर उसमें से खाना निकल रहा था, दूसरी तरफ थर्मस में से गरम चाय या कॉफी निकाली जा रही थी। एक यात्री खिड़की खोलना चाहता था, उसे धूम्रपान के प्रदूषण से बचना था। पास बैठा दूसरा यात्री खिड़की बंद रखना चाहता था, उसे आती हुई हवा के झोंके ठंडे लग रहे थे। कुछ लोग आपस में झगड़ा कर रहे थे, कुछ परिचयों का आदान प्रदान करके मेल।

अकेला जयदेव रेल में बस बैठा था और कुछ नहीं कर रहा था। जो करना था, रेल खुद ही कर रही थी क्योंकि रेल बम्बई जा रही थी। बम्बई के आगे धरती का छोर आ जाता है, समुद्र में जाने के लिये बड़े विधि-विधान हैं। इसलिए बम्बई अपने आप में एक मंजिल है।

जयदेव को याद आया, बम्बई कर्मोरिन के राजा की शादी के अवसर पर दहेज में दिया गया कभी मछुओं का एक छोटा सा टापू था। अब बम्बई को दहेज में नहीं दिया जा सकता। यह देश की सम्पन्नता का, युवकों और साहसी व्यक्तियों की महत्वाकांक्षाओं का नगर है। इस गाड़ी में भिखारी भी चलते हैं, कुछ चोर उठाईगीर भी इन्हीं की तरह एक स्टेशन पर चढ़ कर दूसरे पर उतर जाते होंगे। यह गाड़ी फिल्मी दुनिया के कुछ दीवाने भी अपने साथ बम्बई ले जा रही होगी।

गाड़ी चली जा रही थी।

बड़ी छोटी सी बात थी। उसे एम० ए० परीक्षा की फीस भरनी थी, इन्तजाम नहीं हुआ और जयदेव सीधा गाड़ी में बैठ कर चल दिया। नहीं, और भी कोई बात होगी। क्या कोई इतनी सी बात पर ही भूमिगत हो जाता है?

शायद, वह बात कहीं बहुत गहरे जयदेव के अंतर्मन में थी। बचपन में उसने देखा था, कुल्लो रास्ते में छूट गई। उसने स्कूल में मित्र बनाये, वे भी छूट गये। डाक्टर के बेटे विजय की चोट का बचपन में उसने जो इलाज किया था, उसकी याद अभी है। किंतु याद ही है। कहां हैं विजय, हंडू और गंगा-देई? उसने हर साल स्कूल बदले और हर साल उसे मित्र बदलने पड़े।

बचपन में कुल्लो याद आती थी। इन दिनों बिन्दो याद आती थी। बिन्दो को उसने विष्णु की शादी पर देखा था। विष्णु उसका सहपाठी था, और बिन्दो विष्णु की पत्नी राज की रिश्ते की बहिन। शादी के अवसर पर, जैसा हो जाता है, दोनों में कुछ चुहल हुई थी और शादी के बाद विष्णु और राज ने जयदेव की बिन्दो के साथ बात चलाने का सूत्रपात किया था।

जयदेव के माता-पिता ने इस संबंध को स्वीकार नहीं किया। किन्तु जयदेव मन ही मन यह संबंध स्वीकार कर चुका था। जब उसके पिता ने

उसका कहीं और संबंध तय किया, तो जयदेव विद्रोह कर उठा और घर छोड़ कर भाग लिया। उसके बाद वह लौटा तो सही, किन्तु अपने परिवार का सदस्य बन कर नहीं। उसकी पढ़ाई का एक साल बिगड़ गया था और उसने कहा था कि वह अलग ही रह कर पढ़ाई, या उसे जो कुछ करना होगा, करेगा।

जयदेव के पिता पुराने ढंग के और अनुशासन प्रिय व्यक्ति थे। वे घर को अपना गढ़ कहते थे और वहां मनमानी करते थे। उनका व्यवहार जयदेव की माँ के प्रति भी अच्छा न था। जयदेव ने एक बार जबान खोली, तो वह खुली ही रही और वह बात बात पर बोलने लगा। इसलिए रोज रोज की कहल से बचने के लिए जयदेव के पिता ने भी जयदेव का घर से अलग रहना स्वीकार कर लिया था। इस बीच शुभचिन्तकों द्वारा पिता-पुत्र के बीच संधि के दो-चार प्रयास असफल भी सिद्ध हो चुके थे और इस प्रकार जयदेव परिवार से अलग अस्तित्व बना चुका था।

एम० ए० की पढ़ाई जयदेव स्वेच्छा से कर रहा था, क्योंकि बी० ए० के परिणाम से वह बहुत प्रोत्साहित हुआ था। जयदेव के पिता भी उसी नगर में ही थे, किन्तु वे जयदेव को आगे पढ़ाई व्यर्थ मानते थे। उनका कहना था, जयदेव को नौकरी करनी चाहिये और मां-बाप की सेवा करनी चाहिये। ऐसी स्थिति में फीस मांगने घर पर जाना निरर्थक होता। जयदेव ने कई बार यह महसूस किया था कि उसके पिता ने उसके जीवन में अनावश्यक अवरोध खड़े किये हैं, और इसी कारण समाज की वर्तमान व्यवस्था के प्रति उसके मन में विद्रोह था। फीस की व्यवस्था न होने पर उसके मन का तनाव टूटने के बिन्दु के निकट आ पहुंचा और उसने दूसरी बार भूमिगत होने का फैसला कर डाला। पहली बार जब वह गायब हुआ था, सिर्फ घर से गायब हुआ था। इस बार वह पूरा समाज छोड़ कर आया था।

"टिकिट।"

जयदेव की विचारधारा टूटी और उसने बताया कि उसके पास टिकिट नहीं है। यह कहते ही जयदेव कई उत्सुक दृष्टियों का केन्द्र बन गया। टिकिट चेकर जयदेव के पास ही बैठ गया।

"आप कहां से आ रहे हैं ?"

"दोहद से ।"

"जाना कहां है ?"

"कहीं भी · · · · · अँः, बम्बई ।"

"फिर आप," चेकर महोदय ने एक किताव खोल कर किराया देखा, रसीद की कापी पर पेन्सिल से कुछ हिसाब लगाया और कहा, ६३ रुपये ४० पैसे निकालिये ।"

"वह भी मेरे पास नहीं हैं ।"

चेकर महोदय ने जब तक बड़ौदा स्टेशन आया, जयदेव को सब प्रकार की कानूनी चेतावनियां दे डालीं और चार्ज देने को कहा और चार्ज वसूल होता न देखकर उसे बड़ौदा स्टेशन पर उतारकर गेट पर खड़े टिकिट कलैक्टर के हवाले कर गया ।

जब गेट पर से यात्रियों की भीड़ खत्म हुई, तो जयदेव को बड़ौदा के टिकट कलेक्टर्स रूम में ले जाया गया । जयदेव की शक्ल सूरत भले मानुसों जैसी होने की रियायत के रूप में चार्ज की राशि ६३ रुपये ४० पैसे से घटा कर ३३ रुपये बीस पैसे कर दी गई, जो कि पेनल्टी सहित-न्यूनतम ठहरती थी ।

"यह किसी ऐसे वैसे टी० टी० का नहीं, द्विवेदी का केस है, वरना हम आपको छोड़ देते । और इस न्यूनतम चार्ज की हमने रसीद भी बना दी है । अगर आप किसी तरह यह रकम जमा कर दें तो ठीक है—आपके पास सामान भी नहीं है—वरना हमें मजबूर होकर आपको पुलिस के हवाले करना पड़ेगा ।"

जयदेव जो अब तक अपने में खोया, एक तमाशबीन की तरह सारी बात देख रहा था, कुछ सतर्क हुआ । उसे अपनी स्थिति का भान हुआ । यदि वह विना टिकट रेल-यात्रा के अपराध में जेल जाता है तो कोई उसका नाम शहीदों में नहीं लेगा । कानून विना आन्दोलन किये नहीं तोड़ना चाहिए । उसने कहा, "आप मुझे पुलिस के हवाले क्यों करेंगे ?"

"बिना टिकिट यात्रा करने के अपराध में ।"

"और यदि मैं तैंतीस रुपये जमा करा दूँ, तो आप मुझे छोड़ देंगे ?"

"बिल्कुल।"

"किन्तु तब आपने मुझे दण्ड कहाँ दिया ? आप तो मुझे तब दण्ड देना चाहते हैं, जब मैं रुपया न दूँ। मेरा बिना टिकिट होना असली अपराध नहीं है। अपराध तो यह है कि मेरे पास तैंतीस रुपये बीस पैसे नहीं हैं। मैं और कुछ नहीं कह सकता, आपको केवल यह विश्वास दिला सकता हूँ कि यदि मेरे पास रुपये होते, तो मैं बिना टिकिट रेल में न बैठता।"

"फिर आप रेल में क्यों बैठे ?"

"इसलिये कि मेरा जाना जरूरी था। कभी-कभी जरूरत इतनी बड़ी हो सकती है कि यात्रा टिकिट के बिना भी करनी पड़े। ऐसा कोई कारण तो आप भी मानेंगे ?"

रेलकर्मचारियों की भी अपनी अलग किस्म बन जाती है। आदमियों को ढोते ढोते वे आदमी पहचानना जान जाते हैं। यह परिस्थिति उन्हें विचित्र लगी। इस बिना टिकिट यात्री के बारे में इस बात का तो उन्हें भी विश्वास था कि यदि उसके पास रुपये होते, तो वह बिना टिकिट न होता। ऐसा कौन सा कारण है, जिसने इसे बिना रुपये, बिना टिकिट बम्बई जाने को बाध्य किया ?

टिकिट कलेक्टर्स रूम में उस समय चार टी० सी० थे। वे चारों इस बात पर सहमत हो गये कि 'मोमो' देकर जयदेव को पुलिस के हवाले न किया जावे। उन्हें यह आदमी पढ़ा लिखा और दिलचस्प लगा। इसलिये चारों ने अपनी जेब से निकाल कर तैंतीस रुपये बीस पैसे जमा करवाये और उसे चाय पिलाने के लिये ले गये।

जयदेव और बातें करता रहा, किन्तु व्यक्तिगत प्रश्नों के उत्तर में उसने केवल यही बताया कि वह अध्यात्म की व्यावहारिक शिक्षा प्राप्त करने के लिये दुनिया को इस तरह दुनिया से अलग हट कर देख रहा है।

फिर उन्हीं टिकिट कलेक्टरों द्वारा जो उसे बिना टिकिट यात्रा के अपराध में जेल भेजने के लिये तैयार थे, जयदेव को बिना टिकिट बम्बई तक पहुँचाने की व्यवस्था की गई।

धनहीनता और अपराध को विभाजित करने वाली रेखा बाल से भी पतली है, यह विचार लिये जयदेव आखिर नींद को पाने में सफल हो गया।

2

उस रात घर में सुहागरात मनती देखकर विद्रोही को भी रसिकता सूझी और काफी देर तक उन्होंने पत्नी श्यामा को सोने नहीं दिया।

छदामी लाला ने उस रात माथे पर अपनी ललाइन के हाथों बाम लगवाई और सोते हुए बड़बड़ाये। यह तो अच्छा हुआ कि धार्मिक प्रवृत्ति की ललाइन लाला के बाहरी व्यापार से मतलब नहीं रखती थीं, वरना हो सकता है वे उस रात लाला के कुछ राज जान जातीं। कम से कम वे यह तो समझ ही सकती थीं कि लाला को आज जाते जाते इक्यावन रुपये से ठगने वाली कौन थी।

पीयूष उस रात खूँटी तान कर सोया, तो उसने पलक झपकते ही सबेरा किया।

मगर उस रात पेमा ने धन्ना की कस कर खबर ली।

धन्ना खाने पर बैठा, तो देखा रोटी एक तरफ जली हुई, व दूसरी तरफ कच्ची है। एक ग्रास तोड़ कर सब्जी में डुबोया, तो सब्जी नमक की अधिकता से खाई न गई। चिल्लाकर पेमा से कहा, ''यह क्या खाना बनाया है? ले जाओ इसे।''

पेमा ने बिना कुछ कहे थाली उठा ली। बिना खाये पानी पीकर धन्ना ने पेमा से बीड़ी का बंडल और माचिस लाने को कहा, तो पेमा ने धन्ना का कुर्ता उसके ऊपर पटक दिया।

कुर्ता ऊपर पटकने और बिना गुड़ दिये थाली खींच लेने से धन्ना भीतर ही भीतर सुलग रहा था। मगर वह ऊपर से ठंडा रहा और बायें हाथ की दो उँगलियों में बीड़ी लेकर दाहिने हाथ में जलती हुई दियासलाई से बीड़ी सुलगाते हुए उसने कहा, ''आज पांची विदा हो गई।''

धन्ना की नजर बीड़ी पर थी, वर्ना जिस दृष्टि से पेमा ने उसकी ओर देखा था उससे आँख मिलती तो शायद वह भस्म हो गया होता, या उसकी आँख फूट गई होती।

बीड़ी का कश लेते हुए खांसते खांसते उसने फिर कहा, "अब छदामी लाला की अंटी तभी ढीली होगी, जब आश्रम में दूसरी पांची आयेगी। सुनती हो भागवान, उस दिन तेरे लिये रेशमी साड़ी लाऊँगा।"

इस बार पेमा बरस पड़ी। "इस आश्रम के पुण्य के क्या कहने हैं? तुम्हारा आश्रम ही तो आसमान का खम्भा बना हुआ है, वरना आसमान हम जैसे पापियों की दुनिया पर टूट न पड़े। वाह रे धर्मावतारो! एक अभागी की जिन्दगी सुधरी तो इनके कलेजों में आग लगी है!"

चंट शिरोमणि धन्ना मामला भाँप गया। वही तो पेमा को यह कहकर फुसलाता था कि वह उसके साथ घर बसा लेगी तो मौज करेगी और पांची जैसी जिद्दी लड़कियाँ इसी हवेली की दीवारों में बंद सड़ती रहेंगी। आज पांची के विवाह में सब कुछ था, जबकि पेमा की शादी में दूल्हा दुलहिन और पुरोहित सहित कुल चार जने थे और शादी चुपचाप पन्द्रह बीस मिनट में निपटा दी गई थी, क्योंकि लाला उतावले हो रहे थे। उसने सहमते सकुचते कहा, "ऐसी तो कोई बात नहीं। लाला ने तो राजी राजी पांची को विदा किया, सभी मेहमान बुलाये गये, लड्डू बांटे। मैंने भी दौड़ दौड़ कर सब काम किये। कलेजे में आगवाग जैसी तो कोई बात नहीं है।"

"फिर उस थुलथुल लाला के ऐयाशी के अड्डे में पांची की जगह किसी और को लाने की फिकिर काहे की है? ग्यारह जनियाँ तो मौजूद हैं तुम्हारे आश्रम में, उनसे सबर करो।"

"अरी मैं तो तेरी रेशमी साड़ी के बारे में सोच रहा था। लाला इस उमर में भी ...."

"जाओ, जाओ, रहने भी दो। कभी कभी कोयला भी अपने ऊपर चढ़ती पतीली को काली कहने लगता है। एक नीम चढ़ा करेला, एक नीम चढ़ी गिलोय। नहीं चाहिये मुझे ऐसी हराम की साड़ी।" पेमा उच्च स्वर में बोली।

'अरे, अरे,' करते हुए धन्ना उसे चुप करने की कोशिश में उलझ गया, क्योंकि जब धन्ना ने पुचकारते हुए उसके कंधे पर हाथ रखना चाहा, तो पेमा ने उसका हाथ झटक दिया। धन्ना ने हाथ पकड़ना चाहा, किन्तु पेमा के तेवर देख, पीछे हट गया।

"तुम दोनों ने मुझे खराब किया। तुम दोनों की नजर पांची पर भी थी, लेकिन पांची ने खुद को बचाये रखा। तुम्हारे लिये तो खैर वह अंगूर खट्टे हैं, वाली बात थी। उसने लाला को भी घास नहीं डाली और जितनी बार लाला ने हाथ पैर निकालने की कोशिश की, उतनी ही बार उसने लाला को उलटे अपनी ही जेब में हाथ डालने पर मजबूर किया।"

"धरम से पेमा रानी, मैंने तो बस तुम्हारे सिवा और किसी की तरफ देखा ही नहीं।"

"हाँ, हाँ। मालूम है, पांची से डाँट खाने के बाद तुमने एक बार उसकी तरफ और देखा था, मगर जब उसने चप्पल उतार कर हाथ में ली, तो तुम सीधे हो गये।"

खिसिया कर धन्ना बोला, "क्या उलटी सीधी बातों पर तुम भी विश्वास कर लेती हो? क्या मैंने तुम्हें इसलिए उसके पास भेजा था कि वह जो कहे मान लो? मैंने तो तुम्हें उसकी सी आई डी के लिये भेजा था।"

"और मैंने तुम्हे दो चीजें ऐसी बताईं कि तुम समझदार होते तो सब जान लेते। मैंने तुम्हें पाँची के पर्स बताये थे। नम्बर दो, मैंने तुम्हें जीने का सड़क पर खुलने वाला झरोखा दिखा दिया था।"

"झरोखे से क्या मतलब है?"

"अब पांची चली गई, तो बताने में कोई हर्ज नहीं। वह लाला से झटके हुए रुपये पर्स में रख कर सड़क पर खड़े अपने प्रेमी के पास इस झरोखे में से फेंक दिया करती थी। मैंने पूरी सी आई डी की है, और पर्स फेंकते हुए तो नहीं, एक दूसरे से इस तरह दूर से मिलते हुए उन्हें खुद देखा है। पांची ने मुझे अपना प्रेमी दिखाया भी था। वही दूल्हा बनकर आज शादी करने आया था।"

"और तूने अपने खसम से यह सब छिपा कर रखा ? आज बता रही है।"

"वाह रे खसम ! तुम तो कुछ छिपाना जानते नहीं हो। तुमने तो अपनी बीबी तक को लाला से नहीं छिपाया।"

"अरी भागवान, वे तो मालिक हैं।"

"बस बस, रहने दो। तुम्हारी तो उमर गुजर चुकी है उस मोटे लाला की जूठन खाते।"

धन्ना ने बात आगे नहीं बढ़ाई। अपनी तिरस्कृत थाली की तरह वह चुपचाप उठ गया और खाट पर पड़ गया।

पेमा अलग सोई। उसे पांची पर कोई गुस्सा नहीं था। अपने आप पर था, जिसने धन्ना जैसे टेढ़े बांके खूसट की चिकनी चुपड़ी में आकर खुद ओखली में सर दिया था। पांची ने तो उसे विश्वास में लेकर उसे न सिर्फ सब कुछ बता दिया था, बल्कि अपने प्यारे की झलक भी दिखा दी थी।

3

"आज तो पकौड़ियों का मौसम है," पीयूष ने कहा।

"और रुबाइयों का" कवि 'घायल' ने जोड़ा।

"और प्यालों का," उर्दू के शायर जख्मी ने बात पूरी की।

उपस्थित कविमित्रों ने बरसात की इस सुहानी संध्या के रंगारंग कार्यक्रम का मुक्त कंठ से समर्थन किया। प्रत्याशा में तरंगित एक कवि ने कहा, "घटा के नाम जाहिदों ने जाम थाम लिय।"

"दर्द घुमड़ा तो जहर से दवा का काम लिया," दूसरे कवि ने कहा।

"फिर सुराही से उतर आई एक लालपरी।"

मेरे ओठों से आ लगी, मेरा सलाम लिया। "तीसरे ने फटाफट तुक भिड़ाकर चार लाइनें पूरी कीं और कहा, "रुबाई हो गई, अब पकौड़ी और प्याला भी होना चाहिये।"

और बोतल और पकौड़ियों के साथ इस तरह कवि-गोष्ठी शुरू हो गई।

ये कविमित्र आपस में मिलते तो गद्य जहाँ तक सम्भव हो कम ही बोलते थे। और जो पद्य बोला जाता था, उसमें तुक पकड़ी जाती थी, काव्य को आना होता था तो कभी अनायास खुद ही इस तरह की सामूहिक कविता में आ जाता था। ऐसा मौका कम ही आता था, जब कविगोष्ठी में बोतल खुले। किन्तु कुछ कवि मूड बनाने के लिये चुस्की लगाना जरूरी मानते थे, कुछ लोगों के लिये यह घूंट इतनी जरूरी तो नहीं होती थी, किन्तु कुछ समय तक उनके काव्यपाठ में सहायक होती थी। कुछ ऐसे थे, जो कविता के इस मादक वातावरण में पहली बार प्याले को मुहँ से लगाने में ऐतराज नहीं मानते थे। मगर बाकी बचे लोगों के लिये उसी रंग के शर्बत की व्यवस्था करनी पड़ती थी। कुछ कवि और एक शायर इस शर्बत की बोतल में हिस्सेदार बनते थे। देखा यह गया था कि इस प्रकार की इक्की दुक्की गोष्ठी फौरन जम जाती थी और अच्छी जमती थी। सूखी कविगोष्ठियों में कभी-कभी कविता पाठ का स्थान चुटकुला पाठ ले लेता था और कविगोष्ठी अट्टहास गोष्ठी में परिवर्तित हो जाती थी।

यह रंगीन गोष्ठी हास्य रचनाओं के लिये उपयुक्त नहीं थी। जब एक हास्य कवि बोलने आये 'घरवाली से अच्छी साली' तो दूसरों ने उन पर फिकरे कसने शुरू किये मगर उन्होंने व्यंग सुनाया, तो 'वाह' 'वाह' की धूम मच गई। डाक्टर मेहता कवि नहीं थे, किन्तु उनके बिना कोई भी गोष्ठी अधूरी रहती थी। उनका अध्ययन और चिन्तन व्यापक और गहन था और कविता के वे अच्छे मर्मज्ञ थे। व्यंगकार की पंक्ति, जिस पर दाद मिली थी, यों थी।

गधा भले ही अफसर हो, पर
अफसर गधा नहीं हो सकता।

डा० मेहता ने लोगों को रोककर बताया कि अफसर बनने से पहले प्रतियोगी परीक्षायें पास करनी होती हैं, यूनिवर्सिटी की डिग्रियाँ लेनी होती हैं। इसलिये यदि इस पंक्ति में अफसर की जगह 'मंत्री' फिट कर दिया, जाये तो उनके विचार से वेहतर रहेगा और उन्होंने यह संशोधित पंक्ति फिर पढ़वाई।

गधा भले ही मंत्री हो, पर

मंत्री गधा नहीं हो सकता।

दुबारा 'वाह' 'वाह' के साथ कविसहित सभी ने यह संशोधन स्वीकार कर लिया। कवि 'घायल' पिछले तीन चार माह अस्पताल में रहकर आये थे और उनकी चिकित्सा के लिये पाँच सौ रुपये की राशि मुख्यमंत्री कोष से प्राप्त करने के लिये प्रदेश के सभी साहित्यकारों ने 'बात का धनी' के माध्यम से बहुत जोर लगाया था। कवि घायल दारू को दवा मानकर तीन खुराक गले में डाल चुके थे। अपनी बारी आई समझकर बोले —

सूली हमें चढ़ा दो, हां हम अपराधी हैं
इन्कलाव की आग लगाने के आदी हैं।

कवि घायल को शायद अपनी कविता की सभी पंक्तियां समान रूप से पसंद थीं, इसलिये वे हर पंक्ति को दो दो बार पढ़ रहे थे। इनमें से कुछ पंक्तियाँ सभी को पसंद आईं। इसके बाद जख्मी ने नज्म पढ़ी--"मँहगाई में इन्कलाव काफी सस्ता है!"

पीयूष की कविता मुक्त छन्द में थी 'ठंडी सुबह: उनींदा सूरज।' डा० मेहता सहित सभी को कविता बहुत पसंद आई। कविता में धरती पर छाये हुए घने कोहरे, धुएं और धुंध के विरुद्ध बाल सूर्य के संघर्ष का प्रतीकात्मक चित्रण था।

कविगोष्ठी कविताओं के एक, और गिलासों के तीन दौर हो चुकने पर झूमने लगी थी। एकाध बार का अनुभव था कि ऐसे अवसर पर दूसरा दौर आने पर गोष्ठी लड़खड़ाने लगती थी। इसलिये डा० मेहता ने कहा कि साहित्य और सौहित्य अधिक नहीं होने चाहिये।

कभी कभी गोष्ठी में कविताओं का दौर समाप्त होने पर लोग डा० मेहता से भी कुछ सुनना चाहते थे। आज भी लोगों ने डा० साहब से आग्रह किया कि वे कुछ कहें।

डाक्टर मेहता ने कुछ शब्द गोष्ठी में पढ़ी गई कविताओं के विषय में कहे और बोले, "ऐसा लगता है कि आस्था-संकट के इस युग में मनुष्य अब विज्ञान पर भी अपनी आस्था टिकाये नहीं रह सकेगा। कारण कार्य संबंध विज्ञान की एक आधार शिला है, जो अंतिम विश्लेषण में ढह जाती है।

"किन्तु आस्था का भूखा मनुष्य अपने में से ही कुछ ऐसा खोज लेगा जिस पर वह आस्थित हो सके। आज साहित्य कुछ भटका है, किन्तु मेरा विश्वास है कि वह सही मार्ग पाने के लिये भटक रहा है। मनुष्य से न पत्थर पूजा जायेगा न कानूनी अनुशासन। मनुष्य में स्वयं अनन्त शक्तियों का वास है। एक दिन मानवता ही मनुष्य की आस्था का केन्द्र बनेगी और यह बात हमें बताने और समझाने में किसी दिन विज्ञान नहीं, साहित्य ही समर्थ होगा।"

गोष्ठी से उठकर डाक्टर मेहता घर रवाना हुए तो स्वयं को अपराधी सा महसूस कर रहे थे। आज की गोष्ठी अनायास ही जुड़ गई थी, और उन्हें घर पहुँचने में देर हो गई थी। यदि पूर्व सूचना होती तो लीला बेन उनके साथ ही गोष्ठी में बैठतीं। सामान्यतः वे घर के बाहर चषक पान नहीं करते थे, आज यह भी हो गया था।

घर में घुसे, तो देखा पद्मा और शिरीष के साथ उनकी लीलू ड्राइङ्गरूम में प्रतीक्षा की मूर्ति बनी बैठी है। उनके आते ही लीला बेन ने घड़ी की तरफ नजर उठाई और बोली, "आज तो ग्यारह बजा दिये।"

लीला बेन ने इस बीच न जाने कितनी बार घड़ी की ओर देखा था। उनके यहाँ खाना बनाने के लिये नौकर कभी नहीं रखा गया। दोनों पति पत्नी मिल कर खाना बनाते थे। डा० मेहता सिर्फ रोटी सेकने का काम करते थे, किन्तु बाकी समय भी रसोई में उनकी उपस्थिति जरूरी होती थी।

डा० मेहता बोले "आज पीयूष के यहाँ बैठे थे, बरसात होने लगी। चार छह कवि भी बैठे थे। उन्हें बरसात का आज का मौसम बड़ा सुहाना लगा और कवि गोष्ठी जम गई। सच मानो, जल्दी खत्म करके भागा आ रहा हूँ।"

रसोई की ओर उठते हुए लीला बेन ने कहा कि आज के आनन्द से वे वंचित रह गईं और ग्यारह बजे बाद परिवार का खाना बनना शुरु हुआ।

सबसे पहले पद्मा और शिरीष को फ्रिज में रखी सब्जी गरम करके रोटियां खिलाकर सुलाया गया, और जब पूरा खाना बन गया तो दोनों साथ खाने बैठे।

खाना खाते समय मेहता साहब ने कहा, "एक बार घायल को बुलाकर तुम कहो। अगर उसने शराब न छोड़ी तो वह ज्यादा दिन तक जियेगा नहीं।"

"घायल वही है न, जिसे पिछले दिनों मुख्यमन्त्री कोष से चिकित्सा–सहायता मिली थी ? मैं तो कहती हूँ, उसकी कविता भी उसकी जान की दुश्मन है।"

"प्रकट में तो उसको कविता अत्याचारी की जान की दुश्मन है। तुम्हारे विचार से वह खुद की जान की दुश्मन कैसे है ?"

"वह अपनी कविता में आग भरने के लिये जितनी जी-जान लड़ाता है, उतना शारीरिक श्रम करे तो उसका शरीर स्वस्थ रहे। फिर भी आग उसके शब्दों में उतनी नहीं भर पाती, जितनी उसके स्वर में।"

हँसकर डाक्टर मेंहता ने यह बात स्वीकार की और कहा कि आज जब घायल अपनी कविता 'इन्कलाब की आग लगाने के आदी हैं' बोलकर बैठा, तो जख्मी ने जवाबी कविता सुनाई 'मंहगाई में इन्कलाब काफी सस्ता है' घायल ने इस बीच जख्मी का गिलास खाली करने का मौका ताड़ लिया और दोनों में होने वाली तकरार टल गई।

4

डा० पी० डी० मेहता शहर के कालेज में दर्शन शास्त्र पढ़ाते थे। लीला-बेन उनकी बी० ए० की सहपाठी थीं, और दोनों ने बी० ए० करते ही प्रेम-विवाह कर लिया था।

जयदेव डा० मेहता का विद्यार्थी रह चुका था। भारतीय दर्शन की कई मान्यताओं के विषय में जयदेव का डा० मेहता से लम्बा विवाद चला था। अपने साम्यवादी ज्ञान के आधार पर जयदेव बहुत सी बातों को गलत मानता था, और काफी मेहनत करके डा० मेहता ने उन मान्यताओं का तार्किक आधार

जयदेव के समक्ष स्पष्ट किया था। उन दिनों जयदेव मेहता परिवार के बहुत निकट आ गया था। जयदेव ने डा० मेहता द्वारा लीलाबेन को लिखा गया पहला प्रेमपत्र भी पढ़ा था, जिसमें लीलाबेन को उन्होंने सगुण ब्रह्म के रूप में चित्रित किया था। डा० मेहता शादी के दिन से आज तक केवल एक बार दो दिन घर में अकेले रहे हैं, और उस समय जयदेव ने इस विद्वान और विचारक का भावुक रूप पहली बार देखा था, डा० साहब ने रोटियां सेंकते सेंकते उस दिन अपने छात्र जीवन के कई प्रसंग जयदेव को सुनाये, जो सब उनकी लीलू के आसपास ही केन्द्रित रहे।

लीलाबेन एक सम्पन्न परिवार की लड़की थीं। डा० मेहता पढ़ने में तेज थे, इसीलिये घर की विषम परिस्थिति के बावजूद इतना पढ़ गये थे। जब मेहता ने लीलाबेन से विवाह किया, तो शुरू के दो तीन साल नवदम्पति को बड़े कष्ट में गुजारने पड़े। अब तो डा० मेहता स्वयं भी अच्छा वेतन पाते थे और लीलाबेन के परिवार की नाराजगी भी दूर हो चुकी थी। गर्मी की छुट्टियाँ प्रायः हर साल मेहता अपनी ससुराल में ही बिताते थे, और वे ससुराल से आते तो उन्हें कोई भारी-भरकम उपहार भी मिलता था। डा० साहब अपने विवाह की रजत जयन्ती मना चुके थे। और इन 25 वर्षों में दुनिया का एक भी आदमी ऐसा नहीं मिला जो कभी मेहता दम्पति के मध्य तनाव या तकरार का साक्षी रहा हो।

जयदेव से मेहता के बारे में काफी कुछ सुनकर पीयूष की उनके बारे में उत्सुकता जागृत हुई थी और अपने सरल निष्कपट स्वभाव के कारण वह शीघ्र डा० मेहता का स्नेहभाजन बन गया था। पीयूष अक्सर कहा करता था कि जयदेव ने मेहता से उसे मिलाकर उस पर बड़ा उपकार किया है।

आज जयदेव डाक्टर मेहता से मिलने आया। सुबह साढ़े नौ बजे का समय था और पद्मा-शिरीष स्कूल जा चुके थे। मेहता साहब नहा-धोकर अपने लिये और लीलाबेन के लिये किमाम का पान तैयार कर रहे थे। एक पान उन्होंने जयदेव के लिये भी बनाया और पूछा, "इस बार तो बहुत दिन

बाद आये। क्या वहुत व्यस्त रहने लगे हो ? लीलू, पान।·...'' और उन्होंने अपना पान मुँह में दवा लिया।

''जी, बिना कुछ किये व्यस्त रहने का अभ्यास इस पत्रकारिता के कारण होता जा रहा है। जब परेशान होता हूँ तो डाक्टर साहब की याद आती है। वरना सुबह-शाम एक ही चिन्ता रहती है, अखबार के लिये धन जुटाना।''

डाक्टर मेहता ने पीक भरे मुँह से कहा 'भाई, तुम्हारा अखबार तो इन दिनों पहले से ठीक निकल रहा है। मोटर-गाड़ियों का पन्ना हटने से और हरिमोहन की नाराजगी से कुछ ताजा सामग्री मिल रही है।...' मेहता साहब के लिये अब पीकदान का प्रयोग आवश्यक हो गया था, सो उन्होंने किया और जयदेव से रसोई में ही चलकर बैठने को कहा। बोले, ''वहीं बात करेंगे, और जहां मदद की जरूरत पड़ेगी, लीलू से लेते रहेंगे। है न ?''

लीलाबेन ने हँसने से पहले पीकदान में पीक थूकने की सावधानी बरती और कहा, ''डाक्टर साहब का बस चले तो क्लास में भी मुझे ले जाया करें। प्रिन्सिपल शर्मा इन्हें सिर्फ तीन पीरियड देते हैं, जिनके बीच में ये दो बार घर आ जाते है।''

बहुत दिनों बाद आने के उपलक्ष्य में जयदेव से साथ ही भोजन करने का अनुरोध किया गया और मम्मी (लीलाबेन को जयदेव मम्मी ही कहता था) ने उसकी पसंद की कढ़ी बनाने की तैयारी शुरू कर दी। ''हाँ जयदेव, अब सुनाओ, इस बार क्या परेशानी है ?''

''इस बार'' थोड़ा सकुचाते हुए जयदेव बोला, ''परेशानी पांचाली को है, और पांचाली की परेशानी पेमा को लेकर है''।

''यह पेमा कौन ?'' लीलाबेन ने पूछा, फिर स्थिति की व्याख्या की, ''पेमा की परेशानी पांचाली को, पांचाली की जयदेव को और जयदेव की परेशानी इस तरह सर ही सर चलती हुई अब आपको सौंपी जा रही है।''

जयदेव ने बताया कि पांचाली छदामी लाला और धन्ना नाई के जाल से बच निकली, किन्तु पेमा, जो उसी अबला सदन की एक दूसरी सुन्दर कन्या

थी, उसमें यह मानकर जा फंसी कि आश्रम के कुंए से गृहस्थी के तालाब में शायद अधिक आजादी मिल सके। पेमा अब लाला के घर में मालिश वगैरह का काम छोड़ बैठी है और धन्ना ने उसे पीटना शुरु कर दिया है।

"एक दिन पांचाली को पेमा बाजार में मिल गई। दोनों ने एक-दूसरे से हाल पूछे तो पांचाली ने अपनी प्रसन्नता के समाचार दिये और पेमा ने रो-रोकर उसे बताया कि विवाहित होते हुए भी वह एक वेश्या जैसा जीवन बिताने पर बाध्य है और दोनों बूढ़ों के समक्ष उसे अनिच्छा से स्वयं को अर्पित करना होता है। पेमा ने लाला के घर काम करना छोड़ा तो धन्ना उससे चिढ़ गया है और बात-बात पर डंडे बरसाने लगा है।"

डा० मेहता ने पान का पीक थूका और बोले "लीलू, यह मामला तो तुम्हारे मार्ग-दर्शन के लायक है। इन बातों का कोई इलाज किताबों में नहीं है।"

"तो कोई ऐसी किताब लिख डालिये, जिसमें इन बातों का इलाज हो। आजकल समाज इन समस्याओं से अधिक चिंतित है, दर्शन की गुत्थियाँ उसे कम परेशान करती हैं।"

डा० मेहता ने जयदेव से पूछा "क्या तुमने पेमा की 'केस-हिस्ट्री' अध्ययन की है ? वह अबला-सदन में आने से पूर्व क्या थी ?"

"लाला के किसी आसामी में कर्ज के रुपये अटके थे। गाँव में उस साल अकाल में उलटा-सीधा खाकर कई लोग मर गये थे। जब छदामो लाल और धन्ना नाई उस गाँव में वसूली के लिये पहुंचे तो देखा, तीन सौ रुपये मूल के और साढ़े सात सौ रुपये ब्याज के खाकर पेमा के माँ-बाप यह दुनिया छोड़-कर जाने की तैयारी में हैं। वे तेरह-चौदह साल की पेमा को करीब चार साल पहले अपने साथ लाये थे।"

"हूँ, तो पेमा गाँव की रहने वाली है। पढ़ाई-लिखाई ?"

"उसने दर्जा तीन के बाद स्कूल छोड़ा था, और जो पढ़ा है, वह उसके कभी काम नहीं आया।"

"गाँव में पेमा का कोई है ? उसकी जमीन वगैरह ?"

"गाँव में पेमा का चाचा है, जिसने छदामी लाल द्वारा पेमा को अपने साथ ले जाने पर कोई आपत्ति नहीं की थी, और लाला ने पेमा के चाचा द्वारा जमीन पर कब्जा करने पर ऐतराज नहीं किया था।"

"लीलू, अब तुम बताओ, ऐसी स्थिति में पेमा अपने बारे में क्या कर सकती है ?"

"जयदेव, मेरे विचार से तुम किसी बहाने पेमा के यहां आना-जाना शुरू करो। यदि धन्ना और छदामी लाला को यह पता चलेगा कि कोई समर्थ व्यक्ति पेमा से सहानुभूति रखने वाला है, तो उनके अपराधी मन में आतंक का संचार होगा। पांचाली को भी कहो कि वह पेमा को घर बुलाये और उसके यहाँ जाये।"

डा० मेहता ने इसका समर्थन किया "इन लोगों के मन में समाज का डर होगा, तो इनके आचरण पर अंकुश रहेगा। पेमा को यह महसूस होना चाहिये कि लाला की हवेली और धन्ना के घर के अलावा भी दुनिया बहुत बड़ी है, ताकि उसमें साहस आये।"

ग्यारह बजे डा० मेहता कालेज के लिए घर से निकले। उनके साथ ही खा-पीकर जयदेव बाहर आया तो उसने सोचा, क्यों न कल का काम आज और आज का काम अभी कर लिया जाये ?

जयदेव निराला बाजार के पीछे की गंदी बस्ती में स्थित धन्ना के घर जा पहुंचा। दरवाजा बंद पाकर उसे एक बार संकोच हुआ। इस परिवार से प्रत्यक्ष परिचय नहीं के बराबर था। परोक्ष रूप से पांचाली और अर्जुन के माध्यम से ही उसने पेमा के गत जीवन के विषय में जानकारी हासिल की थी। अर्जुन को इस सिलसिले में पूछताछ के लिये एक बार पेमा के गाँव जाना पड़ा था, क्योंकि पेमा अपने गाँव का नाम और चाचा का नाम तो जानती थी, और कुछ नहीं।

जयदेव ने अनुमान लगाया कि धन्ना संभवतः घर पर नहीं होगा, पेमा अकेली ही होगी। सहमते सकुचाते भी वह चूँकि दरवाजे तक आ गया था, इसलिये उसने दस्तक दी।

एक बार कुछ नहीं हुआ। दूसरी बार दरवाजा खड़खड़ाने पर दरवाजा खुला, तो जयदेव कारण समझ गया। पेमा रो रही थी और द्वार पर आने से पहले उसने मुँह धोकर शकल ठीक करने की कोशिश की थी। उसकी आँखे सूजी हुई थीं।

"मुझे पहचाना ? पांची की शादी में देखा होगा। अन्दर आ जाऊँ ?"

यह सब पेमा को याद दिलाने की जरूरत नहीं थी। पांची ने पेमा से जयदेव की चर्चा की थी और उसे 'एक दुखिया का उद्धार करने वाला देवता' बताया था। पेमा भी दुखी थी, उसे अंदर आने की अनुमति क्यों न देती ?

जयदेव को घर की एकमात्र लोहे की कुर्सी पर बिठाया गया। उसने पेमा को अतिथि-सत्कार के झंझट से मुक्त करते हुए बैठकर बात सुनने के लिए कहा। पेमा वहीं बैठ गई।

"मुझे पांचाली–पांची ने तुम्हारे बारे में बताया था..." जयदेव ने बात शुरू की, पर अटक गया।

"मेरे बारे में ? बताने लायक क्या है मेरे बारे में, बाबूजी ? एक ही बात है कि मैंने आँखें खुली रखकर धोखा खाया है। इन शैतानों को कुछ मैं जानती थी, कुछ पांची ने भी सचेत किया, पर मत अपनी ही मारी गई थी जो इनकी चिकनी-चुपड़ी बातों में आ गई।"

पेमा शायद ठीक कह रही थी। जयदेव को लगा, उसके सामने जो बैठी है, वह इतने सरल स्वभाव की है कि आसानी से सब कुछ मानकर उस पर विश्वास कर लेगी। उसने कहा "यह मुझे मालूम है। तुमने जो कुछ किया, उसके लिये तुमसे अधिक दोषी वे लोग हैं, जिन्हें तुमने अब शैतान के रूप में ठीक-ठीक पहचान लिया है। अबला-सदन के उस घुटे हुए वातावरण से निकलने के लिये शायद कोई भी लड़की वही करती, जो तुमने किया।"

"नहीं बाबूजी ! मेरा ही दोष था। पांची भी वहीं थी, उसने क्यों न इन लोगों की बात मानी ?"

"उसे एक सहारा था। उसके मन में यह आस थी कि एक दिन उसका अर्जुन-बब्बन शायद उसे छुड़ाने आ जाये। तुम और किसकी आस कर सकती थी ?"

"आस नहीं थी, घर अपना मुँह काला करने से तो बच सकती थी।"

"तुम तो बची ही रहती। लेकिन तुम्हे बचे रहने कौन देता ? क्या इन शैतानों ने पांचाली को बिगाड़ने की कोशिश नहीं की थी ?"

यद्यपि पेमा की आँख में आँसू फिर छलके, किन्तु वे पीड़ा के आंसू न थे। जयदेव की यह सहानुभूति उसके दुखते प्राणों के लिये मरहम का काम दे रही थी। वह गिरी, मगर कोई आँख यह देखने वाली भी तो है कि उसे जानबूझकर गिराया गया है। बोली "अपना-अपना भाग्य है, बाबूजी ! पांची बहिन के भाग्य में सुख बदा था। उसे अर्जुन और आप जैसे लोग मिले। मेरे भाग्य में ये दोनों खूसट हैं....."

"नहीं, पेमा ! अपने दुख-सुख का निर्माण आदमी खुद भी करता है। अभी तक जो हुआ है, उसे चाहे भाग्य कह लो, पर आगे जो कुछ होगा, उसमें तुम्हारा भी तो हाथ होगा। उसी को संभालना है।"

आगे क्या होगा ? पेमा सोचती थी, इस जिन्दगी से मौत अच्छी ! सोचती थी, धरती फट जाये, आसमान टूट पड़े या और किसी तरह मौत आ जाये। यह जिन्दगी को, आगे जीने की बातें उससे क्यों की जा रही हैं ?

"और क्या होगा आगे" पेमा बोली, "जो हो चुका, वही इतना है कि अब होने के लिये और कुछ नहीं चाहिये।"

"यह वैराग्य तुम्हें शोभा नहीं देता। अभी तुमने संसार की कुरूपता देखी है, विश्व का वह मनोहारी रूप नहीं देखा, जिसे देखने के लिये कहते हैं, भगवान भी बार-बार धरती पर अवतार लेते हैं। सूरज डूबता है, अंधेरा

होता है, वह भी देखने की चीज है। क्या अबला-सदन में रहते हुए पांची ने दुख के दिन नहीं देखे ? उन दिनों उसे भी तुम्हारी तरह जिन्दगी बोझ लगी होगी। वही पांची आज प्रसन्न है। मैंने तुम्हारी तकलीफ का इलाज ढूँढ लिया है पेमा तुम्हें पांची से मेल जोल बढ़ाया चाहिये।"

इस वार्तालाप की समाप्ति तक पेमा की आंखों की सूजन दूर हो चुकी थी, और जयदेव उसे तसल्ली देकर और पांचाली के यहां आने का निमंत्रण देकर जब लौटने लगा, तो कृतज्ञ पेमा उसके पैरों पर झुक गई।

"कभी कभी, प्रेमा ने कहा इन चरणों की धूल सर पर लगा लेने दोगे, तो मैं जी जाऊँगी।"

5

पेमा के यहाँ से आते हुए जयदेव की भेंट कवि शिव कुमार 'घायल' से हुई, जिनकी मुद्रा से स्पष्ट था कि वे इस समय काव्य की कठिन साधना में लीन हैं। वे आगे के चार कदम का रास्ता देखकर आकाश की ओर अपना कुंचित भ्रू-विक्षेप करते हुए चल रहे थे। जयदेव को देखते ही कहने लगे "आसमान का रंग लाल कर देना होगा, सूरज का बकरा हलाल कर देना होगा।"

कवि ऐसे मौके पर एक रसिक श्रोता से अधिक और कुछ नहीं चाहता। जयदेव ने उत्तर दिया "वाह ! क्या कहने हैं ! सूरज का बकरा बनाकर कवि घायल ही उसे हलाल कर सकते हैं। कविता पूरी हो जाये, तो जरूर भेजियेगा। आपकी कोई कविता पिछले तीन-चार अंकों से नहीं छपी है।"

कवि घायल ने याद दिलाया कि कवि केशव ने कापालिक काल की कल्पना अपूर्ण ही छोड़ दी थी। उनके युग में इतना संघर्ष नहीं था, "मेरा काव्य तो जीवन के संघर्षों की देन है। इसलिए मेरी क्रान्ति भावना ने धरती के साथ ही आसमान को भी लपेट लिया है, आसमान का रंग लाल कर देना होगा।"

शिवकुमार घायल संवर्ष के अलावा और कुछ नहीं करते थे, या यों कह लीजिये कि वे जो कुछ भी करते थे, उसी को संघर्ष मानते थे। उनकी पत्नी ने वर्धा की प्रवेशिका परीक्षा दे रखी थी, जो दो बच्चे हो जाने के बाद सबके काम आई और वह एक प्राथमिक कन्याशाला में अध्यापिका हो गई। कवि घायल उस क्रान्ति के लिये संघर्ष कर रहे थे, जिसके बाद दुनिया के सारे बाजार कवियों के लिये खुल जायेंगे और किसी भी दूकान पर किसी वस्तु का मूल्य नहीं लिया जा सकेगा। यों कवि घायल समझौता शब्द से ही चिढ़ते थे, किन्तु यदि केवल शराबखाने ही उनके लिये फ्री कर दिये जायें, तो संभवतः वे क्रान्ति से समझौता कर लें।

जयदेव ने कहा "आपके जैसे क्रांतिदर्शी और क्रान्तिजीवी कवि को इस समय चाय की गरमी अच्छी लगेगी या कॉफी की। देखिये मैंने 'पीने' जैसे पवित्र शब्द का प्रयोग चाय-कॉफी के साथ नहीं किया है।"

कवि घायल ने अपनी जर्जर देह से इस पर ऐसा जोरदार अट्टहास किया कि जयदेव को संदेह हुआ कि कहीं कवि की कोमल पसलियां न टूट गई हों। किन्तु साथ देने के लिये मुसकराया जयदेव भी।

"चलिये, मौसम की उमस भरी गरमी में आपका गरम प्रस्ताव मंजूर। गरमी गरमी से ही कटेगी।"

कॉफी हाउस में विद्रोही जैसे इन्हीं की प्रतीक्षा में बैठे थे। देखते ही दोनों को अपनी टेबिल पर खींच लिया और उत्साह भरे स्वर में बोले "तुम्हारे फर्स्ट पेज के लिये फर्स्ट क्लास खबर है। तुम लोग इसे अपनी भाषा में स्कूप कहोगे। प्रधान मंत्री इस बार मुख्यमंत्री को विश्वास-मत प्राप्त करने की सलाह देंगे, यह निश्चित है, और यह विश्वास-मत मुख्यमंत्री के लिए वाटरलू सिद्ध होगा।"

विद्रोही सत्ताधारी दल के असंतुष्ट सदस्यों में थे। वे मंत्रिमण्डल के मध्यावधि पतन की भविष्यवाणियां इससे पूर्व भी कर चुके थे और मुख्यमंत्री अभी कुर्सीनशीन थे। किन्तु इस बार उनकी वाणी में आत्मविश्वास का

प्रतिशत बहुत ऊँचा था। इसलिये जयदेव ने यह जानना चाहा कि प्रधान मंत्री को इस बार कौन-सी विवशता आ रही है, और मुख्यमंत्री में अविश्वास का आधार क्या है।

"कौन नहीं जानता कि मुख्यमंत्री एक पुराने कांग्रेसी मुख्यमंत्री की सलाह पर चल रहे हैं। यह एक प्रकट रहस्य है कि विरोधी दल के नेता के रूप में इन भूतपूर्व मुख्यमंत्री से इनकी प्रगाढ़ मैत्री रही है, जो अब तक कायम है।"

"किन्तु क्या इन दोनों मुख्यमंत्रियों की राजनीति, उनके रास्ते, अब अलग नहीं हैं ? फिर आप ही कहते हैं, दोनों मुख्यमंत्रियों की दोस्ती पुरानी है। फिर नई बात क्या हुई ?"

"और यह भी बताइये कि" घायल ने अपना प्रश्न जोड़ा, "इस नई क्रान्ति का सूत्रधार कौन है ?"

विद्रोही बड़े बुजुर्गाना अंदाज में इन छोटे-छोटे प्रश्नों पर मुसकराये और बोले "इस बार प्रधानमंत्री को जो ज्ञापन असंतुष्ट विधायकों की ओर से दिया गया है, उसमें मुख्यमंत्री की इन्दिरा कांग्रेस के साथ साँठ गाँठ के ग्यारह उदाहरण प्रमाण सहित पेश किये गये हैं। नम्बर दो, यदि प्रधानमंत्री और पार्टी-अध्यक्ष शक्ति-परीक्षण का अवसर विधायक-दल के बाहर पूरी विधान सभा में देने का खतरा उठायेंगे तो असंतुष्ट गुट विरोधी सदस्यों के साथ मतदान करने का कदम उठाने से भी नहीं चूकेगा।"

सत्ता के इस संभावित परिवर्तन में पत्रकार जयदेव से अधिक रुचि कवि घायल ने दिखाई। इस प्रकार कवि अपनी क्रान्ति-भावना को और पुष्ट कर रहा था। विद्रोही के विश्लेषण से यह मानने का आधार बना कि इस बार टक्कर कांटे की होगी। कॉफ़ी के दो दौर चलने के बाद सारे वाद-विवाद का एक सुपरिणाम यह निकला कि जयदेव उसे पत्र में छापने की जोखिम उठाने को राजी हो गया।

घायल ने कुछ रचनात्मक चिन्तन किया और विद्रोही से प्रश्न किया "विद्रोही जी, यदि सरकार बदल जाती है, और नई सरकार में आपका दखल

भी रहता है, तो क्या आप साहित्यिक साम्राज्यवाद की समाप्ति की दिशा में कोई ठोस कदम उठायेंगे ?"

प्रोफेसर रामचरण विद्रोही कुछ अचकचाये घायल से उन्होंने और स्पष्ट शब्दों में बात पूछने को कहा।

"मेरा आशय उन महंत कवियों से है, जो आपकी सरकार में हल्दी की एक गाँठ पर ही पसरट्टे का बाजार खोले बैठे हैं। नाम जाने दीजिये, हम सब जानते हैं उन्हें क्योंकि वे इस प्रदेश के सबसे बड़े कवि हैं, और यह यश और कीर्ति उन्होंने केवल एक ही कविता के बूते पर अर्जित की है। वे आपकी सरकार में एक विभागाध्यक्ष हैं।"

कवि घायल ने बात पते की कही थी। एक बार इन महोदय के विरुद्ध अनुशासन की कार्यवाही होने वाली थी, तो मुख्यमंत्री ने यह कह कर इन्हें बचाया था कि एक कवि को सम्मान का पद देकर हमारा राज्य अगुवाई कर रहा है, और कवि को छेड़ा न जाये। यह सही था कि इनका उपयोग एक शो-पीस से अधिक नहीं था।

जयदेव ने कहा "घायल, आओ ! यह चर्चा पीयूष के पन्ने के लिए उपयुक्त रहेगी। विद्रोही जी को हम इस विषय पर चिंतन के लिये यहीं छोड़ चलते हैं।

घायल ने एक और सरकारी अधिकारी की चर्चा की। कवि कुसुमाकर सूचना विभाग में सहायक निदेशक हैं, जो कवि अच्छे हैं, आदमी भी भले हैं किन्तु सरकारी काम-काज के मामले में एकदम कोरे हैं। उनकी भलमनसाहत और काव्य-कौशल ने उनकी शेष अयोग्यता पर परदा डाल रखा है।

"दूसरी ओर हम जैसे संघर्षशील कवि हैं, जिनकी न कहीं समाज में कोई पैठ है, न सरकार में। यह बात समझ आसमान का रंग लाल कर देना होगा।"

कॉफी हाउस से निकलकर घायल ने यह बौद्धिकता का वातावरण समाप्त करने के लिए जयदेव से कहा। घर से खाली हाथ निकलते ही कवि घायल का जीवन-संघर्ष प्रतिदिन प्रारम्भ होता था, और तब तक चलता था, जब

तक कि वे उसे मदिरा के प्यालों में डुबो न दें। यदि किसी दिन कविता पूरी न होती, तो भी वे समय पर अपना संवर्ष समाप्त कर देते थे। व्यवसाय करने वाला प्रत्येक व्यक्ति उनकी दृष्टि में पूंजीपति था, और उसकी जेब से पैसा निकालना उनके लिये संवर्ष से कम न था। जयदेव के खाते में आज पूरी दोपहर लिख दी गई थी, इसलिये घायल ने जयदेव से ही संवर्ष करके पाँच रुपये वसूल किये और डूबते सूरज का बकरा हलाल कर देने के लिये चल पड़े।

"अब पीयूष को तुम ही समझा देना। मुझे तुम्हारा तकाजा भी पूरा करना है। कल तक यह कविता पूरी कर दूँगा, और देख लेना, किसी आने वाले कल तक में आसमान का रंग भी लाल कर दूँगा।"

× × ×

जयदेव के जाने पर पेमा कुछ देर वैसे ही बैठी रही। क्या सचमुच अबला-सदन से निकलने के लिये उसने वही किया है, जो कोई भी और लड़की करती ? अबला-सदन में लड़की अब एक ही बची है, बाकी सब बड़ी उमर की औरतें हैं। सुक्खो का रंग काला है, सूरत कोई खास नहीं, चेचक के दाग और उसी चेचक में खोई एक आँख के कारण इस नई उम्र में भी सुन्दरता उसके चेहरे से दूर हो रही है। क्या सूक्खो भी उसी की तरह बिगाड़ी जायेगी ? पेमा ने तय किया, बाकी दस बड़ी-बूढ़ियों के लिये अबला-सदन वास्तव में सुख-चैन की जगह है।

उसकी कल्पना सुक्खो के मामले में ठिठकी। मोटे लाला और खूसट धन्ना ने उसके रूप की प्रशंसा की थी, उसे रूप की रानी कहा था और रानी से मेहरबानी की भीख माँगी थी। सुक्खो के साथ यह नाटक शायद न हो।

पेमा उठी और दर्पण में उसने अपना मुँह देखा। रोज का जाना-पहचाना चेहरा उसे आज कुछ अच्छा-अच्छा लगा और वह अपने प्रतिबिम्ब को काफी देर देखती रही।

बाबूजी ने कहा था, वह पांचाली से मेलजोल बढ़ाये। उसने शीशे में दिखते हुए चेहरे से कहा—वह आज ही पांची के घर जायेगी।

सचमुच आज का दिन उसके लिए बदल गया था। इन छह महीनों में उसने दोपहर के समय कभी अकारण शीशा नहीं देखा। उसे फ़ुर्सत ही नहीं मिल पाती थी अपने कुढ़ने, रोने या मुंह ढंके उदास पड़े रहने से।

आज उसने दूसरी बार मुंह धोया, दूसरी बार फिर शीशे के सामने आकर बाल संवारे और पाँची से मिलने घर के बाहर निकल आई।

पेमा की यह इतनी दूर की पहली अकेली यात्रा थी। पहले वह निराला बाजार की दूकानों से घर का सौदा खरीदने तो निकली थी, पर इतनी सड़कें और इतने बाजार इससे पहले उसने कभी पार नहीं किये थे। पांचाली ने उसे बस का रास्ता भी बताया था, किन्तु आज की इस पदयात्रा में उसे जो उन्मुक्तता मिल रही थी, वह भी अनुभव करने योग्य थी। दो बार उसे रास्ता पूछने की जरूरत पड़ी, किन्तु महादेव मार्ग पर पीयूष का मकान तलाश करने में दिक्कत नहीं हुई।

अर्जुन दोपहर का खाना खाकर घर से निकल ही रहा था कि उसे पेमा दिख पड़ी।

अर्जुन और पांचाली के लिये पीयूष ने अपने बँगले का गैरेज ख़ाली करा दिया था।

"कौन अभी कार आने वाली है, यह तो चोंचलेबाजी है कि कोठी के साथ कार भी जरूरी मानकर गैरेज उसमें रखा जाता है", उसने कहा था। पीयूष आदर्श नगर के महादेव मार्ग पर रहता था।

"देखो तो कौन आया है, पांचाली!" कहकर उसने पेमा का स्वागत किया और पेमा को उसकी सहेली के सुपुर्द करके वह दूकान चला गया।

"आज कैसे रास्ता भूल पड़ी?" पांचाली ने उसे बाँहों में भरते हुए पूछा।

"आज मैं मर्जी से नहीं, तुम्हारे जयदेव बाबू की आज्ञा से यहाँ आई हूँ" कहकर पेमा ने उसके घर अप्रत्याशित रूप से जयदेव के सहसा आगमन की कथा सुनाई और बोली, "उन्होंने मेरी तकलीफ का इलाज तुमसे मेलजोल बढ़ाना बताया है।"

पेमा ने देखा, पांची ने गैरेज को बिल्कुल घर बना दिया था। लम्बे कमरे को बीच में परदा डालकर दो कक्षों में बांट दिया गया था। दीवारों पर चालू वर्ष के कैलेण्डर टंगे थे। बाहरी कक्ष में पलंग था, जिस पर रंगीन बेड-कवर पड़ा था। दोनों मुड्ढों और पैकिंग के खाली खोखों से बनी हुई मेज पर सिली हुई गद्दियाँ और मेजपोश थे। परदे के दूसरी तरफ के हिस्से में स्टोव पर खाना बनता था, और पानी के घड़े और रसोई का सामान क़रीने से रखा हुआ था। पांची जब हँसती तो लगता था, उसका छोटा-सा घर भी उसके साथ हँस रहा है।

दोनों सहेलियां बात करने बैठीं, तो भी पांची कुछ-न-कुछ करती ही रही। पहले दोनों ने परदे के पीछे बैठकर चाय बनाकर पी। पांची ने पेमा से कहा, वह चलकर मुड्ढे पर बैठे, वह दो मिनट में आई। पेमा ने वहीं खड़े देखा, उसकी सहेली ने यह दो मिनट चाय के प्याले धोकर रखने और रसोई को फिर नयी जैसी बनाने के लिये मांगे थे। बाहर आकर पांची उसके साथ बैठी, तो हाथ में कुछ कढ़ाई का काम लिये हुए थी। पेमा को लगा, बेचारी को कितना काम है।

"तुम्हें, तो दम मारने की भी फुरसत नहीं मिलती होगी, बहिन! तुम्हारा सारा दिन तो गर्द झाड़ने और चीजों को चमकाने में ही जाता है।"

"वाह" पांचाली बोली, "दो जनों का काम ही कितना होता है? मुझे तो सारे दिन फुरसत हीं फुरसत है। हाथ-पैर इसलिये चलाती रहती हूँ कि समय बोझ न बने। ये भी तो कितना काम करते हैं? दूकान का काम, खुद पढ़ने और मुझे पढ़ाने का काम, और फिर घर पर बैठकर फिर काम।"

पांचाली ने ऊपर टाँड पर रखी सिलाई की मशीन बताकर कहा "यह मशीन अभी खरीदी है और इस पर ये मुझे बैठकर सिलाई कटाई का काम सिखाते हैं। अब तो दो-तीन सौ रुपये की सिलाई घर पर ही आने लगी है। पचास रुपया देकर मशीन किश्तों पर खरीदी थी। तीन महीने में ही पूरी कीमत चुका दी है।"

पांचाली की बातों में जो तृप्ति और संतोष झलक रहा था, पेमा के लिये वह अमृत-वर्षण जैसा था। काम लगभग उसे भी उतना ही करना होता था, जितना पांचाली को। वही घर झाड़ूबुहारी, रसोई बर्तन वगैरह का काम। मगर वह सब करते उसका शरीर टूटता था और दो जनों का इतना-सा काम ही उसे पहाड़ दिखता था।

थोड़ी देर बाद पेमा ने पूछा "बहिन, मुंह देखी मत कहना। सच-सच बताना। क्या तुम यह नहीं मानतीं कि इन बूढ़े खुर्राटों के चंगुल में फंस जाना मेरी बेवकूफी थीं?"

पांचाली ने कहा, "मैंने तो तुम्हें इनके चंगुल में फँसने के लिये अपनी तरफ से कोई बेवकूफी करते नहीं देखा मैंने, तो छदामी लाला और उसके चमचे को तुम्हें अपने चंगुल में फंसाने के लिये पैंतरे बदलते और जाल फैलाते हुए ही देखा है।"

"क्या वे सुक्खो के साथ भी अब वैसा ही नाटक करेंगे, जैसा अपने साथ हुआ था?"

"तुम सचमुच भोली हो, बहिन! कभी शीशे में अपना रूप देखा है? ये दोनों तो तुम्हारे रूप के पतंगे थे" पांचाली ने उसे बताया।

आज पेमा ने अपना रूप शीशे में देखा था। किन्तु एक दूसरा दर्पण उसे अनजाने में पांचाली ने दिखा दिया। इस दर्पण के सामने बैठकर उसे रूप नहीं, अपना जीवन संवारना था।

लौटती बार पेमा को पांचाली बस तक छोड़ने आई और उसे फिर आने का तकाजा दर्जनों बार दोहराया।

6

छदामी लाला ने मुनीम रामगोपाल को बुलाया और कहा, "पचास हजार रुपये चाहिये।"

"बैंक में तो इतनी रकम इस समय शायद ही हो…"

"बैंक वाली रकम नहीं छेड़नी है। यह रुपया मुख्यमंत्री ने मांगा है। रकम तिजोरी में से देनी होगी। लगता है, इस बार उन पर कोई संकट आया है "

"इंतजाम हो जायेगा। पर इसे वही में किस खाते में लिखा जायेगा? नये ठेकों के खाते में?"

"नहीं, खर्च खाते में" लाला ने उत्तर दिया।

"इतनी बड़ी रमक?" मुनीम रामगोपाल ने नमक-हलाली दिखाते हुए चिंतित स्वर में पूछा।

यह चिंता स्वयं लाला को भी थी। उन्होंने अपना नम्बर दो का हिसाब देखा तो पता चला, पिछली सरकार बदलने के बाद इन दो वर्षों में उन्हें सरकार की ओर से कुल एक लाख पैंतीस हजार रुपये की अतिरिक्त आय हुई है। लाला ने ठंडी साँस लेते हुए कहा "कभी गाड़ी नाव पर तो कभी नाव गाड़ी में! यह भी एक दाँव है, अगर मुख्यमंत्री की सरकार रह गई तो एक झटके में पाँच लाख वसूल कर लूंगा। मेरा नाम भी लाला छदामी लाल है!"

लाला छदामी लाल अपने नाम का अर्थ जानते थे। उनके पिता के समय घर पर एक नौकर करोड़ी मल नाम का था। उनके पिता कहते थे, करोड़ों का कोई ठिकाना नहीं होता। लक्ष्मी चंचल होती है। आदमी वह है जो छदाम की कीमत पहचाने और इन छदामों से लाख और करोड़ बना सके।

मुनीम रामगोपाल ने आँख का चश्मा नाक पर से नीचे खिसक जाने दिया और गम्भीर स्वर में एक बार फिर सेठ जी को याद दिलाया कि दो साल की आधी कमाई वे व्यापार में नहीं लगा रहे, बल्कि एक तरह का जुआ खेल रहे हैं।

"यह भी बड़ी बारीकी से समझने की बात है, मुनीम जी ! हर नया व्यापार एक जुआ है । याद है, बचपन में मेलों और हाट में चाय वाले मुफ्त चाय पिलाते थे, और पांच प्याली चाय बनाने का पैकेट भी फ्री में देते थे । अगर अगले बड़ों ने ऐसा न किया होता तो अपनी सौभाग्य श्री टी ट्रेडिंग कम्पनी चलती ?"

"हाँ, सो तो है ! आज तो चाय का धंधा जोरों पर है ।"

"बड़े लाला कहते थे, यह जो रेल चली है न, आज तो सरकार को कमाकर देती है, पर पहले इसमें अरबों-करोड़ों रुपये यों ही झोंक दिये गये थे । पहले-पहल यह काम अपने यहाँ विलायत की कम्पनियों ने शुरू किया था ।"

"सुना है, पहले सरकार भी कम्पनी की होती थी" मुनीम जी ने बात को शह दी ।

"हां, पर रेल कम्पनी का काम भी किसी सरकार चलाने के काम से छोटा काम नहीं था ।" "जरा हिसाब लगाओ, कितनी लम्बी लोहे की पट्टियां बिछायी गईं, कितना रुपया ऊबड़-खाबड़ पहाड़ी इलाकों पर यह लोहे की सड़क बनाने में लगा, कितने सारे स्टेशन बनाये गये, अमला भरती किया गया और रेल के डब्बे और इंजिन लगाये गये ?"

मुनीम जी ने हिसाब तो नहीं लगाया, क्योंकि यह उनका काम नहीं था, पर बात आगे बढ़ाने के लिये हूँ-हाँ की ।

"और जानते हो, रजवाड़ों के रईसों को रेलें बिछाने का यह काम पसंद नहीं आया था । वे सोचते थे, इससे अधर्म फैलेगा । इसलिये रेल कम्पनी से उन्होंने कहा कि वे जमीन चाहते हों तो रुपये बिछाकर जमीन ले लें । समझे कुछ ? एक रुपया वर्ग इंच उस सस्ते जमाने में उस ऊंची-नीची जमीन का दिया गया, जो बेकार पड़ी रहती थी ।"

मुनीम जी चमत्कृत हुए । रुपया बिछा कर जमीन !

"और इस तरह करोड़ों-अरबों रुपया पानी की तरह बहाकर जब रेल लायी गई, तो लोग उसमें बैठने को तैयार न थे । इस काली धुआं उगलती

भूतनी से लोगों को डर लगता था। तब लोगों को गाड़ी में बैठाकर मुफ्त सैर करायी गई। स्थान-स्थान पर तीर्थों के चित्र लगाये गये और बताया गया कि कम्पनी की रेल इन पवित्र स्थानों पर जाती है। उस समय की यह सबसे आरामदेह और सबसे तेज सवारी थी, पर इसका किराया और सवारियों से बहुत कम था। इसे कहते हैं व्यापार की जोखिम और इस तरह छदामों से करोड़ बनाये जाते हैं," लाला ने सगर्व घोषणा की।

मुनीम जी को रुपया लाने में ऐतराज न था। व्यापार की कुछ पेची-दगियाँ वे खुद भी समझते थे। यदि दो साल में नये ठेकों से एक लाख पैंतीस हजार रुपया सेठ जी के दो नम्बर के खाते में आया था, तो चालीस-पचास हजार पर वे भी हाथ साफ कर चुके थे। किन्तु सेठ को अपना रुपया देते समय भी वे ना-नुकर करते थे, उन्हें ऊँच-नीच समझाते थे और इस तरह वे सेठ पर अपनी वफादारी की धाक जमाते थे। वे कहते भी थे, मुनीम नीम जैसा कड़वा तो होता है, पर नीम जैसा गुणकारी भी वही हो सकता है।

× × ×

इधर लाला पचास हजार रुपयों का दाँव लगा रहे थे, उधर धन्ना भी एक दाँव खेलने के लिये अंटी में दो सौ के नोट बांधे जनाने अस्पताल के पास की भिखारियों की बस्ती की ओर जा रहा था। छदामी लाला मुख्यमंत्री को प्रसन्न करना अपनी रोटी पर घी लगाना मानते थे, तो धन्ना की पहुंच छदामी लाल तक थी, और चुपड़ी रोटी उसे भी बुरी नहीं लगती थी।

इस बस्ती के आदमी, औरत, बच्चे, बूढ़े, सबके लिये कमाना जरूरी था। किन्तु पंखे-टोकरी बनाने के अलावा यहाँ के लोगों को कोई उद्योग नहीं आता था। ये लोग कोढ़ी से लेकर ज्योतिषी तक का स्वांग भरते थे। मंदिरों के

पास, बाजारों, पार्कों, सिनेमा घरों और गली-मुहल्लों में टोलियाँ बनाकर ये लोग जाते और लोगों को दान का पुण्य कमाने की सुविधा देते थे। कुछ बहुरूपिये बनकर दूकान-दूकान पर सलाम करते और इनाम पाने की कोशिश करते थे। कुछ मजमा लगाकर मंजन या ताकत को दवा बेचते। इनमें से कुछ लोग पहले ब्लड बैंक में खून बेचने भी जाते थे, पर यह धंधा अब बंद हो चुका था।

इन्हीं लोगों की कच्चे घरों की बस्ती में धन्ना ने एक लड़की देखी थी, जो उम्र में अधिक न थी, किन्तु उसके अंग पकने लगे थे। लड़की का बाप नकली चेहरा ओढ़कर, मुंह से सीटी, एक हाथ से करताल और दूसरे से गले में लटका छोटा नगाड़ा बजाकर मंजन बेचता था। कभी वह सीटी बजाना बंद कर गीत की लाइन गा देता और इस तरह रिझाकर अपनी मंजन की पुड़ियाँ बेचता। लड़की चंदो न घर पर रोटी बनाती, न भीख मांगने जाती, पर खाना तीन बार चाहती थी। वह मंद बुद्धि थी और बड़ी मुश्किल से उसने शौच-स्नानादि नित्य क्रियाएँ सम्पन्न करना, थाली में खाना, कपड़े पहनना आदि सीखा था। उसका शब्दकोश भी बहुत सीमित था और वह वाक्यों का काम शब्दों से चलाती थी।

लड़की के बाप से गिड़गिड़ाकर धन्ना ने वही कहा जो पेमा से विवाह करने के लिये छदामो लाला से कहा था। एक पुत्रहीन विधुर अपना घर बसाना चाहता था। उसे केवल संतान ही चाहिये, वह चंदों से ही काम चला लेगा। चंदो का बाप अपने गले पड़े बोझ को उतारकर हल्का भी हो रहा था, और उसे मंजन के व्यापार को बढ़ाने का मौका भी मिल रहा था। इसलिये दो सौ में सौदा हो गया। धन्ना, जो बाहर गाँव का जमींदार बना हुआ था, बोला "सोचो तो सही ! अभी तीन-चार साल तो मुझे खिला-पिला कर लड़की को तैयार करना पड़ेगा। क्या उसमें खर्चा नहीं लगेगा ?"

और लगभग छह माह बाद अबला-सदन की खाली जगह भरने जा रही थी। धन्ना ने दौड़-धूप और खर्चेपानी के बारे में जो कहानी लाला के लिये

गढ़ी थी, वह संभवतः उसे दो सौ असल के और सौ-पचास उसकी इस खोज के पारिश्रमिक के बतौर दिला ही देगी।

चंदो को अबला-सदन छोड़कर धन्ना घर लौटा तो वह आज की कारगुजारी पर प्रसन्न था। आज घर में जो चमक नजर आ रही थी, वह उसका भ्रम नहीं था। आंगन में अलगनी पर से कपड़े हट गये थे। पहले वे रात भर टंगे रहने के बाद दूसरे दिन तभी हटते, जब उनकी जरूरत पड़ती। मोरी पर रोज की तरह बर्तनों का ढेर नहीं था। पेमा की धोती साफ थी, आँखे साफ थीं और बोली भी साफ थी।

धन्ना के लिए यह एक सुखद आश्चर्य था। ऐसा उसने पिछले छह माह में शायद ही कभी देखा हो। जैसे वह सुबह कलह को दरवाजे की सांकल से बांधकर जाता हो, लौटने पर दरवाजे की सांकल खुलते ही जैसे यह कलह भी खुल जाती हो। यह तनाव वातावरण में ही होता था और तकरार के लिये बहाने एक ढूंढते ही हजार मिल जाते थे। किन्तु आज धन्ना को झगड़ने का कोई बहाना खोजने पर भी नहीं मिला, और पेमा भी अपनी आज की उपलब्धियों को खोना नहीं चाहती थी।

मिसेज मेहता द्वारा जयदेव को जो इलाज का तरीका बताया गया था, वह कारगर साबित हो रहा था।

× × ×

रात को जब अर्जुन घर लौटा, तो पांचाली ने उसे बताया कि जयदेव आज पेमा से मिलने गया था। उसी के कहने पर पेमा उन लोगों के घर आयी थी।

अर्जुन को यह सुनकर प्रसन्नता हुई, "इसका अर्थ यह है कि समझ लो, पेमा के दिन फिर गये! जयदेव जी के मन में हम लोगों के लिये बड़ी खास जगह है।"

"पेमा आई तो जैसे नशे में हो ! जयदेव जी की एक मुलाकात ने उस पर जादू कर दिया है। रुच-रुचकर उसने उनके मुंह से निकला एक-एक शब्द दोहराया और जितनी देर रही, उन्हीं की बात करती रही।"

"ठीक ही तो है ! तुमने सुना नहीं है, कहानियों में कोई राजकुमार किसी उजड़े हुए बाग में कदम रखता है, तो रूठी हुई बहार फिर आ जाती है। जयदेव बाबू कहानी के किसी राजकुमार से कम हैं क्या ?"

"बेचारी धन्ना और छदामीलाला के फुसलाने में आ जाने के लिये सारा दोष अपना ही मानती है। कह रही थी, जयदेव बाबू पहले आदमी हैं, जिन्होंने उस मुंहजली को निर्दोष पाया। वह तो अबला-सदन की कानी सुक्खो के लिये भी चिंतित थी, कि कहीं उसका हाल भी वैसा न हो, जैसा खुद उसका हुआ है।"

"शायद इसकी नौबत न आये ! आज मैंने धन्ना को एक लड़की का हाथ पकड़े रिक्शे में जाते देखा था। मेरा अंदाज है कि धन्ना ने लाला को खुश करने के लिये सदन के पिंजरे में एक चिड़िया बंद कर दी है।"

सहसा पांचाली ने कहा, "मंगल की तुम्हारी छुट्टी पड़ती है। इस बार जयदेव बाबू और पीयूष बाबू को इस गैरेज में फिर लाओ न ! पेमा को मैं पकड़ लाऊंगी। इस मंगल को पूरी छुट्टी रहनी चाहिये, पढ़ाई की और मशीन की भी।"

"और तुम्हारे रसोई पानी के धंधे की ?"

"यह कोई धंधा है क्या ? तुम लाकर इन लोगों को घर में बिठाओ। देखना, हम दोनों को उस दिन इस काम में कितना आनंद आता है।"

"दोनों ? अच्छा, अच्छा। पेना भी तुम्हारे साथ होगी। मैं तो एक बार समझा, मुझे भी तुम्हारे साथ रोटी-पानी के काम में लगना होगा।"

"अपनी सिखाई बात खुद ही भूलते हो ? उस दिन तुम्हीं ने तो कहा था कि अब दुनिया में सिर्फ हम दो ही नहीं रहे हैं, अब हमारी दुनिया काफी बड़ी हो गई है।"

और यह तय रहा, पांची पेमा को पकड़ लायेगी और मंगलवार के दिन चारों-पांचों की बैठक यहीं जमेगी।

7

लाला छदामी लाल मुख्यमंत्री से मिल आये थे। उन्हें यह भी पता लगा कि राज्य के अन्य भागों से कुछ और भामाशाह भी थैलियाँ भेंट कर गये हैं। लाला को धन की शक्ति पर विश्वास था। परसों सुबह उन्होंने धन की शक्ति का एक छोटा-सा चमत्कार आश्रम में देखा था। चंदो तीन सौ चालीस और ग्यारह रुपये धन्ना के इनाम के, कुल 351 रुपयों में, अबला-सदन की सम्पत्ति बन चुकी थी।

लाला को अपनी केबिन में पहुँचते ही 'बात का धनी' का वह अंक देखने को मिला, जिसमें विद्रोही का राजनीतिक बम-विस्फोट प्रकाशित हुआ था। पत्र का कहना था कि वर्तमान सरकार का पतन सन्निकट है, क्योंकि असंतुष्टों की मांग पर इस बार जो शक्ति-परीक्षण होगा, उसमें मुख्यमंत्री का दल मुंह की खायेगा। पत्र को विश्वास था कि प्रधानमंत्री इस बार मुख्यमंत्री को विश्वास-मत प्राप्त करने की सलाह देंगे।

लाला कुछ परेशान हुए। मुख्यमंत्री आते रहते हैं, जाते रहते हैं। इससे कोई विशेष अंतर नहीं पड़ता। किन्तु इस बार मुख्यमंत्री के साथ उनके पचास हजार भी डूब सकते थे। पत्र की एक बात सही निकली है, मुख्यमंत्री स्वयं यह मानते हैं कि उन्हें विश्वास-मत प्राप्त करना होगा। पैसे की जरूरत उन्हें इसीलिये पड़ी थी।

यह लोकतंत्र का गोरखधन्धा भी अजीब है, लाला ने सोचा। चुनाव कोई भी हो, उनके बटुए की डोरी खींचे बिना पूरा नहीं हो पाता। उन्हें चुनावी राजनीति से क्या सरोकार है? वे अपनी व्यापार की गोटियाँ फिट

करते हैं। मगर लोग हैं कि नहीं मानते। एक बात तय है, जब तक नक्शा साफ न हो, वे और रुपया नहीं देंगे। पहले वोट पड़ लें, फिर देखेंगे ऊंट किस करवट बैठता है।

लाला ने पचास हजार की चिन्ता अधिक देर तक नहीं की। थोड़ी देर बाद ही उन्होंने ठंडी साँस खींचकर यह बात दिमाग से निकाल दी और दूसरे कामों में लगे। व्यापार में लाख-दो लाख की ऊँच-नीच लाला जैसी हैसियत के लोगों के लिये कोई मायने नहीं रखती।

विद्रोही ने इस अंक की पांच सौ प्रतियां अधिक छपाई थीं, जिनका मूल्य जयदेव को प्राप्त हो गया था। ये पांच सौ प्रतियाँ विधायक निवास के हर कमरे में हर व्यक्ति के पास पहुंची। इसमें असंतुष्टों द्वारा प्रधानमंत्री को दिये गये ज्ञापन की एक प्रति भी थी, जो विधायकों की आपसी नोंक-झोंक का अच्छा विषय रही। सत्ताधारी विधायक दल के एक-एक सदस्य के पास यह अंक डाक से भेजा गया।

उसी दिन रेडियो पर खबर आ गयी कि आज से तीसरे दिन विधायक निवास में गुप्त मतदान प्रणाली से मुख्यमंत्री विधायक दल का विश्वास प्राप्त करेंगे। केन्द्रीय पर्यवेक्षक के नाम की भी घोषणा कर दी गई थी। उस समय विद्रोही विधायक निवास में थे और इस खबर का उन्होंने पत्र के अंक जैसा ही उपयोग किया।

शिव कुमार घायल यद्यपि इस अंक में अपनी कविता नहीं दे पाये थे, पर जयदेव ने साहित्यिक साम्राज्यवाद पर पीयूष से लिखवाया था, इसलिये पत्र का यह अंक उनके लिये भी महत्वपूर्ण था। पीयूष के पत्रों में कहीं कवि घायल का नाम नहीं था। किन्तु जिसे भी वे यह पृष्ठ पढ़वाते, उसे यह जबानी बता देते थे कि यह बात सबसे पहले और किसी ने नहीं, कवि घायल ने उठाई है।

घायल ने दूरदर्शी दृष्टि से विचार किया, उनका संघर्ष रंग लाया है

और क्रांति की दिशा में कुछ प्रगति हो रही है। यह अर्थ का युग है। आसन्न क्रांति के लिये उन्हें अर्थ-संग्रह करना चाहिये।

यह विचार आते ही उन्होंने साहित्यिक मित्रों से पिण्ड छुड़ाया और अर्थ-संग्रह के निमित्त छदामी लाला की गद्दी पर आये।

पूरे पन्द्रह मिनट प्रतीक्षा के बाद जब उन्हें लाला छदामी लाल से भेंट का अवसर मिला तो उन्होंने लाला को सूचना दी कि क्रांति अब शीघ्र ही होने वाली है। लोगों के मन में क्रान्ति की चेतना का उदय हो गया है, "आसमान का रंग लाल कर देना होगा, लालाजी ! हम चैन से नहीं बैठेंगे।"

लाला छदामी लाल ने थोड़ी देर पहले रेड़ियो की खबर सुन ली थी। वे कवि घायल की साहित्यिक प्रतिभा से बहुत दूर से परिचित थे। लाला समझे, यह आने वाली क्रान्ति वर्तमान सरकार के पतन के रूप में आयेगी, क्योंकि कवि घायल क्रान्ति के आगमन की सूचना 'बात का धनी' का अंक फहरा कर कर रहे थे। शकुन अच्छे नजर नहीं आते। उन्होंने विनम्र भाव से प्रश्न किया कि वे क्या सेवा कर सकते हैं, और घायल के समक्ष राजनीति के बारे में अपनी अल्पज्ञता प्रकट की।

"थैलियों का मुंह खोल दीजिए लाला जी, और आने वाले युग के आभार का बीमा आप मेरी ओर से लीजिये," कवि घायल ने सोत्साह कहा।

लाला छदामी लाल ने उन्हें ग्यारह रुपये की पर्ची लिखकर हाथ जोड़ दिये।

यद्यपि इससे घायल का क्रान्ति के प्रति उत्साह ठंडा नहीं पड़ा, किन्तु यह उनकी भी समझ में आ गया कि ग्यारह रुपये का क्रान्ति-कोष अपर्याप्त है। इसलिये उसका उपयोग उन्होंने अपने संघर्ष जले प्राणों को मदिरा के शीतल दाह से सिंचित करने में किया।

8

दिन बहुत तेजी से भाग रहा था और विद्रोही की बहुत-सी भागदौड़ बाकी पड़ी थी। उन्हें आज ही चार गांव संभालने थे और फिर शहर लौटना था। अभी तक विद्रोही दो ही गांव निबटा पाये थे। दोनों में उन्हें जिन लोगों से मिलना था, मिले, मगर उनकी थाह नहीं पा सके। अब विद्रोही ने सोचा, गांव पहले जैसे नहीं हैं। राजनीति का प्रवेश गाँवों में भी हो गया है।

फिर भी विद्रोही के सामने समयाभाव के अतिरिक्त और दूसरी बाधा नहीं थी। उन्हें साठ प्रतिशत विश्वास था कि दो विधायकों को उन्होंने बांध लिया है। उन्होंने ये दोनों विधायक मुख्यमंत्री के शिविर के तोड़े हैं, और उन्हें इस बात का नैतिक संतोष था कि उन्हें किसी प्रकार के पद का प्रलोभन उन्होंने अपनी ओर से नहीं दिया है।

यदि वे एक विधायक और ले आते हैं, तो उनके पक्ष की विजय सुनिश्चित हो जायेगी। इसलिये उन्हें दो गांवों की खाक और छाननी थी। प्राग पुरा गांव के छीतर पटेल को साथ लिये बिना विधायक बुधराम को तावे में लाना मुश्किल था।

बड़ी खटारा बस थी। इस मार्ग पर प्राइवेट बसें चलती थीं, जिनमें यात्री की सुविधा पर नहीं, उनकी संख्या पर ध्यान दिया जाता था। सीटें इस कदर ठूँस-ठाँस कर बनाई गई थीं कि आगे घुटनों के लिये कोई जगह नहीं थी। बीच की लम्बी गैलरी इतनी सँकरी थी कि उसमें भारी बदन का आदमी फँस जाता था। इस गाड़ी में हॉर्न के अलावा सभी पुर्जे बजते थे और गाड़ी रफ्तार से निरपेक्ष हर दूसरे किलोमीटर पर रुकती हुई चल रही थी।

मदन गोपाल इन्हीं बसों की वकालत सार्वजनिक रूप से करता है? अच्छा हुआ, उसका अखबारी शौक जल्दी ही पूरा हो गया! विद्रोही ने पास बैठे यात्री से समय पूछा।

पौने छह बज रहे थे और इसी बस पर बीस मील की यात्रा अभी बाकी थी। फिर पूछा, "प्रागपुरा कितने बजे तक पहुँचेंगे?"

"प्रागपुरा का टाइम तो हो गया है। पर इस रूट की यह अकेली बस है। दूसरे दिन लौटेगी। इसे जल्दी नहीं करनी पड़ती।"

"सवारियां तो काफी हैं। इसी बस पर जितनी सवारियाँ होनी चाहिये, उससे दुगुनी हैं। दो बसें चल सकती हैं।"

"पर इस बस का मालिक ट्रान्सपोर्ट विभाग का रिटायर्ड आदमी है, साहब ! वह किसी परिंदे को यहां पर नहीं मारने देगा। उसी की वजह से इतने दिनों तक यहां रोडवेज नहीं चल पाई", यात्री ने स्पष्ट किया।

बस फिर रुक गई। कहीं कोई गाँव नजर नहीं आ रहा था। विद्रोही ने पूछा, बस क्यों रुकी है ? उसे बताया गया, यह मालियों की बावड़ी है। बावड़ी के पास धर्मशाला के नाम पर एक कोठरी-बरामदा था। बताया गया कि धर्मशाला में पहले एक चमत्कारी बाबा रहता था, जिस पर मोटरवालों की बड़ी श्रद्धा थी। आसपास दो-तीन ढाणियां (बस्ती का सबसे छोटा रूप, जहाँ केवल दो-चार परिवार ही रहते हैं) हैं और इस बस पर यहां भी सवारियाँ चढ़ती-उतरती हैं।

उतरने वाली सवारियों ने समय नहीं लिया। किन्तु चढ़ने वाली तीन सवारियों ने जो बारी-बारी से तीन भिन्न दिशाओं से प्रकट हुईं, दो बार बस रुकवाकर बावड़ी के अनुपस्थित बाबा को श्रद्धांजलि चढ़ाई। कहते हैं, बाबा के जमाने में यहाँ चलती गाडियां अपने आप रुक जाती थीं।

इस प्रकार हाथी की तरह झूमती हुई यह गाड़ी हाथी की गति से चल कर साढ़े सात बजे प्रागपुरा पहुंची। इस बीच बस ने जो आवाज निकाली, वह हवाई जहाज की आवाज से किसी कदर कम तेज नहीं थी।

गाँव में बिजली न होने के कारण रात वहाँ जल्दी हो जाती थी। छीतर पटेल के यहां हुक्का-पानी का आतिथ्य बड़ा लम्बा चला। गांवों में घड़ी देखने की जरूरत नहीं होती, वहां समय का बड़ा मोटा विभाजन चलता है, जैसे सुबह, दोपहर, शाम और रात। छीतर पटेल ने बात सुनने और समझने में दो घण्टे ले लिये।

विद्रोही बहुत छटपटाये, मगर रात उन्हें वहीं रुकना पड़ा। तय हुआ कि छीतर पटेल सुबह तड़के ही आदमी भेजकर 'एमएली' को बुलवा लेंगे।

बरसात के मौसम में भी दिन साफ रहा था। घर के बाहरी दालान में विद्रोही को निवाड़ के पलंग पर गद्दा बिछाकर सुला दिया गया। जब तक वे छीतर पटेल से चर्चा करते रहे, परेशान थे, पर जैसे ही पटेल भीतर गया और विद्रोही ने तकिये पर सिर लगाया, उन्होंने एक अद्भुत आविष्कार किया। ऐसा आसमान तो पहले उन्होंने कभी नहीं देखा। चन्द्रमा नहीं है, तो क्या हुआ, ये झुंड के झुंड चमकते हुए तारे तो हैं। विद्रोही के पलंग से देखने पर तो ये तारे जिन्दा दिखते हैं। लगता है, वे टिमटिमाते हैं, धड़कते हैं और शायद बोलते भी हैं, यदि उनकी बोली कोई समझे।

गांव के खुले आसमान पर बिजली के बल्बों और नियोन व मर्करी लाइटों के प्रकाश की धुंधली चादर नहीं थी। कभी कोई पक्षी पर फड़फड़ाता या बोलता तो लगता, सन्नाटे में विद्रोही को लोरी के साथ थपकी दी है। थोड़ी ही देर बाद नींद के घने कम्बल में विद्रोही लिपट चुके थे, सारी चिन्ताएँ भूल कर। यह सुषुप्ति से आगे की तुरीयावस्था थी।

सुबह उठकर विद्रोही ने हाथ-मुँह ही धोया था कि छीतर पटेल का आदमी बुधराम को लेकर आ गया। चाय के साथ गहरी राजनीति छनी। वे अपने गांव में सेकण्डरी स्कूल खुलवाना चाहते थे और मुख्यमंत्री उनकी ठीक से सुन नहीं रहे थे। शिक्षा मंत्री भी केवल अपनी ही पार्टी के लोगों की बात सुनते हैं। बुधराम को यह एक बड़ी शिकायत थी। विद्यादान को महादान मानकर विद्रोही ने उन्हें आश्वस्त किया कि उनका आज का वोट उनके गाँव में, भगवान ने चाहा तो सेकण्डरी स्कूल ला देगा। इस तरह उनके राजनीतिक दिमाग ने गुंजाइश निकालकर सेकण्डरी स्कूल न खुलने की स्थिति की सारी जिम्मेदारी भगवान पर अभी से डाल दी। उन्होंने जब कहा, ऊपर वाले की मर्जी सबसे बड़ी है, आदमी तो कोशिश ही कर सकता है; तो उपस्थित श्रोताओं ने मुक्त कंठ से उनका समर्थन किया।

निश्चय ही, विद्रोही इस प्रकार के राजनीतिक मिशन पर निकलने वाले अकेले मिशनरी नहीं थे, क्योंकि गुप्तदान के परिणाम स्वरूप मुख्यमंत्री विश्वास

मत प्राप्त करने में 15 वोट से हारे। विद्रोही का फतवा था, "राजनीति जन-सम्पर्क का खेल है। आराम कुर्सी पर बैठकर राजनीति नहीं चलती।"

× × ×

लाला छदामी लाल विधायक निवास नहीं पहुँचे, इसलिये सरकार के रूप में पचास हजार डूबनें की खबर उन्हें देर से मिली। उनके पार्टनर हीरा भाई का फोन आया था। बीस हजार उनके डूबे थे। छदामी लाला ने उन्हें सांत्वना दी कि उन दोनों के जैसे और भी कई हैं, जिन्होंने इस निष्फल यज्ञ में बहुत-सा घी डाला है। लाखों के वारे-न्यारे 'इस जरा-सी वोटिंग' ने कर डाले हैं।

लाला दूकान (जिसे वे आफिस कहते थे) से जल्दी ही उठ गये। घर पहुंचकर उन्होंने धन्ना को तलब किया। ललाइन शाम को मंदिर गई हुई थी। हवेली की बैठक घरवालों के लिये बंद करवा दी गई, और लाला ने आलमारी से विलायती शराब की बोतल निकाली, एक गिलास बनाया और तले हुए नमकीन मेवे की प्लेट सामने रखी।

"धन्ना, देखता है, गिलास में क्या है? एक बार बीरबल की शिकायत अकबर से की गई कि वह शराब पीता है। मुखबिर ने बताया कि बादशाह चाहें तो छिपकर वे खुद उसे पीता देख सकते हैं। जब बीरबल का समय आया तो बीरबल ने पहली प्याली ढाली....."

कहकर लाला ने एक छोटा घूँट पिया और मेवा चबाया। फिर बोले "तुम तो जानते हो, बीरबल भी एक ही घाघ था। ताड़ गया कि आज उसे रंगे हाथों पकड़वाने का डौल है। उसने प्याली उठाकर उससे पूछा 'तू कौन है, फिर प्याली की ओर से जवाब दिया, मैं दवा हूँ, तुम्हारे शरीर की थकन और तनाव दूर करूंगी। ऐसा, कहकर बीरबल ने प्याली खाली कर दी। फिर उसने दूसरी प्याली भरी और अपना सवाल दोहराकर प्याली की तरफ से जबाब दिया, 'मैं तुम्हारी दुनिया से दर्द और गम हटा दूंगी, इसी तरह तीसरी प्याली से जवाब लिया, मैं तुम्हारी दुनिया रंगीन कर दूंगी।"

इस बार लाला ने लम्बा घुँट गले में उतारा और बोले "इसके बाद चौथी प्याली से जब बीरबल ने पूछा 'तू कौन है,–तो उसकी ओर से उत्तर मिला 'मैं शराब हूँ। बीरबल ने कहा, शराब ? मैं शराब को हाथ नहीं लगाता' और यह कहकर बीरबल ने पाँव से प्याली ठुकरा दी। इस पर अकबर बादशाह नेपथ्य से प्रकट हुए और मुखबिरों से बोले, देखा तुमने ? बीरबल शराब पीना तो दूर, उसे हाथ तक नहीं लगाता।" लाला ने पिश्ता और काजू चबाते हुए कहानी पूरी की।

"कुछ समझे कि नहीं ? अरे, तू क्या समझेगा, जा गिलास ला।"

लाला ने धन्ना के गिलास में जो शराब डाली, वह स्वदेश में बनी अंग्रेजी शराब थी। लाला जब अपने हाथ से शराब का गिलास देकर धन्ना को एहसानों के समुद्र में डुबोते थे, तो हाथ पकड़कर उठाते भी वे ही थे।

धन्ना को गिलास थमाते हुए उन्होंने कहा, "दारूबंदी की बात अपने आप में गलत है। दारू तो बेचारी पहले ही बंद है, अगर खुली हो तो उसे छोड़े कौन ? बंद तो उन लोगों को करो, जो छटाँक भर गले में जाते ही आपा खो देते हैं और करनी-अनकरनी कर बैठते हैं ? बता, मैं ठीक कहता हूँ या नहीं ?"

लाला ने हाथ में गिलास देकर 'नहीं' की गुंजाइश ही नहीं छोड़ी थी। धन्ना इस समय, बस चलता तो लाला के कहने पर आसमान का चंदा ला सकता था। मगर लाला ने पहले ही उसके बूते का काम उसे बताया, अबला-सदन की चंदो को लाने का।

उठने से पहले उन्होंने धन्ना को भेद की एक और बात भी बताई–परकीया नायिका के सेवन के समय का अनुभव भविष्य का सूचक होता है। यदि यह अनुभव सफलता का हो और दूसरी ओर से बाधाएँ न आएँ, तो समझ लो, भविष्य में भी मैदान साफ है।

लाला अब तक एक गिलास खाली कर चुके थे। मगर धन्ना के आने तक क्या करें ? उन्होंने दूसरा गिलास बनाया और कल्पना में चंदो को सामने

बिठाकर उससे बात करने का रिहर्सल किया। आगे पता नहीं क्या हो, इस बात का खुटका दूर करने के लिये उन्होंने यह गिलास जल्दी खाली करके उसके स्थान पर दूसरा गिलास रख लिया।

अब तक उनकी दुनिया रंगीन हो चुकी थी। जब चंदो को कमरे में छोड़ कर धन्ना अपना गिलास दुबारा भरवाने आया, तो दुनिया में रंग ही रंग थे। चंदो ऊँघ रही थी।

लाला ने जब उसके सर पर हाथ रखकर उसे मेवा खिलाया, तो चंदो की चेतना लौटी।

लाला का हाथ सर से गाल पर आया। चंदो की ठोड़ी पकड़कर उन्होंने आवाज में प्यार भर कहा "चंदो रानी।"

चंदो ने फिर प्लेट की मेवा की ओर इशारा किया। लाला का हाथ और नीचे कंधे पर आया। चंदो मेवा चबाती रही। लाला ने गिलास से घूंट भरा और साहस करके हाथ कंधे से नीचे उतारा। लाला का हाथ कांप रहा था। लाला एक हाथ में प्लेट पकड़े दूसरे हाथ से चंदो का अधपका वक्ष सहला रहे थे। चंदो ने लाला का प्लेट वाला हाथ भी मुक्त कर दिया। लाला ने मेवा चबाती चंदो के मुंह की ओर गिलास किया। चंदो ने घूंघ भरा तो लाला ने ब्लाउज का एक बटन खोला। चंदो कसमसाई, तो लाला डरकर पीछे हटे। कुछ नहीं, चंदो इस ओर से निरपेक्ष थी। लाला ने धौंकनी की तरह चलती छाती की रफ्तार कम करने के लिये एक घूंट खुद भरा और एक घूंट चंदो को और पिलाया। चंदो हँसी, ऐसा चबैना उसे कभी नसीब न हुआ था। पिये हुए घूंट भी उसके शरीर में स्फूर्ति लाने में सहायक हुए थे। लाला ने उसका पूरा ब्लाउज खोलकर उसे भुजाओं में बाँधना चाहा, तो उसने गिलास और मेवा की प्लेट की तरफ फिसलकर निकलना चाहा।

लाला के सीने की धौंकनी फिर जोरों से चली, हाथ-पैरों में फिर ज्वार आया तो लाला ने पूरा गिलास चंदो के गले में खाली करके झटके के साथ

उसे दबोच लिया, और तीन-चार बार जोरों से काँपकर लाला का मोटा शरीर निढाल होकर एक ओर लुढ़क गया।

68 वर्षीय लाला इससे अधिक कर भी क्या सकते थे? पांचो को इतना एक वार भी मंज़ूर नहीं हुआ, और पेमा ने तीसरी-चौथी वार ही वगावत कर दी। शायद मंदबुद्धि चंदो लाला का आशय समझी नहीं और, पेमा और पांचो ने उन्हें भाँप लिया था।

लाला उठे तो देखा, चंदो अपनी उरोज-कलिकाएँ खोले नींद में बेसुध पड़ी थी।

9

जयदेव दिन भर व्यस्त रहता था और शाम कब आती है, उसे पता न चल पाता। किन्तु जब वह लौटकर अकेला अपने कमरे में आता, तो समय उसे बरवस अपने अस्तित्व का बोध करा देता।

कभी-कभी दिन भर की थकान के बाद भी देर रात तक उसे नींद नहीं आती थी, और इन दिनों अक्सर ऐसा होने लगा था। तन्द्रिल अवस्था में इन दिनों कुल्लो, बिन्दो और पेमा के चेहरे आपस में गडमड हो जाते। स्वप्न प्रारम्भ होता कुल्लो या बिन्दो को लेकर और पता नहीं कैसे, इनके बीच में पेमा आ टपकती। अपने चेतन मन में वह अभी तक बिन्दो के प्रति आस्थित था। वैसे उसकी यह विन्दो अब वास्तविक नहीं रही थी। उसका विवाह हो चुका था, और वह कहां है, इसकी जयदेव को कोई जानकारी नहीं थी। किन्तु उसकी कल्पना की बिन्दो अभी तक वहीं थी, जिससे राज और विष्णु के विवाह में उसकी भेंट हुई थी, और जिसे राज भाभी को भेजे गये कुछ पत्रों में उसने एकाध वार स्नेह सहित याद किया था।

पेमा उसके प्रति कृतज्ञ थी। धन्ना ने उसे मारना-पीटना या लाला के घर फिर से काम करने का आग्रह करना छोड़ दिया था। उसे जयदेव जैसे भद्र

पुरुष से कुछ अज्ञात भीति थी और वह ऐसा कोई अवसर नहीं आने देना चाहता था, जब जयदेव उससे कोई स्पष्टीकरण चाहे। अर्जुन, पांचाली और जयदेव ने पेमा से संबंध जोड़कर धन्ना जैसे समाज-भीरु व्यक्ति के मन में एक संभ्रम उत्पन्न कर दिया था। कृतज्ञता पेमा के रोम-रोम से प्रकट होती है।

आज फिर नींद न आने पर जयदेव उठ कर टहलने लगा और अपने विश्रृंखल जीवन की कड़ियां जोड़ने लगा। पहली वार तो वह भागा था, किन्तु भागने के कारण नहीं, घर से इसका नाता तो सोच विचार के बाद लिये हुए निर्णय के कारण कई किश्तों में टूटा। घर छोड़ने के साथ ही उसने अपने परिवार के अन्य संबंधियों से भी मुंह मोड़ रखा था।

इस कारण प्रारम्भ से ही उसके जीवन में संघर्ष की सृष्टि हो गई। उसके मन में ऊंचे आदर्श और कल्पनायें थीं, किन्तु जीवन की सुख सुविधाओं से वंचित होने पर उसके मन में विद्रोह जगा। वह कहने लगा कि नई पीढ़ी को दोष देना व्यर्थ है, बुजुर्गों ने अपने दायित्वों का निर्वाह नहीं किया है। सारा दोष पुरानी पीढ़ी का है, जो अयोग्य और अनुत्तरदायी सिद्ध हुई है और जिसने नई पीढ़ी के पास भविष्य के नाम पर कुछ नहीं छोड़ा है।

जयदेव की इस विद्रोह भावना को डा० मेहता ने अनुशासित किया। जयदेव तो 50 वर्ष से ऊपर आयु के सभी लोगों को एक कतार में खड़े करके पोपत कर दाग देने के पक्ष में था। साम्यवादी दर्शन उसे प्रारम्भ में इसोलिए रुचिकर लगा था कि वह सर्व प्रथम नाश और विध्वंस का दर्शन था। इसके बिना साम्यवादी दर्शन में जो कुछ है। उसे सभी स्वीकार करते हैं। बस यह कह देते हैं कि साम्यवाद एक विशुद्ध कल्पना है—यूटोपिया, जो कभी सत्य नहीं हो पायेगी।

डा० नेहता जयदेव की प्रतिभा के कायल थे। उन्होंने अपने ज्ञान और मृदु-व्यवहार से जयदेव का विद्रोह दर्शन की भूल भूलैयों में अटका दिया।

वे दिन जयदेव की आँखों के सामने चल चित्र की तरह घूमने लगे। डा० नेहता 'सत्य' को आनन्दमय और चैतन्य कहते थे। जयदेव कहता था, सब

और चित्त को समझने के लिये जितना कठोर अध्ययन करना पड़ा है, उसमें थकान और ऊब हो सकती है, आनंद कहाँ है ?

डा० मेहता ने तब उसे थोड़ा अध्यात्म की ओर प्रेरित किया। उन दिनों एक मराठी संत पागलानन्द वहाँ आये हुए थे। जयदेव की समस्या उनके समक्ष रखी गई। पहले उन्होंने कोई ध्यान नहीं दिया। जयदेव की ओर देखकर वे मुस्कुराये और बोले, "यह तो सिद्ध पुरुष है, जयदेवानन्द को कोई समस्या नहीं है।"

इस पर जयदेव स्वयं ताल ठोंककर उनके सामने आ गया। बोला, "है कैसे नहीं ? यह माथे पर इतने सारे मत-मतान्तरों का भार ढोना, बाल की खाल निकालने के लिये ग्रंथों में डूबे रहना, इसमें काहे का आनन्द है ? मैं कहता हूँ इसमें कोई आनन्द नहीं।"

संत पागलानन्द ने जयदेव की बात का पूरा समर्थन किया, बोले, "अज्ञान रूपी काँटे को ज्ञान के काँटे से निकालना पड़ता है। या यों कह लो अज्ञान रूपी नदी को पार करने के लिये ज्ञान रूपी नौका चाहिये। किन्तु पैर का काँटा निकलने के बाद दूसरे काँटे का क्या महत्व है ? नदी पार करने के बाद कौन नाव का उपकार मानकर उसे सर पर ढोयेगा ?"

"तो फिर आनंद", जयदेव ने प्रश्न किया।

"हाँ, आनन्द की बात दूसरी है। आनन्द ही आनन्द है। क्या तुझे आनंद चाहिये ?"

"बिल्कुल" जयदेव ने कहा।

"तो बाजार में जैसे हर चीज की कीमत लगती है, वैसे ही आनन्द की भी कीमत चुकानी पड़ेगी। वह कीमत देगा ?" संत ने पूछा।

कीमत ? जयदेव ने सोचा उसके पास ऐसा क्या है, जो कोई ले जाये, या मांग ले ? होस्टल में रहता है, दो जोड़ी कपड़े हैं और न आगे नाथ न पीछे पगहा।

"क्यों, कीमत के नाम से डर लगता है क्या ? अरे, देखो, इसे फोकट का आनन्द चाहिये" दूसरों की ओर देखकर महात्मा ने जयदेव की खिल्ली उड़ायी ।

जयदेव ने सोचा, अधिक से अधिक संत कहेंगे कि पढ़ाई छोड़कर वह उनके साथ हो ले। वह इसके लिये भी मानसिक रूप से तैयार होकर बोला, "कीमत दूँगा, पर देने जैसी होनी चाहिये। मेरे वश की बात होनी चाहिये।"

"हाँ, हाँ ! तेरे वश की बात है। बोल, देगा कीमत ?" संत ने उसे ललकारा।

निर्भय जयदेव ने उसी ललकार भरे स्वर में कह दिया, वह कीमत देगा।

तो, आनन्द की कीमत तेरी अहंबुद्धि है। ला निकाल उसे", और, अपने चरणों को ओर इशारा करते हुए संत बोले, "उसे यहाँ रख दे।"

"ठीक है, मैं अपनी अहं बुद्धि आपको सौंपता हूँ।"

"तो जा मौज कर। यहाँ आनन्द का कोई घाटा नहीं है। अखण्ड आनन्द है, धनानन्द।"

जयदेव निरुत्तर था।

इसके बाद जब तक पागलानन्द रहे, वह उनकी संगत में रहा। उसे बताया गया कि पागलानन्द ने कभी किसी स्कूल-कालेज का दरवाजा नहीं देखा है। उन्हें जो ज्ञान मिला है, संतों के चरणों में बैठकर ही मिला है। जब पागलानन्द शहर से गये, तो उन्होंने डा० मेहता से कहा "तुम इतना कमाते हो, और एक महात्मा (जयदेव) व्यर्थ कष्ट पा रहा है। होस्टल में उसका खर्च कौन देता होगा ? क्या जयदेव तुम्हारे साथ नहीं रह सकता ?"

संत पागलानन्द ने इस तरह उसे डा० मेहता के परिवार का सदस्य बना दिया। संत के पास ऐसा कुछ था, जिसके प्रति डा० मेहता जैसे विद्वान की भी पूर्ण श्रद्धा थी। पागलानन्द के वचन डॉ० मेहता ने गुरु आज्ञा के रूप में स्वीकार कर लिये। उस साल जयदेव बी० ए० फाइनल में था, और किताब कापी का पूरा प्रबंध हुए बिना भी वह पूरे विश्वविद्यालय में दूसरा पोजीशन लेकर प्रथम श्रेणी लाया था।

इसके बाद उसने कई पापड़ बेले। एम०ए० की पढ़ाई छोड़कर वह बम्बई गया। बम्बई में उसने फिल्मी दुनिया देखी। कई छोटी-मोटी नौकरियाँ कीं। और एक दिन वह फिर से रामनगर में प्रकट हो गया और उसने वहाँ अखबार निकालना शुरू कर दिया।

जयदेव जब तक सोचता, बिन्दो दूर रहती, और जैसे ही वह मन की लगाम ढीली करता और बुद्धि को विश्राम देता, कुल्लो, बिन्दो और पेमा का मिला-जुला रूप उसकी आँखों के पीछे तैरने लगता। कुल्लो और बिन्दो उसके अंतर्मन में स्थान बनाकर उसके बाह्य जीवन से विदा हो चुकी थीं। यह पेमा मन के उन वर्जित कोनों में क्यों आ रही है ?

क्या उसे फिर डा० मेहता से परामर्श लेना चाहिये ? उसे ध्यान आया डा० मेहता कहते थे मनोविश्लेषण से यदि किसी व्यक्ति की कोई मन की पुरानी ग्रंथि खोली जाती है, तो एक ऐसी भी स्थिति आती है जबकि विश्लेषक अपने को रोगी के उन्हीं भावनाओं का केन्द्र पाता है, जो इस ग्रंथि के मूल कारण रहे हैं।

भावनाओं को रंग बदलते देर नहीं लगती। पहले पहल जब पांचाली ने पेमा की बात चलाई तो वह पूर्णतः उदासीन था। उसकी बात सुनी तो मन में करुणा जगी और देखते-देखते ही भावना का रूप अब सहानुभूति और स्नेह का हो गया है।

मंगलवार को जब वह अर्जुन के घर पर पेमा से मिला तो जयदेव ने उससे यों ही हाल-चाल पूछे थे। "तुम्हारे धन्ना सेठ कैसे हैं ?" उसने पूछा था।

'धन्ना सेठ' लाला और धन्ना दोनों के लिये इन लोगों द्वारा संयुक्त रूप से प्रयुक्त होता था। पेमा ने कहा, "वो अपने सेठ की खास चाकरी कर रहा है। अबला सदन के पिंजरे में ये लोग कोई नया पंछी फाँसकर लाये हैं और उसे चुग्गा-पानी देते-देते वो देर से घर आ जाता है और अपने-आप रोटी लेकर चुपचाप खा-पीकर सो जाता है। इन दिनों तो सुबह भी वह दबा-दबा रहता है और मुझसे आँख नहीं मिलाता। क्या आप कोई जादू-टोना जानते हैं ?"

"एक बार छदामी लाला ने भी मुझसे यही सवाल किया था। लगता है, कुछ जादू सचमुच अपने पल्ले पड़ ही गया है। जरा, तुम बचकर रहना।"

"अव क्या बचूँगी। मुझ पर तो जादू हो चुका है।" इतना कहकर पेमा रुकी नहीं, जैसे उसने जरूरत से ज्यादा बात कह दी हो। हाल बताकर बेहाल पेमा फिर पांचाली के पास चली गई।

जयदेव ने यह भी देखा कि अर्जुन और पीयूष की नजर पेमा पर हुए इस जादूई प्रभाव पर अभी नहीं पड़ी थी, किन्तु पांचाली ने इस सद्यः समर्पित पेमा को अपने सहज नारी स्वभाव के कारण पहले ही पहचान लिया था।

और बड़ी ऊहापोह के बाद सोते-सोते आखिर जयदेव ने भी स्वप्न में आई पेमा से पूछ ही लिया कि क्या वह भी कोई जादू-टोना जानती है?

×× ×× ××

सुबह जयदेव जब अपने कमरे से निकल रहा था, तो विद्रोही आते दिखे। विद्रोही अब अकेले नहीं थे, अब उनके पीछे राज्य की पूरी सरकार थी। उन्होंने अपने दल के जिस सदस्य को पिछले आम चुनावों में स्वयं चुनाव से हटकर भारी बहुमत से जिताया था, अब वह स्वास्थ्य मंत्री है। उनका एक अन्य साथी राजस्वमंत्री है, और संक्षेप में अब सरकार उन्हीं की है।

आते ही विद्रोही ने कहा, "ये दार्शनिक लोग भी पूरे खब्ती होते हैं। मालूम है, तुम्हारे डाक्टर मेहता ने इस सरकार में शिक्षामंत्री बनने से इन्कार कर दिया।"

"मेरे ख्याल से उन्होंने ठीक ही किया।"

"हाँ, ठीक ही किया! खाक ठीक किया? अच्छा तुम उन्हें ठीक इसलिये बता रहे हो कि तुम भी थोड़े-बहुत दार्शनिक हो। दर्शन में तुम्हारा अधूरा एम० ए० पूरा हो गया कि नहीं।?"

"अब जरूरत नहीं रही। खैर, यह तो बताओ डा० मेहता ने कारण क्या दिया?"

विद्रोही बोले, "उनका कहना है कि यह काम किसी ऐसे व्यक्ति का है,

जो सक्रिय राजनीति में हो। उनकी राजनीति में सक्रियता तो दूर, सामान्य रुचि भी नहीं है।"

जयदेव ने कहा, "मैं समझता हूँ, यों भी उन्हें जो प्रतिष्ठा प्राप्त है, वह अच्छे-अच्छे मंत्रियों के लिये ईर्ष्या की वस्तु है।"

"कहते थे' उन्हें सरविस का तो मोह नहीं है, किन्तु वे स्वयं को मंत्रिपद के योग्य नहीं पाते। मुझसे कह रहे थे, मैं मंत्री बन सकता हूँ, बन नहीं सकता। पूछ रहे थे, मेरा भी कहीं चांस-वांस है क्या? यदि हो, तो वे मुझे समय-समय पर सलाह देने के लिये तैयार रहेंगे।"

जयदेव बोला, 'सवाल तो उन्होंने सही किया। अब आपको भी कहीं फिट होना चाहिये। कोई उपचुनाव आ रहा है क्या?"

"क्यों उप-चुनाव की क्या जरूरत है? क्या विद्रोही की आज की स्थिति एक चुने हुए विधायक से किसी तरह कमजोर है? अरे भाई, चुनाव लड़कर नये लोगों को आने दो।"

इस पर जयदेव ने कहा कि और भी कई आयोग और मण्डल वगैरह हैं, जिनका अध्यक्ष पद मंत्री के समकक्ष माना जाता है। विद्रोही बोले, देखा जायेगा सरकार को जमने तो दो। अभी पता नहीं जाटों और ठाकुरों की साम्प्रदायिक राजनीति से आगे क्या नक्शा बैठता है।

विद्रोही ने थोड़ी देर बैठकर अगले अंक का प्रथम पृष्ठ तैयार किया और जयदेव को दिखाया।

"क्यों ठीक रहेगा न? आखिर तुम पत्रकार हो, चारण भाट तो नहीं। चाटुकारिता के दिन अब लद चुके हैं। शीर्षक वगैरह बना लेना और मैं समझता हूँ, अब तुम्हारा पत्र चल निकलेगा।"

ठीक है। इसमें से मैं डा० मेहता का समाचार अलग से फ्लैश करूँगा, बाकी ठीक है।"

10

लाला ने अपने जनेऊ में लगी चाबी से आलमारी खोली और अपना गिलास बनाया। इसमें पहले वे सदा की भाँति अपने निर्विघ्न एकांत की

व्यवस्था कर चुके थे। आज वे अकेले ही कुछ विचार करना चाहते थे, इसलिये धन्ना को उन्होंने छुट्टी दे दी थी।

दूसरी रात को उन्होंने यह पता चला लिया कि चंदो मंदबुद्धि है। इसलिये उन्होंने अधिक साहस से काम लिया। उस दिन न चाहते हुए भी उन्हें नशा अधिक हो गया था, जिसके कारण उनकी स्नायुविक उत्तेजना मांसल उत्तेजना को बहुत पीछे छोड़ गई थी। इसलिये दूसरा अवसर मिलने पर उन्होंने अपने आनन्द की अवधि का खासा विस्तार किया और चंदो की सम्पूर्ण अनावृत देह को उन्होंने अपनी आयु के अनुपात में भोगा। फिर भी वे इस जड़ सम्भोग से वह तृप्ति नहीं पा सके, जो प्रतिरोध के बावजूद पेमा उन्हें दे चुकी थी।

पेमा के बारे में धन्ना ने लाला को बता दिया था कि वह उसके वश में नहीं है, क्योंकि उस अखबार वाले से और पांची के परिवार से सम्बंध जोड़कर उसने अपने लिये नयी दुनिया बसा ली है। वह इस बर्र के छत्ते को नहीं छेड़ना चाहता। जयदेव से अब लाला भी कुछ भय खाने लगे थे। फिर इनके साथ लालू खाँ का दामाद, वकील हरिमोहन, नेता विद्रोही और जाने कौन-कौन हैं। सुना है, डाक्टर मेहता भी इन्हीं के पक्ष के आदमी हैं।

इस टोली के लोगों ने हवा का रुख पहचान लिया था, और लाला पचास हजार की महंगी भूल कर बैठे थे। उन्होंने तय किया, इस बार विद्रोही चंदा मांगने आये, तो वे उसे इक्यावन की जगह मौका देखकर एक सौ एक या पाँच सौ एक देकर प्रसन्न करेंगे और उससे मेल-जोल बढ़ायेंगे। जयदेव के अखबार को वे सौभाग्य ट्रेडिंग कम्पनी और सी० एल० लाला एण्ड सन्स के विज्ञापन देकर कुछ लिहाज मुरौवत पैदा करेंगे।

लाला यह सोचकर कुछ आश्वस्त हुए कि इस बार स्थिति का उन्होंने सही अनुमान लगा लिया है और अब वे अपने पैरों के नीचे घास नहीं जमने देंगे। अबला सदन को अब वे अपने हाल पर छोड़ देंगे और लोगों को यह मौका न देंगे कि कोई उन पर उंगली उठाये। शायद पांची और पेमा की तरह चंदो भी घाटे का सौदा रहे। जरा सी बात के लिये उन्हें धन्ना जैसे नीच

लोगों को मुँह लगाना पड़ता है और उनसे दबना भी पड़ता है। चंदो के साथ दोनों बार के अपने अनुभव से उन्हें कुछ ग्लानि हुई और उन्होंने सोचा कि वे अब अपना ऐश-विलास कम कर देंगे।

लाला ने गिलास खत्म किया। आलमारी में ताला लगाया और भोजन के लिये हवेली में आ गये।

उधर लाला के यहाँ से जल्दी छुट्टी पाकर धन्ना घर पहुँचा, तो देखा पेमा रोटी बना रही है। उसने पेमा से रोटी मांगी।

"क्यों आज लाला की जूठन नहीं मिली क्या ?"

"लाला के यहाँ मैं माल खाता हूँ, जूठन नहीं। तू भी मान जाती तो आराम से रहती।" धन्ना ने ठंडी साँस भरी।

"तो आज लाला के यहाँ माल बीत गये क्या, जो मुझसे रोटी मांग रहे हो ?"

"अरी नहीं। रोटी तो मैं रोज घर पर ही खाता हूँ" धन्ना ने सफाई दी।

"यह भी रोटी नहीं है। यह इस घर की जूठन है। पर यह बात तुम्हारी समझ में नहीं आयेगी। बैठो और आराम से रोटी खाओ।"

धन्ना देख रहा था। पांसा पलट चुका है। पहले इस छोकरी के मुँह में जबान नहीं थी। पहले मैं सुनाता था, अब सुनना पड़ रहा है। इसलिये संधि के स्वर में पूछा "पांची के क्या हाल हैं ? मजे में है न ?"

"क्यों, अभी तक लार टपकती है क्या ? अब वह तुम लोगों को घास नहीं डालेगी। तुम तो अपनी नई चिड़िया की खबर लो, जिसे हाल ही में पकड़ कर लाये हो।"

"बेचारी अनाथ है।"

"क्यों, उसको तो दो-दो नाथ मिल रहे हैं न ?" पेमा ने तुनक कर कहा।

"और पागल है। उसे देखकर बड़ी दया आती है।"

"इसलिये रात को देर से आते हो ?"

धन्ना जानता था, पेमा ने अपने ही कटु अनुभव से यह ज्ञान पाया है कि देर रात तक लाला की बैठक जमने का अर्थ क्या है।

"पागल न होगी, तो तुम लोग उसे कर दोगे," पेमा ने फिर कहा।

बहुत दिन बाद इन लोगों की बात हुई थी। धन्ना इतने दिन गुमसुम रहा। उसे प्रसन्नता थी कि डंडे उठाने वाला धन्ना इस समय दुम दबाये बैठा है।

धन्ना ने कहा "ऐसा मत बोल, भागवान। चन्द्रमा पर थूकने से थूक अपने ही ऊपर गिरता है। वे तो मालिक हैं, बड़े आदमी हैं। बड़े दयालु हैं। हम लोग तो उनका नमक खाते हैं।"

"अरे वाह री दयालुता और बड़प्पन ! अपने नमकहलाल सेवक की पत्नी पर जो दया और जो बड़प्पन उन्होंने दिखाया है, वह मुझे भी मालूम है। और अब तो शहर के सारे लोग तुम दोनों के नाम पर थूकते हैं। थूकने से तुम किस-किस को रोक लोगे ?"

धन्ना में उससे आँख मिलाने की ताब न थी। वह चुपचाप रोटी खाकर उठ ही रहा था कि पेमा ने उसकी थाली में थोड़ा गुड़ डालकर कहा, 'यहाँ तो यही माल है।"

धन्ना ने बीड़ी सुलगाई और उठकर अपनी खाट की तरफ चल दिया।

11

मंत्रिमण्डल के साथ विद्रोही भी बदल गये थे। अब छोटे-मोटे कामों के लिये उनके पास आने वाली जनता को वे घर पर नहीं मिल पाते थे। वे बहुत जल्दी नहा-धोकर घर से निकल जाते थे और उनसे जो मिलना चाहे, उसे विधायक निवास के कमरा नं० 84 में या पार्टी के कार्यालय में उन्हें ढूँढ़ते हुए पहुँचना होता था, और फिर भी कोई गारंटी न थी कि प्रोफेसर मिलेंगे या नहीं। इन दिनों वे सिविल लाइन्स और सचिवालय में भी पाये जाते थे।

लोग कहते हैं, एक दिन विद्रोही ने सर-दर्द की शिकायत की। पता नहीं कैसे कहाँ टेलीफोन खड़के, स्वास्थ्य मंत्री उनके घर आये और देखते-देखते विद्रोही का घर काटेज वार्ड बन गया। तहसीलदार तो ड्यूटी लगाकर वहीं बैठ गया क्योंकि जिलाधीश जब उनके हाल पूछने आये तो उन्होंने तहसीलदार से कहा था कि खुद राजस्व मंत्री ने उन्हें मिजाज-पुर्सी के लिये यहाँ पहुँचने की ताकीद की थी।

आज सुबह चूँकि विद्रोही को विशेष काम था इसलिये उन्होंने रोज से दस-बीस मिनट पहले ही अपनी सुवेगा संभाल ली। यह सुवेगा पिछले आम चुनावों के बाद उनके पास यकायक देखी गई थी और कोई नहीं जानता था कि यह कैसे खरीदी गई और क्या इसके खरीददार सचमुच विद्रोही ही थे। इस बीच उनकी सुवेगा चली बहुत कम थी, क्योंकि सुवेगा के पेट्रोल से पहले, खुद उनकी गृहस्थी चलाने वाला पेट्रोल ज्यादा जरूरी था। मगर इस सुवेगा ने पिछले दिनों आगे-पीछे की पूरी कसर निकाल कर खासा माइलेज तय कर ली थी।

आमतौर से विद्रोही अपनी सुवेगा की पिछली सीट पर होते थे और उसे कोई दूसरा ही चलाता था। किन्तु आज विद्रोही स्वयं सुवेगा ड्राइव करने की जोखिम उठा रहे थे। जयदेव ने सच कहा था। सरकार के पास ऐसे कई पद हैं, जिनमें से किसी एक पर उन्हें भी चिपकाया जा सकता है। अभी हाथकरघा बोर्ड के अध्यक्ष की कुर्सी खाली है। पिछले अध्यक्ष को भगवान ने अपने पास बुला लिया था, और इसके लिये उन्होंने भगवान को धन्यवाद जरूर दिया होगा। यदि वे इस परिस्थिति में जिन्दा होते, तो आज जरूर उनकी टांग खींची जाती।

विद्रोही ने यह बात 'उपयुक्त स्थानों' तक पहुँचा दी थी। किन्तु स्वयं भी सतर्क थे। राजनीति में सतर्कता बहुत जरूरी है। जहाँ वे बात पहुँचाते, वहाँ वे स्वयं भी पहुँचते और देखते कि पानी कितना है। आज एक बार वे मुख्यमंत्री से और मिल लेना चाहते थे। किन्तु उससे पहले वे स्वास्थ्य मंत्री और राजस्व मंत्री के पास जा रहे थे, ताकि जब तक वे

मुख्यमंत्री निवास पहुँचे, उनके दोनों मित्र उनके लिये उचित वातावरण तैयार कर दें।

स्वास्थ्य मंत्री अस्वस्थ थे, किन्तु घर पर ही। अपना इलाज भी लगता है, खुद ही कर रहे थे क्योंकि घर पर नर्स-डाक्टरों की चहल-पहल न थी। किन्तु निजी सचिव ने विद्रोही को घर में जाने दिया।

घर में भीतर पहुँचने पर उन्हें पता चला कि यह अस्वस्थता केवल राजनीतिक है। अस्वस्थता के नाम पर उन्हें घर को घेरे रहने वाली भीड़ से कुछ राहत मिली है। विद्रोही ने मंत्री महोदय के साथ नाश्ता किया और काम की बातें खत्म करके अपने दूसरे मंत्री मित्र के यहाँ पहुँचे।

जब वे राजस्व मंत्री के यहाँ पहुँचे आठ बजने वाले ही थे। आठ बजे से साढ़े नौ बजे तक मंत्री महोदय जनता से मिलते थे। किन्तु मंत्री महोदय अपने कक्ष में साढ़े आठ बजे तक नहीं आये और विद्रोही से बात करते रहे। फिर वे विद्रोही को बरामदे तक छोड़ने आये और उन्होंने अपना जन सम्पर्क पेंतीस मिनट लेट प्रारम्भ किया।

मुख्यमंत्री से मिलने जाते समय विद्रोही ने सोचा, शकुन अच्छे हैं। हाथ-करघा बोर्ड में स्वास्थ्य मंत्री और राजस्व मंत्री दोनों ही अपने आदमी घुसाना चाहते थे, और दोनों ने मिलकर उसे मण्डल के दो नामजद सदस्यों की नियुक्ति के लिये छह-सात व्यक्तियों का पैनल दिया था और आग्रह किया था कि वह इन्हीं में से किन्हीं दो के लिये सिफारिश करे।

मुख्यमंत्री दिल्ली के लिये रवाना हो रहे थे, इसलिये कार की खिड़की पकड़ कर उन्होंने दो मिनट विद्रोही से बात की और निजी सचिव को बुला कर निर्देश दिया कि हाथकरघा बोर्ड के अध्यक्ष पद पर प्रोफेसर रामचरण विद्रोही की नियुक्ति का आदेश आज ही जारी करवा दें। मुख्यमंत्री ने विद्रोही को केवल एक हा सदस्य के नाम की सिफारिश की गुंजाइश बताई, क्योंकि एक पर उनके ही एक व्यक्ति को लगाया जाना था।

वहाँ से विद्रोही सीधे विधायक निवास के कमरा नं० 84 पर पहुँचे। पहला टेलीफोन कैन्टीन को किया गया। इसके बाद एक-एक करके दैनिक

पत्रों के कार्यालयों को यह समाचार टेलीफोन पर बताया गया। एक टेलीफोन पीयूष को किया गया कि यह खबर वह जयदेव तक पहुँचा दे।

प्रो० रामचरण विद्रोही को बोर्ड के अध्यक्ष के नाते सिविल लाइन्स में मकान और मंत्री के समान वेतन और सुविधायें दी जा रही थीं। यह खुश-खबरी जब विद्रोही अपने घर देने जाना चाहते थे, तो भाभी के हाथ से प्रसाद खाने की भूख मित्र लोगों को फिर लगी। विद्रोही घर पहुँचना चाहते थे और कह रहे थे, सुवेगा की सवारी एक बार और कर लें, इसलिये उन्हें सुवेगा पर बिठाकर घर पहुँचाया गया और भाई लोग मिठाई-नमकीन की टोकरियाँ लाने बाजार पहुँच गये। आवश्यकता ने इसके लिये एक कार का आविष्कार कर लिया था।

विद्रोही के घर पर मिठाई की कार और जयदेव पहले पहुँचे, उनकी सुवेगा बाद में आई। जयदेव ने भाभी को यह खुश-खबरी सुनाकर मिठाई मांगी ही थी कि मिठाई और विद्रोही के ढेर सारे राजनीतिक मित्रों ने आकर घर भर दिया। संयोग से पांचाली भी वहीं थीं और भाभी यह घोषणा कई बार कर चुकी थीं कि उनके घर में इस लड़की का पैर शुभ रहा है। पहले जब वह आई थी, तभी से यह नई सरगर्मी विदोही के जीवन में आई और आज यह आई, तो खुशखबरी साथ लाई।

विदोही ने इस बात का पूरा श्रेय जयदेव को ही दिया कि पत्रकार के नाते उसी ने पहले यह बताया कि उनकी नियुक्ति किसी आयोग या मण्डल में ऐसे पद पर हो जायेगी, जो मंत्रिपद के समकक्ष हो।

"याद है जयदेव? उस दिन जब डा० मेहता के मंत्रिपद अस्वीकार करने पर अपनी चर्चा हुई थी, तुमने कहा था कि मुझे किसी उपचुनाव के पिछले दरवाजे से घुसने की जरूरत नहीं है, क्योंकि विधायक से अधिक वर्चस्व तो मेरा यों ही है।"

जयदेव को यह स्वीकार करना पड़ा, यद्यपि इसकी आधी बात खुद विद्रोही ने कही थी। उसने कहा, "अब मैं पत्रकार के रूप में एक भविष्यवाणी आज और करता हूँ। अब विद्रोही जी हम जैसे छोटे-मोटे लोगों को भूलने वाले हैं।"

विद्रोही ने इसका जोरदार प्रतिवाद किया। श्यामा भाभी ने भी उनका पक्ष लिया, पर टेढ़ी तरह से। बोलीं, "अगर ये भूल जायेंगे तो मैं तो नहीं भूलूँगी ? तुम तो मुझसे मिलने आ जाया करना।"

सिविल लाइन्स पहुँचने में विद्रोही ने देर नहीं की। दूसरे दिन ही वे सपरिवार नये मकान में जाकर जम गये। उन्होंने जयदेव को पहले दिन अपने साथ ही रखा। 'बात का धनी' अब सरकार द्वारा विज्ञापनों के लिये स्वीकृति का हकदार हो चुका था। विद्रोही ने स्वीकृति उसे दिलाई और कुछ अन्य स्थानों पर भी विज्ञापन के लिये उसकी सिफारिश की।

"पत्रकार को तुम स्वतंत्र ही रखो। किसी का पिछलगू बनना ठीक नहीं है। अगर कभी जरूरत पड़े, तो हम सहयोग मांग लेंगे। यह याद रखो कि राजनीति में पड़े हुए लोग आलोचना का बुरा नहीं मानते। वे तो उस आलोचना में से भी अपना समर्थन पा लेते हैं।"

जयदेव को यह बताने की जरूरत न थी। वह तो पत्र की स्वतंत्रता पर अर्थाभाव के अंकुश से पीड़ित था, अन्यथा प्रकाशन के लिये आई सामग्री को कई कठिन कसौटियों पर परखता। "यदि 'बात का धनी' अपने पैरों पर खड़ा हो सके, तो वास्तव में वह बात का धनी हो जायेगा," जयदेव ने बताया।

जयदेव को अकस्मात एक सूझ आई। उसने टेलीफोन उठाया और लाला छदामी लाल से बात की। "मैं जयदेव बोल रहा हूँ, प्रोफेसर विद्रोही के यहाँ से," फोन पर उसने लाला को कहा।

लाला ने प्रोफेसर साहब को नमस्कार अर्ज कराने के बाद अपने योग्य सेवा बताने को कहा, "कभी हमें भी सेवा का मौका दीजिये।"

जयदेव ने लाला की बात विद्रोही से करवाई, और विद्रोही ने लाला से पत्र को सहयोग देने का अनुरोध किया। लाला ने तुरन्त दो विज्ञापन छह माह के लिये पत्र को देने की घोषणा की। बोले, "आप सम्पादक जी को भेज दीजिये, वे आकर इस बारे में आवश्यक लिखा-पढ़ी कर लेंगे।"

विद्रोही को लाला के इतने आसानी से कट जाने पर आश्चर्य नहीं हुआ। जयदेव से बोले, "लाला कुछ दिन नई सरकार की भरपूर खुशामद करेंगे। पर तुम्हें यकायक लाला की बात सूझी कैसे?"

जयदेव बोला, "लाला परिस्थितियों के कारण हम लोगों से दबे हुए हैं। उस समय पांची काण्ड को लेकर अबला सदन का भंडा-फोड़ न करने का अपना निर्णय दूरगामी सिद्ध हुआ। आज यदि हम ऐसा करना चाहें तो हमारी बात सप्रमाण होगी, क्योंकि वहाँ से मुक्त हुई दो अबलायें हमारी बात को बल देंगी।"

"अभी और कुछ दिनों मौन धारण किये रहो। यदि कभी जरूरत पड़ी, तो सुनार की सौ के बजाय लुहार की एक ही ठीक रहेगी। सुना है, पिछली सरकार से इन्होंने काफी फायदा उठाया था। कुछ मसाला वहाँ भी मिल जायेगा।"

विद्रोही ने जयदेव की तात्कालिक वित्तीय समस्या हल करा दी। उनसे मिलने आये पाँच व्यक्तियों को एक सौ एक रुपये के एवज में 'बात का धनी' का आजीवन सदस्य बना दिया गया।

जयदेव के सर से एक बड़ा बोझ उतरा। वह बार-बार पत्र का प्रकाशन व्यय पीयूष से मांगने में संकोच करने लगा था। पिछली बार पीयूष ने कैश में से धन न देकर उसे अपने ससुर लालू खाँ से दो सौ रुपये दिलवाये।

12

कवि घायल सत्रह बार अस्पताल में आ चुके थे। बड़े अस्पताल का स्टाफ अपने इस पुराने ग्राहक से परिचित हो गया था।

उन्हें क्या रोग होता था, यह न तो वे जानते थे, और न उनका इलाज करने वाले। कवि घायल को यहाँ होटल जैसी सुविधा उपलब्ध थी। एक मामूली सी शर्त पर वे बिना चषक-पान किये रात का खाना भी अस्पताल में

खा लेते थे। शर्त यह थी कि उन्हें खाना खिलाने के लिये सिर्फ सिस्टर विलसन ही भेजी जायें। मिस मिलीसेन्ट विलसन की आँखों में एक वार झाँकने पर कवि घायल को एक पैग का नशा आ जाता है, यह बात उनके कविमित्र जानते थे।

मिस विलसन को कविता में रुचि हो न हो, इस कवि में उनकी कुछ रुचि अवश्य थी। दिन की ड्यूटी होने पर भी वे एक बार रात को आकर कवि घायल को खाना खिलाने में ऐतराज नहीं करती थीं। कवि घायल एक वात से हैरान थे। सिस्टर उसकी बात-बात पर खिलखिलाती थी, किन्तु कभी वे उसे कविता सुनाना चाहते तो वह यह कहकर भाग जाती थी "ओ बाबा, तुम हमको भगाना मांगता।"

कवि घायल अस्पताल में आते, तो उनके शरीर की तरह-तरह से परीक्षा की जाती। उनके थूक की, खून की, पेशाब की, दस्त की और न जाने किन-किन चीजों की जाँच होती। उनका रक्तचाप और हृदय की गति नापी जाती। टी० बी० के सन्देह में उनके सीने को एक्सरे से भीतर तक देखा जाता। ये सब क्रियायें लम्बी चलती थीं, और इनमें से किसी एक का उपचार हुए बिना भी करीब महीने भर बाद उन्हें स्वस्थ घोषित कर दिया जाता था।

घायल के चारों ओर रोगी खाँसते, कराहते, चिल्लाते और कभी किसी की दशा बिगड़ती या कोई मर भी जाता था। किन्तु कवि का कहना था, यहाँ उन्हें शान्ति मिलती थी वे किसी को दर्द से कराहते हुए सुन सकते थे, अपने प्रियजन की मृत्यु पर हुआ विलाप सुन सकते थे, किन्तु घर पर अपनी सन्तान का रोना उनसे नहीं सुना जाता था।

किन्तु इस बार कवि घायल सचमुच घायल हो गये थे। उनके सर में, घुटनों पर और नाक के ऊपरी हिस्से पर काफी चोट थी और इस बार उनके विशेष इलाज के लिये स्वयं स्वास्थ्य मंत्री ने खास ताकीद की थी। वे चलती बस में चढ़ते हुए गिर पड़े थे और लोगों ने उन्हें पहचान कर अस्पताल भिजवा दिया था। अस्पताल आते ही उन्होंने पीयूष को इस दुर्घटना का समाचार फोन द्वारा दिलवाया और पीयूष के माध्यम से लोगों को पता चला कि कवि घायल हो गये हैं।

पीयूष और जयदेव जब घायल से मिलने आये तो दुर्घटना का कारण उन्हें मालूम हो पाया। उस दिन उन्होंने रात तक संघर्ष करके कविता पूरी की थी। कविता उनके मानस में इतने जोर से घुमड़ी कि दिन भर कुछ खाने का उन्हें होश नहीं रहा।

"वर्ना, तुम क्या समझते हो घायल को? पूरे शहर के सभी मयखाने अकेला खाली कर सकता हूँ। खाली पेट होने की वजह से चढ़ गई।"

"और तुम भी तो बस पर चढ़ रहे थे?" पीयूष ने उन्हें याद दिलाया। "रात को बस में ऐसी भीड़ तो होनी नहीं चाहिये कि कोई लटकता हुआ गिर जाये।"

"बस में कोई भीड़ नहीं थी। मैं तो यों ही उस समय चलती बस में चढ़ना चाहता था। जब तक बस खड़ी रही, मैं भी खड़ा रहा, और बस को चार कदम चले जाने देकर फिर मैंने उसमें बैठने की कोशिश की थी। "पट्टियों में बँधे कवि ने कैफियत दी।

'तो यहाँ अस्पताल में आने के बाद डाक्टरों ने तुम्हारे शरीर में अलकोहल होना भी पाया होगा?" जयदेव ने पूछा।

'अपना रुतबा है, जयदेव भाई। ऐसी छोटी-मोटी बातों पर यहाँ कोई ध्यान नहीं देता। डाक्टरों ने पूछा था, पी रखी है, मैंने कह दिया हाँ, बात खत्म," कराहते हुए घायल ने बताया।

'मिस विलसन जो इन लोगों की बात सुन रही थीं, बोली, "आपका दोस्त एक दम रोमांटिक है। बोलता हम हैवन में हैं और मेरे को ऐन्जेल बताता।"

कवि घायल ने कहा, "अपनी तो उस वक्त मौत ही मान लो, जब शराब जैसी वफादार चीज भी हमारे साथ दगाकर गई। मरने के बाद आदमी स्वर्ग में ही तो जायेगा।"

"तुम स्वर्ग में तो नहीं हो," पीयूष ने कहा, "किन्तु जहाँ हो, वहाँ से स्वर्ग अधिक दूर नहीं है। स्वर्ग के कुछ यात्री थोड़ी देर यहाँ विश्राम करते हैं।"

"और तुम एक भूल और कर रहे हो, "जयदेव बोला," शराब तुम्हारे

प्रति वफादार नहीं रही है, वफादार तो तुम रहे हो, जो कोई शाम बिना जाम के नहीं जाने देते ।"

मिस विलसन बोलीं, " हियाँ इसका दारू एक दम बंद है ।"

कवि घायल ने सिस्टर विलसन की आँखों में झाँकते हुए कहा', "ये कौन कहता है ?"

पीयूष ने बात दबा दी । कवि घायल ने अपना एक पेग ले लिया था। थोड़ी देर बाद दोनों मित्र वहाँ से उठकर चले आये ।

× × ×

पीयूष ने उसी दिन डा० मेहता को घायल के साथ हुई दुर्घटना और उसके कारण का ब्योरा दे दिया । डा० मेहता ने कहा, "लगता है, हम लोगों से कुछ देर हो गई । उस दिन कविगोष्ठी से आकर मैंने लीलू से कहा था कि एक दिन वह घायल को घर पर बुलाकर समझाये । अब हम दोनों उसे ठीक होते ही अपने यहाँ आने को कह भी आयेंगे और उसे देख भी लेंगे ।"

मेहता दम्पति दूसरे दिन घायल से मिलने आये । लीला बेन ने स्नेह से पूछा, अरे भाई, यह क्या कर डाला तुमने ?"

"कुछ नहीं, जरा ऐक्सीडेंट हो गया था ।"

"ऐक्सीडेन्ट हुआ, या जान-बूझकर किया गया ?, " यह सवाल डा० मेहता की ओर से हुआ ।

"मैं जानबूझ कर तो नहीं गिरा था" घायल ने सफाई दी, "उस वक्त जानने-बूझने की मेरी स्थिति कहाँ थी ?"

"और इस स्थिति को लाने का प्रयास तुमने जान-बूझकर किया था। अपने मन पर यह परदा डालने की जरूरत तुम्हें क्यों पड़ती है ? इसके कारण पर विचार करो और जब यहाँ से छुट्टी मिले, तो हमें बताना ।"

लीला बेन ने डा० मेहता को रोका। घायल के माथे पर स्नेह से हाथ रखते हुए वे बोलीं, "अभी अपना मनोविश्लेषण रहने दीजिये । आपको तो ठीक से मिजाजपुर्सी करना भी नहीं आता । मरीज से उसके दुःख-तकलीफ की बात पूछिये, उसे अपने सवालों के बोझ से मत दबाइये ।"

घायल चाहे कहे नहीं, पर इस बार के अनुभव से शराब के प्रति उसकी आस्था कुछ डिगी थी। जितनी बार उसे दर्द उठता, उतनी ही बार इस आशा पर आघात होता। क्या वह शराब छोड़ने की बात सोचे ? मम्मी ने डाक्टर साहब को टोका, तब उसे उनके प्रश्न बुरे नहीं लगे थे, खुद वही स्वयं को अपराधी जैसा मान रहा था। शराब तो एक प्रतीक है, इस समूचे समाज पर व्यंग का करारा तमाचा है, जिसमें वह काव्य का विषय बने। दर्द किस बात का है ? इस समाज में जिन्दा रहने का ही तो सारा दुःख-दर्द है, जिसे शराबी शराब में और भक्त अपनी पूजा और भक्ति में डुबोना चाहता है। यह ऐसी दुनिया है, जहाँ समझदार की मौत है।

डाक्टर मेहता लीलू की झिड़की सुनकर मुस्कुराते रहे, और बोले, "हमने तो प्रेम से पूछा है। हमारा आग्रह प्रेम का है। अरे भाई, आदमी जो करता है, कभी उसके बारे में सोच ले, तो क्या हर्ज है ? क्यों घायल ?"

"जी, हर्ज ? बिल्कुल नहीं। इसमें हर्ज क्यों होगा ?"

"वही कहता हूँ। हमें अपनी आस्थाओं का भी कभी-कभी परीक्षण करना चाहिये। मैं तो कहता हूँ आस्था की परीक्षा ही आपत्ति में होती है। कोई गिरता है, चोट लगती है, दर्द होती है। लोग उससे पूछते हैं, चोट कैसे लगी। वह भी अपने से यह सवाल पूछे। कैसे लगी, इस विषय में जिज्ञासा दूसरों को होगी, खुद की जिज्ञासा है, चोट क्यों लगी ? क्या इसके कारण में कहीं उसका अपना योगदान तो नहीं है, यत्किंचित, थोड़े से भी थोड़ा ?" एक बार वे चुप हुए, फिर लीलाबेन की ओर देखकर हँसकर उन्होंने जोड़ा, "कोई जल्दी नहीं है, घायल। मेरा तो कुछ स्वभाव बन गया है, कोई बात समझ में आती है, तो चुप नहीं रहा जाता।"

घायल ने बात समझी, वे उसे अप्रत्यक्ष रूप से यह कहना चाहते हैं कि अकेले शराब का ही नहीं, शराब के प्रति उसके मन में जो आस्था है, दोष उसका भी है। सहसा उसके मुँह से निकला, "आदत पड़ गई है कुछ, पिये बिना सूना-सूना सा, बेजान सा होने लगता हूँ।"

"आदत ? अरे आदत तो आदमी को मित्र है। आदत न पड़े तो आदमी एक भी काम ठीक से न कर पाये, तुम सुबह से शाम तक अपनी कमीज के बटन ही न लगाओ। देखते हो, बच्चा जब चलना सीखता है, कितनी बार गिरता है, कितना रोता-चिल्लाता भी है और जब चलने की उसे आदत पड़ जाती है, तो यही काम कितना सरल हो जाता है। तुम आदत को शत्रु क्यों बनाते हो ? कितनी पुरानी आदत है तुम्हारी ?"

"कोई दस साल पुरानी होगी, करीब-करीब।"

"दस साल की अपनी एक आदत से डर लगता है, और लाखों बरस पुरानी दुनिया का नहीं ? पूरी दुनिया में क्रान्ति करने का साहस रखकर एक छोटा सा परिवर्तन खुद अपने जीवन में करते समय साहस टूट जाता है क्या ? या साहस का ही कोई घाटा हो रहा है ?" डाक्टर मेहता ने घायल के घायल होने के कारण पर मलहम लगाई।

घायल कुछ कहे, उससे पहले ही डाक्टर मेहता ने उसे रोक दिया। वे इतनी जल्दी उससे इन बातों का जवाब नहीं चाहते थे। वे चाहते थे, उसे स्वय अपने से ऐसे सवाल करने चाहिये, और स्वयं अपने उत्तरों को जाँचना चाहिये। लीलाबेन ने अपनी टोकरी में से फल निकाल कर घायल के पलंग के पास खड़ी आलमारी में रखे, घर पर न आने का उलाहना दिया और डा० मेहता को समय बताया।

घड़ी पर नजर पड़ते ही डा० मेहता चल दिये। वे उसे ठीक होते ही घर पर आने की ताकीद भी कर गये।

सिस्टर विलसन आई, तो उसकी आँखों में घायल को इस बार शराब नहीं मिली। शराब बीत जाती है, इन आँखों में जो कुछ है, वह अथाह है। इनमें डूबा जा सकता है, इनका कहीं कोई पार नहीं है। सिस्टर ने कहा "तुम्हारा ये वाला मम्मी हमको वंडरफुल लगता। कितना स्वीट है ?"

"अरे वो हमारा अकेले का नहीं, सबका मम्मी है, तुम्हारा भी होने सकता" घायल ने उसकी भाषा अपनाते हुए कहा।

"हमारा मम्मी इतना अच्छा नहीं है। डैडी को बहुत डाँटता है। हमारा डैडी एकदम सीधा, एक दम सीधा है। फादर विलसन अकेला चर्च का नहीं, चर्च को मानने लाला सब लोग का फादर है।"

"तुम भी अपने डैडी जैसा है, एक दम सीधा। है न?"

सिस्टर विलसन हँस पड़ी, "अरे, हम तुमको किधर से सीधा दीखता है? हम तो नॉटी गर्ल है, सब जानता।"

"नो. नो, "घायल ने प्रतिवाद किया, "तुम तो वन्डरफुल भी है और स्वीट भी।"

"अरे, तुम हमारा फ्लैटरी करता। चोप रहो, यह दवा पी लो और मुँह बंद।"

13

छात्रों ने एक बस कन्डक्टर से हुए झगड़े के बाद तीन दिन में चार बसें जलाईं और चौथे दिन बाजार बंद करवा दिया। कालेज और यूनिवर्सिटी पहले से बंद थे, शहर में बसें बंद थीं, पर सिनेमाघर बंद नहीं थे। संघर्ष समिति के लोगों का मानना था कि दिन गुजारने का कोई ठिकाना रहना चाहिये।

मंगल और संतराम ने इस आकस्मिक छुट्टी का लाभ उठाकर सिनेमा देखने का प्रस्ताव अर्जुन से किया। मैटिनी में चल रहे 'हजामत' चित्र की बड़ी धूम थी। अर्जुन को आनाकानो करते देखकर दोनों उसे अपने पैसों से चित्र दिखाने को तैयार हो गये। अर्जुन को पीयूष की कही बात याद आई, बोला, "हिन्दुस्तान में अभी तक सिर्फ एक ही पिक्चर बनी है। वही बार-बार नाम बदल कर आ जाती है। तुम्हीं लोगों को यह शौक मुबारक हो, हम तो तीन घंटे की बोरियत पैसे देकर खरीदने के पक्ष में नहीं हैं।"

"लगता है, भाभी के डर से अंगूर खट्टे हो रहे हैं।"

इस बात पर थोड़ी देर बहस हुई जिसके अन्त में अर्जुन को इनका साथ देना पड़ा। पिक्चर हॉल में पहुंचे, तो वहाँ 'हाउस फुल' की तख्ती लगी देखी। अर्जुन लौट चलने की बात कर ही रहा था कि उसके कानों में आवाज आई, "बब्बन।"

पलट कर देखा, दो रंग के कपड़ों की रैडीमेड शर्ट और बैल बॉटम पहने जो पहलवान सरीखा आदमी उसे संबोधित कर रहा था, कुछ पहचाना सा लग रहा है।

पहलवान नजदीक आया और बोला 'नहीं' पहचाना क्या ? शरफू को भूल गये क्या ?

चार साल पहले शरफू पहलवान नहीं था और उसके मूछें भी नहीं उगी थीं। अर्जुन को याद आया, शरफू जेब काटने का हुनर जानता था, और दो-एक बार उसने इस धंधे में उसकी मदद भी की थी। सुना था, उसे जेल हो गई थी। बोला, "अरे शरफू! क्या कर रहे हो, भाई कितने सालों बाद मिले हो ?"

शरफू सिनेमा के समय टिकिटों का ब्लैक भी कर लिया करता था। उसके सिखाये हुए कुछ चेले यहीं उसकी देखरेख में अपनी उंगलियों का कमाल दिखाते थे। पकड़े जाने पर शरफू ही चेलों को बचाता था। बटुआ मालिक को सौंपकर शरफू चोर को मारता-पीटता और धकेलता हुआ पुलिस को पकड़ाने के लिए ले जाता था, और उत्तेजना शांत हो जाती थी।

शरफू ने उसे बताया, वह मौज करता है। फिर अर्जुन से उसने मकान का और दुकान का पता पूछा और सिर्फ चार आने अधिक लेकर तीन टिकिट इन लोगों को दे दिये। उसने बताया यह चार आने अधिक उसे सिनेमा के बुकिंग क्लर्क को खुद देने पड़ते थे।

दूसरे दिन शरफू दुकान पर उससे बात करने आ धमका। मंगल और संतराम से उसने नमस्ते की। अर्जुन उठकर उसके पास बाहर आ गया।

दोनों उसी रेस्तराँ में चाय पीने बैठे, जिसमें पहले दिन पीयूष और जयदेव के साथ बब्बन के रूप में वह आया था। किन्तु आज बब्बन बनना उसे अच्छा नहीं लगा। बब्बन अब मर चुका था, वह अतीत का एक काला पृष्ठ था जो उलटा जा चुका था।

शरफू अर्जुन को इस बात के लिए धिक्कारने लगा कि वह क्या कैंची-फीते से चिपका एक जगह बैठे रहता है। वह चाहे तो फिर आजादी की जिन्दगी बिता सकता है।

"एक बड़ा आसान सा धंधा है। चाहो तो पाँच दिन में महीने भर की कमाई कर सकते हो।"

"वह तुम कर लेते हो न? फिर क्या होता है इस कमाई का?"

"होता क्या है? ऐश करते हैं" शरफू ने बताया। शरफू के ऐश करने का तरीका यह था कि जब वह कोई तगड़ा हाथ मारता, तो जुए के अड्डे पर जाकर बैठ जाता। अड्डे पर बोतल और कबाब का भी प्रबन्ध शरफू जैसे खास ग्राहकों के लिए तत्काल कर दिया जाता था। यहाँ से शरफू जेब खाली करके ही उठता था और सैकड़ों से कम की रकम हुए बिना अड्डे पर कभी आता न था। उसके लिए खास मौकों पर यहाँ डबलबैड (पार्टनर सहित) भी उपलब्ध हो जाता था। ये मौके तब आते जब जुए में दो-चार बाजी जीत कर वह उत्ता जाता और सोने के इन्तजाम की फरमाइश करता।

"परवाह किसे है?" शरफू ने बताया, "दूसरा दिन तो अपना है और अपने आजकल घाव नहीं लगाता, खालिस हाथ की सफाई दिखाता है।" घाव लगाने का (शरफू के धंधे में) अर्थ ब्लेड से जेब काटना था।

अर्जुन बब्बन के रूप में अपना ही विकृत जीवन देख चुका था। पाँची को दूसरी बार पाकर जबसे उसने अपना छोटा सा घर बसाया है, तबसे उसे स्नेह और सद्भाव से भरा एक ऐसा संसार मिला है, जिसे वह खोना नहीं चाहता। शरफू का प्रस्ताव था, वह महीने के उन दिनों में शराब बेचने का धंधा उसके साथ कर ले, जब शराब बंद रहती थी। चार-पाँच सौ की

रकम पर हर महीने दो सौ रुपये वह घर बैठे बब्बन को देने के लिए तैयार था। उसे और कुछ नहीं करना होगा, वह एक रुपया की बोतल के हिसाब से रातभर की बिक्री का हिसाब दूसरे दिन ले ले।

दोनों चाय पीकर उठे। अर्जुन को शरफू अब तक पुराना बब्बन माने हुए था और उसे इसी नाम से पुकार रहा था। इसलिए न केवल शरफू का प्रस्ताव बल्कि स्वयं शरफू भी उसे अरुचिकर लग रहा था। उसने उसे समझाना चाहा कि अब वह बदल चुका है, विवाहित है और इस समाज के कई प्रतिष्ठित घरों में उसकी पैठ है।

शरफू पहलवान आखिर अपनी दोस्ती का टैक्स, दस रुपये का एक नोट, लेकर ही वहाँ से टला। कह रहा था, आज धंधा नहीं हुआ, इसलिए उसके पास आया था।

शरफू गया, पर अर्जुन के माथे पर चिन्ता की सलवट छोड़ गया। वह फिर भी आ सकता है, आयेगा। कल रात उसने घर पर इस भेंट का कोई जिक्र नहीं किया था। वह अपनी पांचाली के सस्मित मुखचन्द्र पर किसी आशंका के ग्रहण की छाया नहीं देखना चाहता था। आज भी उसने यही तय किया कि यह समस्या पांचाली के लिए नहीं, मात्र उसी के लिए है। वह अपते स्तर पर ही इसे हल करेगा।

तबीयत ठीक न होने की बात कहकर उसने अरोड़ा से छुट्टी माँगी और अर्जेन्ट कपड़ों का बण्डल अपने साथ ले लिया, ताकि काम समय पर मिल सके।

पैकिट बगल में दबाये वह निरुद्देश्य घूमने चल पड़ा। वह सोच रहा था, कोई ऐसी तरकीब हाथ लगे कि शरफू को वह अपने नये जीवन से हाथभर की दूरी पर रख सके। आज वह दूकान पर आया है, कल वह घर पर आयेगा, पांचाली को पांची कहकर पुकारेगा, उसके सामने अपनी ऐश की जिन्दगी के बखान करना और हो सकता है वह उसके सामने ही पहले वाली पांची मान कर उसके साथ कोई ऐसी-वैसी हरकत कर बैठे। नहीं, घर से उसे दूर ही

रखना होगा, और दुकान पर से भी। शरफू उसको बरसों की साधना को नष्ट करने के लिए प्रकट हुआ है। क्या वह उसे साफ-साफ कह दे कि अब वह उसके पास आइन्दा न आये ?

वह तो कह देगा, किन्तु क्या शरफू उसे बख्श देगा ? अपराध-जीवियों के लिए समाज के भद्र लोग कभी उनकी बन्दूक की नोक पर होते हैं, और कभी उनकी भद्रता ही अपराधी के लिए आड़ बन जाती है। शरफू उसके साथ रहने की मांग भी कर सकता था, ताकि वह पुलिस के सामने अपना सुधरा हुआ चाल-चलन पेश कर सके। वह अरोड़ा टेलर्स में अवैतनिक पद भी मांग सकता था, ताकि अपना जरिया-मात्र (आजीविका का साधन) पुलिस को बता सके। शरफू उसकी आड़ में शरीफ बनने का प्रस्ताव भी कर सकता था, और धंधा मंदा होने पर उसे अपना शिकार भी समझ सकता था, और दोनों ही स्थितियाँ अर्जुन को आशंकित करती थीं।

अर्जुन ने देखा भटकते हुए वह पीयूष के दफ्तर के पास आ गया है। वह सोच ही रहा था कि अन्दर चले या नहीं, कि इतने में उसे पीयूष और जयदेव खान ब्रदर्स के कार्यालय से निकलते हुए दीख गये।

पीयूष ने अर्जुन को देखते ही पूछा आज इस वक्त वह पैकिट लिए कहाँ घूम रहा है। जयदेव ने उसके बोलने से पहले ही यह सवाल किया कि वह आज परेशान सा क्यों दीख रहा है।

"आज कुछ तबीयत ठीक न होने की वजह से छुट्टी ले ली है। ये कपड़े घर पर ही तैयार कर लूँगा", अर्जुन ने उन्हें बताया।

"क्यों तबीयत कैसे गड़बड हो गई ? बुखार है क्या", कहते हुए जयदेव ने उसका हाथ पकड़ कर देखा, फिर कहा "टेम्परेचर तो नहीं दीखता।"

अर्जुन बोला "बुखार नहीं, ऐसे ही कोई बात है।"

"बात ?" पीयूष बोला, बात क्या है ?"

अर्जुन ने सोचा इन लोगों को उसके गत जीवन का पुरा इतिहास मालुम है और उसका वर्तमान जीवन तो इन्हीं लोगों की उसे एक देन है। इनसे बात

को छिपाना ठीक न होगा। उसने शरफू से हुई भेंट और शरफू के स्वभाव और इरादों के बारे में उन्हें बताया। यह भी बता दिया कि वह खुद कभी दो-एक बार उसके धंधे में सहयोगी रह चुका है, और शरफू ने उसके साथ पांची के रूप में उसकी पत्नी को भी देखा है। "मैं यह सोच रहा हूँ" उसने कहा, "कि शरफू से छुटकारा कैसे मिले। उसका मेरे यहाँ दुकान पर आना ठीक नहीं है। घर पर आना और भी गलत होगा। एक बद की सोहबत से हमें बदनामी उठानी पड़ेगी।"

जयदेव ने कल्पना की कि डा० मेहता ऐसे अवसर पर क्या परामर्श देते। एक बार उन्होंने किसी प्रसंग में कहा था, अपराधी प्रायः भीरू स्वभाव के और कम या औसत बुद्धि के प्राणी होते हैं। शायद उन्होंने अर्जुन के सम्बन्ध में ही इस बात का उल्लेख किया था। अर्जुन द्वारा अपराधी जीवन छोड़ना उसके साहस और विवेक का परिचायक था। जयदेव ने पीयूष से पूछा "अर्जुन को शरफू से क्या खतरा हो सकता है? वह कोई रईस आदमी तो है नहीं, जिससे शरफू ब्लैकमैल के द्वारा कोई तगड़ी रकम ऐंठ सके। मैं समझता हूँ, सिर्फ दिमागी परेशानी के अलावा वह अर्जुन का कुछ बिगाड़ तो नहीं सकेगा।"

पीयूष ने कहा "खतरा तो मुझे भी कुछ नहीं दीखता। मैं तो समझता हूँ, यह एक तरह का मुकाबिला है। शरफू ने अर्जुन को कहीं कमजोर देखकर उसे दबा लिया है। अगली बार अर्जुन उसकी कमजोरी पकड़ कर उसे दबा दे, और दबाये रहे। शायद यह तरकीब कारगर हो।"

तब जयदेव ने अर्जुन की ओर देखकर कहा "मेरे विचार से तुम शरफू से नहीं, अपने अतीत से आतंकित हो। अपने मन में निर्भयता लाओ, और शरफू को बताओ कि तुमने ऐसा क्या पाया है, जो उसके पास नहीं है। जो समाज उस जैसे अपराधी के लिए दण्ड का विधान करता है, वह तुम्हारे जैसे एक मर्यादित व्यक्ति की सुरक्षा अपना कर्त्तव्य मानता है। देख लो, तुम्हारी जरा सी चिन्ता को हम लोग बाँटने के लिए तैयार हैं, किन्तु शरफू तो पकड़े जाने पर कोई जमानती भी नहीं मिलेगा।"

"हाँ", पीयूष ने कहा "मैं भी यही कहना चाहता था, पर जयदेव ने बात बेहतर तरीके से कह दी है। यदि तुम पाँव जमाकर उससे बात करोगे, तो दो ही बाते होगी—या तो वह तुम्हारी बात मान लेगा, या फिर तुमसे मिलना-जुलना छोड़ देगा।"

हाँ, यही बात थी। अर्जुन शरफू को देखते ही घबरा सा गया था। उसे ऐसा लगा था, जैसे शरफू ने उसे एक आवाज देकर उसके अतीत को सबके सामने नंगा कर दिया हो। ये लोग ठीक कहते हैं। बोला, "आप लोगों ने तो मेरी तबीयत इतनी ठीक कर दी है कि मैं फिर लौटकर दूकान जा सकता हूँ। पर अब छुट्टी लेली है, तो छुट्टी ही सही। शरफू से मैं अब निबट लूँगा। आप लोगों का क्या प्रोग्राम है ?"

"हमें विद्रोही जी ने याद किया है। चार बज रहे हैं, कह रहे थे, तुम्हारे आते ही दफ्तर से उठ जाऊँगा। चल रहे हो क्या ?" पीयूष ने पूछा।

"नहीं", अर्जुन बोला, "आप लोग हो आइये। मुझे उन्होंने कल बुलाया है। रैडीमेड हाथकरघा वस्त्रों के लिए उनकी कोई नई स्कीम है।"

"अच्छा, तो फिर मिलेंगे, कहकर दोनों मित्रों ने अर्जुन से विदा ली।

अर्जुन की उदासी पहले ही विदा ले चुकी थी।

14

अभी पांच बजने में देर थी, लेकिन जब पीयूष और जयदेव हाथकरघा वार्ड के कार्यालय में पहुँचे, तो लोग दपतर से उठने लगे थे। जो लोग बैठे थे, वे शराब-बंदी के विषय पर विवाद कर रहे थे। एक टाइपिस्ट को छोड़कर काम कोई नहीं कर रहा था। जब वे टाइपिस्ट के पास पहुँचे, तो देखा वह अपना कोई अन्तर्देशीय पत्र दफ्तर की मशीन पर चढ़ाये हुए था। कुछ न करते हुए भी व्यस्त दीखना दफ्तरी बाबुओं की अपनी विशेषता है।

वे अध्यक्ष के कमरे में पहुँचे, तो देखा चपरासी चाय की खाली ट्रे उठा कर ले जा रहा है। विद्रोही ने चपरासी से उन लोगों के लिए चाय और लाने को कहा।

"एक मामला सामने आया है। लाला छदामी लाल ने करीब २० लाख रुपये की सप्लाई का ठेका पिछली सरकार के निर्माण विभाग से लिया था। एक सहायक अभियन्ता और स्टोर कीपर से मिलकर उन्होंने २ लाख रुपये की हार्डवेयर की सप्लाई की फर्जी बिल पास करवा कर भुगतान उठा लिया है।"

"तो क्या इस बिल का माल विभाग में आया ही नहीं ?" जयदेव ने पूछा।

"हाँ। ये लोग इस स्टाक का फर्जी हिसाब बताकर पेश कर चुके थे। इस बीच सरकार बदल गई। नये मिनिस्टर के पास यह हिसाब पेश हुआ, तो उन्होंने निर्माण कार्य का तफसील माँगी और मौका देखना चाहा। इस पर सारी पोल खुली, क्योंकि पुराने मंत्री महोदय इस बारे में कोई सवाल-जवाब नहीं करेंगे, लाला द्वारा प्राप्त इस आश्वासन के आधार पर ही यह हिसाब भेजा गया था।"

"क्या लाला को पता है कि इस कांड का भंडाफोड़ हो गया है ?" जयदेव ने पूछा।

"नहीं। अभी सिर्फ सहायक अभियन्ता हरिदेव और स्टोर कीपर गुरुदयाल तक ही बात पहुँची है, जिन्हें भ्रष्टाचार निरोधक पुलिस ने बाहरी सम्पर्क का कोई मौका नहीं दिया है।"

पीयूष ने पूछा "क्या आप जानते हैं कि सरकार लाला के साथ कैसा रुख अपनायेगी ? क्या वह इस मामले को भ्रष्टाचारियों के विरुद्ध एक चेतावनी के रूप में उछालेगी या इसे रफा-दफा हो जाने देगी ?"

"इस बारे में", विद्रोही बोले, "मैं अपना मानस बनाना चाहता हूँ। सरकार का रुख स्थानीय नेताओं के रुख पर निर्भर करेगा। इसीलिए मैंने तुम लोगों को बुलाया है।"

"आप जानते हैं," पीयूष ने कहा, हम आपको राजनीति के आधार पर सलाह नहीं दे पायेंगे। मैं तो अपने को व्यापार में होते हुए भी व्यापारी तक नहीं मानता।"

जयदेव ने कहा "इसलिए आपकी राय महत्वपूर्ण है। इस मामले में मैं स्वयं को व्यापारी मानता हूँ, क्योंकि लाला के दो विज्ञापनों को मुझे छह महीनों तक छापना है।"

"मैं मानवीय और सामाजिक आधार पर लाला को अपराधी मानता हूँ। मेरी दृष्टि में लाला का पेमा और पांचाली के साथ किया हुआ दुर्व्यवहार आपके इस कांड की अपेक्षा कहीं अधिक बड़ा और जघन्यतर अपराध है।" यह कह कर जैसे एक पत्र सम्पादक और एक राजनेता के समक्ष पीयूष ने कोई चुनौती फेंकी।

"तुम्हारा अंक कब निकलेगा ? मैं समझता हूँ, साथ नहीं लाये हो, तो अब वह कल ही निकलेगा। है न ?"

"हाँ, कल ही निकलेगा। पहले पेज का मैटर मिलेगा, यही सोचकर आपके पास आया था," जयदेव ने उत्तर दिया।

"तो फिर हो जाये एक विस्फोट। यह कुछ नोट्स है, जो मैंने तुम्हारे लिए इकट्ठे करवा रखे हैं। इनमें तुम्हें फर्जी बिल कांड का पूरा कच्चा चिठ्ठा मिल जायेगा।"

"ठीक है। मैं इसमें हरिदेव और गुरुदयाल को थोड़ा कम घसीटूँगा, और और लाला की टाँग जितनी खिंचेगी, उसमें कसर नहीं छोड़ूँगा।"

"बस, ठीक है। मैं एक टेलीफोन कर लूँ, फिर चलते हैं।"

विद्रोही ने एक की बजाय चार-पाँच टेलीफोन किये जिनसे यह स्पष्ट हो गया कि सरकार लाला के खिलाफ कड़ा रुख अपनाने जा रही है।

उठकर चलते हुए विद्रोही ने बताया कि कल 'बात का धनी' प्रकाशित होने के बाद ही यह समाचार दैनिक पत्रों को प्रेषित होगा। विद्रोही पीयूष को अपने

साथ घर ले जाना चाहते थे, जयदेव को अपने पत्रों का शायद सबसे महत्वपूर्ण अंक छापना था। इसलिये उसने चलने की इजाजत माँग ली और जाते-जाते पूछा, "कल अर्जुन को बुलाया है क्या ? कह रहा था।"

"हाँ, अपने यहाँ के रेडीमेड डिविजन में उसे कुछ काम देना है।"

विद्रोही का अनुमान गलत था। लाला ने शहर में अपना ऐसा मकड़ी का जाला फैला रखा था कि कोई मक्खी उसके ताने-बाने में उलझे बिना पंख नहीं फटकार सकती थी। भ्रष्टाचार निरोधक पुलिस के दफ्तर से ही उनके एक शुभ-चिंतक ने आकर उन्हें यह समाचार देकर अपनी जेब गरम की थी।

लाला ने मुनीम रामगोपाल को तलब किया। चश्मा माथे पर चढ़ाये मुनीम जी फौरन हाजिर हो गये। लाला थोड़ी देर उन्हें घूरते रहे। कुछ बोले नहीं।

बूढ़े मुनीम ने खँखार कर लाला का ध्यान भंग करना चाहा।

लाला ने कहा, "मुनीम जी।" और फिर चुप हो गये। उन्होंने अपने कमरे में लगे नेताओं के चित्रों को देखा। उनके हाथ पर पेपरवेट को इधर-उधर लुढ़काने का काम कर रहे थे। शीशे का वह पेपरवेट उनके हाथों की सीमायें पारकर फर्श पर गिरा और उसकी एक कीरच फूटकर अलग हो गई।

"क्या जमाना आ गया है।" लाला ने कहा।

मुनीम जी ने पेपरवेट की हुई क्षति का निरीक्षण किया। जमाना कोई अभी तो नहीं आया था, और वह जैसा भी हो, मुनीम जी इस समय जमाने की नहीं, अपने बही-खातों की बात सोचते थे। जमाने को देखना-समझना वे इस दफ्तर में आने के बाद अपने सेठ पर छोड़ देते थे।

लाला के वक्ष के तल, वितल, रसातल से कहीं एक लम्बी साँस निकली। "मुनीम जी" एक बार उन्होंने फिर पुकारा।

"हुकम करें, मालिक," मुनीम जी ने स्थिति की गम्भीरता को समझा।

"नेकी जा जमाना ही नहीं रहा, मुनीम जी। जी चाहता है, सब कुछ छोड़कर मुरली मनोहर के चरणों में बैठ जाऊँ। यह दुनिया तो बड़ी खोटी है। क्या करेंगे इसमें रहकर?"

"कोई खता हम लोगों से हुई हो तो बतायें।" मुनीम जी ने इस आकस्मिक वैराग्य का कारण समझने की कोशिश की।

"पी० डब्ल्यू० डी० गुरुदयाल को जानते हो न? कह रहा था, सेठ जी दया कर दें, तो उसकी लड़की के हाथ पीले हो जायें। याद है?"

"अच्छी तरह याद है। और यह भी याद है कि आपने उसकी बेटी का ब्याह धूम-धाम से कराया था।" मुनीम जी अब भी बात की कोई टाँग-पूँछ नहीं पकड़ पाये थे।

"और इन्जीनियर हरदेव तरक्की पाने के लिए अपने अफसरों को डाली भेजना चाहता था।"

मुनीम जी के कान खड़े हुए। अभी कुछ ही दिन पहले जिस रकम में से उन्होंने पचास हजार रुपये निकाल कर सेठ जी को दिये थे, वह रकम इन्हीं लोगों के माध्यम से तिजोरी में आई थी। क्या कुछ गड़बड़ है?

लाला ने शेष बात एक झटके के साथ उगल दी, "वे दोनों पकड़े गये हैं।'
"पकड़े गये?" मुनीमजी ने अविश्वास के साथ कहा और फिर बोले "विश्वनाथ, भूतेश्वर चन्द्रमौलि।"

लाला सात पीढ़ी के सेठ थे। उनके एक पूर्वज ने राजा का पागल हाथी मार दिया था। लोगों ने नमक-मिर्च लगाकर नोहरे वाले सेठ की शिकायत राजा से कर दी और यह बात गोल कर गये कि हाथी पागल होकर उत्पात कर रहा था। राजा ने सेठ को बुलाया तो सेठ ने उन्हें बताया कि यदि वे कुसूरवार पाये जायें, तो जहाँ हाथी मरा है, वहाँ से राजा के महल तक चाँदी के हाथियों की कतार खड़ी कर देंगे, मगर राजा को हाथी का कुसूर भी देखना

होगा। लाला जिस कुल के थे, उसे उन्होंने बट्टा नहीं लगाया था। वे यह जानते थे कि हाड़-मांस का हाथी सिर्फ चलता है, चाँदी का हाथी उड़ता और तैरता भी है।

मुनीम जी से बोले; "वकील हरिमोहन से जाकर अभी मिलिये। काँटा काँटे से निकलता है। हमें साबित कर देना है कि माल हमने सप्लाई किया है, बिल पर इसका सनद है। किन्तु उसे स्टोर में रखने की जिम्मेदारी हमारी नहीं है। सारी चीजों के बिल होल सेलरों से मँगाइये। माल की विभाग के गोदाम तक ढुलाई वगैरह के कागजात तैयार कर लीजिए। यह काम दो दिन में होना है। जितने आदमी चाहें भेजिये और सारा बन्दोबस्त मुकम्मिल कराइये।"

मुनीम जी ने दबी जबान से पूछा "खर्चा कितना . . . . ."

"उसकी सीमा आकाश तक कहीं नहीं है। काम होना चाहिये। साख बची लाख बचे।"

मुनीम जी को और कुछ नहीं समझना था। ऐसे तलवार की धार पर चलने के खेल लाला पहले भी खेल चुके थे।

लाला गद्दी से जल्दी से उठकर घर आये और अपनी बूढ़ी ललाइन के पास आकर बैठ गये। ललाइन पत्नी भाव भुल चुकी थीं और अपना सारा समय दर्शन-भजन, पूजा आदि में लगाती थीं। लाला ने बात करते-करते जब उनका हाथ अपने हाथ में लेकर उसे दबाया, चूमा और छाती पर उस जगह रखा, जहाँ उनका दिल होना चाहिये, तो ललाइन का सुप्त पत्नीत्व फिर से जागृत होने लगा। हँसकर बोलीं "लाज नहीं आती तुम्हें, इस बुढ़भसन पर ?"

लाला ने उन्हे आश्वस्त किया कि इसमें लाज काहे की ? वे किसी और से थोड़े ही वैसा कर रहे हैं। इसके बाद तो यह बड़ी आसान बात थी कि लाला अपनी पत्नी से तीर्थयात्रा की पुरानी फरमाइश एक बार और करवा लेते। ललाइन की ललक जागी तो उन्हें लाला की इस बात के लिए चिरौरी करते देर न लगी कि मरने से पहले वे उसे बद्रीनाथ, केदारनाथ के दर्शन करा दें।

लाला ने उसी क्षण तीर्थयात्रा पर जाने की तैयारी शुरू कर दी। लाला कार से जायेंगे और धन्ना के अलावा उनके साथ और कोई नहीं जायेगा। "कहो तो एक नौकरानी को भी ले चलें। वैसे तीर्थयात्रा में जितनी सादगी होगी, पुण्य उतना ही मिलेगा।"

इसलिए नौकरानी लेने की जरूरत नहीं पड़ी। लाला ने मुनीम जी को ताकीद की कि वे शाम सात बजे बाद फोन पर रहें, उस समय लाला रोज हाफ रेट पर बात करना चाहेंगे। मगर मुनीम जी को इसके अलावा और कुछ मालूम नहीं होगा कि वे कहाँ हैं और उनका क्या कार्यक्रम है। उनके साथ हुई दैनिक बातचीत एकदम गोपनीय रखी जायेगी।

15

वह अकेली घर में क्या करेगी, इसलिये धन्ना ने पेमा को पांचाली के यहाँ जाने की अनुमति देदी थी।

जब जयदेव अर्जुन से यह पूछने के लिए आया कि विद्रोही से उसकी बातचीत कैसी रही और उसका क्या परिणाम निकला, तो ताजा अंक उसके पास था। उसने लाला की फर्जी बिल-कांड इन तीनों लाला-पीड़ितों को सुनाया जिनका इस समाचार के अन्त में थोड़ा सा उल्लेख था। पत्र में कहा गया था, कि लाला छदामी लाल के नैतिक भ्रष्टाचार के तीन जीते-जागते उदाहण इसी समाज में विद्यमान हैं, जिनको अत्याचार के विरुद्ध संघर्ष में अन्ततः विजय मिली है।

पांचाली ने इस पर कह दिया "हमारी पेमा को कौन सी विजय मिली है, जो आपने ऐसा लिखा ?"

"यानो, दो के बारे में मैंने ठीक लिखा है। क्या पेमा ने लाला की घृणित चाकरी और धन्ना के डण्डों पर विजय नहीं पाई ?"

"तो फिर आपने जैसे हम लोगों के नाम सुधारे हैं, वेचारी पेमा के नाम को क्यों ठीक नहीं किया ?" पांचाली ने फिर कहा ।

"यह काम मेरी ओर से तुम कर दो ।"

"तो फिर आज से इसका नाम प्रेम होगा" क्यों ठीक है न ?'

अर्जुन ने इसे ठीक बताया, जयदेव ने भी उसे स्वीकार कर लिया, और पेमा प्रेम हो गई । इस नामकरण के उपलक्ष्य में जलपान का आयोजन हुआ और अर्जुन को जयदेव को यह बताने का समय मिला कि वह अरोड़ा टेलर्स के यहाँ काम छोड़कर हाथकरीगर वोर्ड के रेडीमेड डिविजन में काम करेगा जहाँ उसे आवश्यकतानुसार और लेने का अधिकार होगा । अर्जुन ने बताया कि यहाँ उसे काम के पैसे अधिक मिलेंगे, किन्तु ग्राहक को सिलाई का मूल्य बहुत कम देना होगा ।

अर्जुन ने पांचाली और प्रेम से जयदेव को खाना बनने तक रोके रहने के लिये कहा । वह तब तक अपने नये काम का डौल बिठाने के लिये अपने सिलाई कारखाने का एक चक्कर लगाकर आना चाहता था ।

इसलिये पांचाली ने उसे जाने की इजाजत विल्कुल नहीं दी और प्रेम से फैसला कराना चाहा, "बता, मैं अव भाई साहब को कैसे घर से बाहर निकलने दूँगी ? वे मुझे डंडे नहीं लगायेंगे ?"

"नहीं लगायेंगे", जयदेव ने बीच में पड़कर कहा ।

"अरे नहीं लगायेंगे तो उनका बड़प्पन होगा । पर काम तो यह ऐसा ही होगा । बोलती क्यों नहीं प्रेम ?"

प्रेम ने मुँह से दो शब्द "रुक जाइये" कहने से पहले अपनी आँखों से इसी विषय पर एक विस्तृत आवेदन दिया, और फिर अकारण ही उसका मुँह, कान और कंठ लाल हो आये ।

जयदेव पांचाली से न रुकने के लिये बहुत से तर्क देता, तब तक बहस करता रहता जव तक अर्जुन लौट न आता, किन्तु प्रेम के इन दो शब्दों के आगे उससे कुछ न कहा गया ।

उसे बाहर बिठाकर दोनों अन्दर जाकर खाने की खटपट करने लगीं। थोड़ी देर बाद ही दोनों एक दूसरे को बाहर जाकर जयदेव के पास बैठने को कहने लगीं, वे अकेले बोर होंगे। खाना अकेले बनाने को दोनों तैयार थीं, किन्तु अकेले बाहर जाकर बैठने को कोई भी तैयार न थीं। पांचाली का कहना था वह अपने घर में बैठकर गप्पे मारेगी और कोई और बाहर का आकर घर का काम करेगा, यह बात कैसे होगी ? प्रेम का तर्क था जो छोटी हो काम उसे करना चाहिये। यहाँ घर का और बाहर का कौन है ? सभी घर के हैं।

"छोटी है, तो जा मेरे कहने से जा। बड़ों का कहना मान।"

"वाह, छोटे सिर्फ कहना ही मानें, और अपना फर्ज क्या है, इसे भूल जायें ? यह भी आपने भली कही।"

पांचाली ने हँसकर कहा "बातें तुझे खूब आती हैं, इसीलिये कहती हूँ, भाई साहब का मन बहकेगा। मुझे बातें बनानी नहीं आती।"

पर्दे के दूसरी तरफ बैठा जयदेव दोनों के तर्क, दोनों की खिलखिलाहट सुन रहा था। उसने बाहर से आवाज लगाई, "अरे, तुम लोग जल्दी तय करो यहाँ किसकी ड्यूटी है। वरना, मैं ही तुम लोगों के पास जाकर बैंठ जाऊँगा।

पांचाली ने प्रतिवाद किया, "ऐसा गजब मत कर बैठना। यहाँ सारा अनुशासन भंग हो जायेगा।" फिर धीरे से उसने पास बैठी प्रेम से कहा, "तू कहे तो भाई साहब को भी बुला लूँ ?"

प्रम ने इसका उत्तर पांचाली की बाँह पर चिकोटी काटकर दिया। बाहर बैठे जयदेव ने आपत्ति की, "यह काना-फूसी और मिस्कौट नहीं चलेगी। हम अखबार वाले हैं, बोलने की पूरी आजादी चाहते हैं।"

"तो आप आजादी से बोलिये, आपको रोकता कौन है ?" पांचाली बोली।

"हम अपनी बात नहीं, आधी दुनिया– मतलब आप दोनों की बात कर रहे हैं। अंन्दर से हमें हँसी दो सुनाई पड़ती हैं, पर बोली सिर्फ एक। हम दूसरी आवाज को भी आजाद करना चाहते हैं।"

पांचाली ने भीतर बैठी प्रेम से कहा, "बोल न कुछ। वे तेरी आवाज सुनना चाहते हैं।"

प्रेम ने कहा "मेरी तरफ से तुम्हीं बोल दो।"

"बोल दूँ?"

"एकदम।"

"मैं बोलती हूँ। फिर बीच में मत टोकना।"

"बोलने वाली आप, जीभ आपकी, हम क्यों टोकेंगे?"

"ठीक है, ठीक है पर बात आपकी होगी। क्यों भाई साहब, अगर एक राजकुमारी राक्षसों के चंगुल में फँसी हो, और एक बहादुर राजकुमार आकर राक्षसों के चंगुल से छुड़ा दे तो प्राण पाकर उसे समझते हैं न फिर क्या होगा?" पांचाली ने जयदेव से पूछा।

"राजकुमारी अपने घर पहुँच जायेगी, अपने पिता के राज में।"

"और अगर राजकुमारी के पिता को मारकर राक्षस ने राज को पहले ही हथिया लिया हो?"

"तो राजकुमारी को अपना राजपाट वापस मिल जायेगा। वह चैन से राज करेगी।"

"हाय राम! फिर राक्षस से बचाने वाले राजकुमार को क्या मिलेगा?"

"अब चुप भी रहो," यह आवाज प्रेम की थी, "जो भी है, राजकुमारी समेत, सब कुछ राजकुमार का ही तो है।"

"सुना आपने, राजकुमारी क्या कहती है?" पांचाली ने अपने हास्य से घंटियाँ सी बजाते हुए पूछा।

इस बार नेपथ्य से हँसी, खनकते हुए बर्तन और ऐसे रसाकुल अवसर पर निकलती हुई दो युवा वाणियों का मिलाजुला संगीत सुनाई पड़ा,। जयदेव ने बीच के परदे का आभार माना। वह शायद यहाँ रुका भी ऐसी ही किसी प्रत्याशा में था। कल ही उसका अंक निकला था, और उसे घूम-फिरकर फर्जी बिल कांड से उत्पन्न प्रतिक्रियाओं का अध्ययन करना था. किन्तु "रुक जाइये' सुनकर वह बिना कुछ बोले रुक ही गया था। यह सब भी तो समाचार की

प्रतिक्रिया है। एक बात उसे अखबार के काम की भी मिली है। लाला धन्ना के साथ ललाइन को तीर्थयात्रा कराने ले गये हैं। बाकी बातें सम्पादक के काम की, जयदेव ने सम्पादक का पक्ष लेते हुए सोचा।

पांचाली ने फिर शरारत की "अब राजकुमार को क्या हो गया? हम लोग भी बोलने की आजादी के हामी हैं।"

जयदेव ने कहा "राक्षस के मरने की खबर सुनकर उसका छोटा भाई राजकुमार से बदला लेने जा पहुँचा। अभी राजकुमारी कैद में है और राजकुमार राक्षस से उलझा हुआ है।"

'राजकुमार कैद का ताला तोड़ सकता है। उसके बाण से राक्षस का भाई इस समय चार सौ योजन दूर जाकर गिरा है।"

प्रेम ने अब मुँह खोला, "आप बड़ी गलत कहानी दोहरा रहे हैं। हुआ यह कि राजकुमार के पैर राह चलते एक पत्थर पर पड़े वह पत्थर जी उठा। मगर राजकुमार को इससे क्या? राजकुमार आगे बढ़ गया, शिला से बनी नारी ने वहाँ की धूलि अपने सर पर लगाई और पीछे लौट गई।"

जयदेव ने परदा हटाया और वह उन दोनों के सामने आ गया। उसने उन दोनों से कहा "मुझे अपने से बहुत दूर का या अलग तरह का आदमी मत समझना। तुम लोगों की तरह मेरा भी इस दुनिया में कई बार जन्म हो चुका है। घर-बार छोड़कर मैं भी तुम लोगों की तरह बस्ती का बेटा हूँ। यह जो नया घर-बार मैंने पाया है, उसके कुटुम्बजन डा० मेहता, पीयूष और विद्रोही जैसे लोग हैं, तो अर्जुन पांचाली, और प्रेम जैसे भी।"

यह कहकर जयदेव भी जब इन दोनों के पास स्टूल खींचकर बैठा, तो न गजब हुआ और न अनुशासन भंग। प्रेम की कहानी में जितना पत्थर बचा था वह भी एक कृतकृत्य नारी के रूप में अब तो जी उठा होगा। अब जो व्यंजन रसोई में बन रहे थे, उनमें एक सातवाँ रस भी था। खाने वाला बाद में धन्य होता रहेगा। इस वातावरण में खाना बनाते हुए ये तीनों अभी तो

स्वयं धन्य हो रहे थे। इतने रसों की रसोई देवों को भी दुर्लभ होगी। जयदेव ने परदा हटाकर भीतर के भी कई परदे खोल दिये थे।

16

शिवकुमार घायल सात-आठ दिन के उपचार के बाद चलने-फिरने योग्य हो गये। उन्होंने अस्पताल में अपना पलंग तो नहीं छोड़ा किन्तु पट्टियाँ बाँधे हुऐ वे आज पहली बार अस्पताल से बाहर निकले।

यों अस्पताल उनके लिये घर था, और उन्हें निकलने की जरूरत न थी। किन्तु उन्हें बेतार के तार से सूचना मिली थी कि पीयूष के पन्ने में साहित्यक साम्राज्यवाद के उदाहरण के रूप में जिन विभागाध्यक्ष कवि का उल्लेख हुआ था, वे रिटायर हो चुके थे, और कवि कुसुमाकर भी महीने दो-महीने में रिटायर हो रहे थे। वे यह जानकारी जयदेव को देने आये।

जयदेव कुछ अस्वस्थ था। प्रेम और पांचाली के साथ बीते हुए दिन को कसर निकालने के लिये उसने ज्यादा भाग-दौड़ कर ली, और उसे खाट पकड़नी पड़ गई थी। कवि घायल को जयदेव की बीमारी पर आश्चर्य हुआ। उन्होंने कहा "भाई, यह बीमार होने का काम तुम्हें मेरे ऊपर ही छोड़ देना चाहिये। तुम लोगों को इसकी क्या जरूरत है? मैं तुम्हें यह बताने आया था कि भाषा विभाग के अध्यक्ष को सरकार ने रिटायर कर दिया है, और कवि कुसुमाकर भी रिटायरमेंट से पहले के अवकाश पर हैं।"

जयदेव ने कहा, "ये दोनों ही पचपन वर्ष की उमर पर पर रिटायर हो रहे हैं। यह हमारे यहाँ सेवा-निवृत्ति की आयु मानी जाती है।"

"ये टेकनीकल बातें तुम देखो। हम तो इतना जानते हैं कि हम लोगों ने इधर इनका जिक्र अखबार में किया और उधर इन्हें सरकार से छुट्टी मिली।"

और यह कहकर कवि घायल पट्टियों सहित वहाँ से चल दिये। वे इस

साहित्यिक क्रांन्ति का रंग किसी भी कीमत पर फीका नहीं होने देना चाहते थे।

कवि महोदय जयदेव से भेंट करने के बाद यह विचार करने लगे कि वे घर जायें। अथवा और कहीं। घर वाले सुबह ही उनसे मिल चुके थे, इसलिये घर जैसी रोमान्सहीन जगह जाना उन्हें पिष्टपेषण लगा। उनका काव्य-बोध भी इसमें पुनरूक्ति दोष मानता था, इसलिये वे पीयूष की ओर चल पड़े।

"बधाई हो," कवि घायल ने पीयूष से कहा, "पीयूष के पन्ने में लिखने की देर थी कि साहित्यिक मठाधीशों के मठ छिन गये।"

प्रसन्नता पीयूष को भी हुई और उसने बताया कि बधाई का वास्तविक अधिकारी घायल ही था जो यह दूर की कौड़ी लेकर आया।

"मगर अपना जयदेव है न," घायल बोले, "वह इस क्रान्ति का श्रेय लेने को ही तैयार नहीं है। कहता है कि इन्हें अब रिटायर होना ही था। जाने क्या पचपन साल की बात करता है? पर, मर्द तो साठे पर पाठा होता है, पचपन की क्या चलाई?"

"पचपन", पीयूष ने कहा, "सरकारी नौकरी में सेवा-निवृत्ति की आयु मानी जाती है।"

"मगर मंत्री बनने के लिए तो पचपन की उमर भी कम ही पड़ती है, मंत्री तो अस्सी से भी ऊपर का हो सकता है।"

"तुमने सुना नहीं है—बड़ों की बात बड़ी है, घड़े में घड़ी पड़ी है। मंत्री बड़ा आदमी होता है। उसे आयु का दोष नहीं लगता।"

"यह तो चित्त और पट दोनों ही अपनी करने वाली बात हो गई। खैर छोड़ो इस चर्चा को, अब कुछ रचनात्मक कार्यक्रम बनाओ।"

घायल के लिये रचनात्मक कार्यक्रम एक ही हो सकता है, यह पीयूष को ज्ञात था। इसलिये उसने कवि घायल को एक दस रुपये का नोट दिया। घायल ने विदा होते समय पीयूष को यह सूचना भी दी कि जयदेव अस्वस्थ है, और चारपाई पकड़े हुए है।

पीयूष ने जयदेव की अस्वस्थता की सूचना अर्जुन को दी और अर्जुन ने पांचाली और प्रेम को। प्रेम ने तत्काल अपना कर्तव्य स्थिर कर लिया और जयदेव की सुश्रूषा के लिये रवाना हो गई।

घायल की जेब में दस रुपये उछल-कूद मचा रहे थे, मगर अभी शाम नहीं पड़ी थी। एक असमंजस उसे और भी था कि इस अवस्था में पीकर अस्पताल पहुँचना उचित भी रहेगा या नहीं। मगर वे दस रुपये, जो जेब में छेद कर रहे थे।

कवि घायल को अस्पताल भी जाना था और क्रान्ति की खुशी के साथ अपना जश्ने सेहत भी मनाना था। एक तरफ सिस्टर विलसन की आँखें और डा० मेहता के शव्द थे, दूसरी ओर बोतल में बंद स्वर्ग। घायल को आज से पहले पीने के मामले में कभी कोई संकोच नहीं हुआ था, किन्तु आज से पहले पीने और पट्टी बँधने का कोई सिलसिला भी नहीं जुड़ा था।

"मैंने इस प्रश्न पर इतती उहापोह की है, यही क्या कम है" घायल ने सोचा और निश्चय किया कि वह पी ले, मगर थोड़ी ही। वह देशी नहीं पियेगा, अंग्रेजी का एक क्वार्टर खरीदेगा और उसे किसी के साथ बाँटकर पियेगा, अकेला नहीं।

जिस क्षण घायल ने संकल्प के साथ सुरा के चपक की ओर कदम बढ़ाये, उसी मुहूर्त में प्रेम जयदेव के घर के लिये रवाना हुई। घायल उतरने वाला नशा करने और प्रेम कभी न उतरने वाले नशे में डूबने के लिए एक ही समय रवाना हुए।

17

जयदेव को लगा, यह कोई स्वप्न है। प्रेम उसके यहाँ आई है, अकेली

और निस्संकोच। यदि यह स्वप्न नहीं है, तो यह बीमारी तो हजार नियामत बनकर आई है।

प्रेम ने उसके माथे पर हाथ रखा, नब्ज देखने का उपक्रम किया और सेवा की माँग की।

"तुम मेरे पास बैठ जाओ, और यह हथेली माथे पर लगी रहने दो, और देखो मैं अभी पन्द्रह मिनट में तुम्हें भला-चंगा होकर दिखाये देता हूँ।"

"कुछ दवाई भी ली है, या कोरी बहादुरी से ही ठीक होने का इरादा है?" प्रेम ने प्रश्न किया।

"तो दवाई लाओ न," कहकर जयदेव ने प्रेम का हाथ पकड़ कर मस्तक पर रख लिया और अपने हाथ से उसकी हथेली दबाई।

"यह दवाई है?"

"शी : इलाज चालू है, डिस्टर्ब मत करो।"

प्रेम ने मन ही मन प्रार्थना की कि जयदेव के शरीर के ताप उसके तन पर आ जाये। ऐसा हुआ तो है, अब क्यों नहीं हो सकता? जयदेव ने आँखें बंद कर ली और बोला "आज तो मुझे अपने ही भाग्य से ईर्ष्या हो रही है। आज कुँआ प्यासे के पास खुद चलकर आया है।"

प्रेम ने इसका उत्तर दो बूँद आँसुओं से दिया, जिन्हें जयदेव ने देखा नहीं।

"मैं जो भटकी हुई हवा का झोंका हूँ, उसे कोई अपने आँचल में बाँधे ले रहा है," उसने फिर कहा।

"तुमने इस दिन कविता में तूफान को बाँधने की बात कही थी, यह हल्का सा झोंका मुझे बाँध लेने दो।"

जयदेव उठकर बैठ गया। घोषणा की कि वह अब पूर्णतः स्वस्थ है। प्रेम ने इस दावे को स्वीकार नहीं किया और उससे फिर लेट जाने को कहा।

"मैं तुम्हें अपने ठीक हो जाने का सबूत देता हूँ। अभी अपने हाथ से तुम्हें चाय बनाकर पिला दूँ तो मेरी बात सही होगी कि नहीं?"

इस विषय पर हुए विवाद को बहस की बजाय मान-मनौवल कहा जाना चाहिये। जयदेव ने उसे विश्वास दिलाया कि वह सामान्यतः स्वस्थ ही है। थोड़ी हरारत कल की थकान की थी। उसने दिनभर आराम कर लिया है और वह ठीक हो गया है। इस बात को जाँचने के लिये प्रेम ने जब दुबारा उसका माथा छुआ, तो उसे ताप विशेष नहीं लगा।

जयदेव झूठ नहीं बोला था। उसकी अस्वस्थता इस अप्रत्याशित आनंद और कोमल स्पर्श से दूर हो गई थी। उसने कहा, "जानती हो, नर्सिंग का काम प्रायः महिलाओं को क्यों सोंपा जाता है? उनकी यह सहज सहानुभूति और ममता-करुणा रोगी का रोग दूर करने में बड़ी सहायक होती है। रोगी को जैसे एक माँ मिल जाती है।"

"माँ", प्रेम ने कहा, "कहीं मिलती भी है क्या? हम तो यही जानते हैं कि जन्म देने के बाद और बचपन में गोद में खिलाने के बाद न माँ रहती है, और न कोई और।"

जयदेव ने प्रेम की बात समझी। यह उसकी स्वानुभूति थी, उसके करुण जीवन की पीड़ा और कसक। तब जयदेव ने उसे लीलाबेन के बारे में बताना शुरू किया, जिनके मातृत्व का कहीं ओर-छोर न था। उन्हें अधिकांश लोग मम्मी कहकर ही पुकारते थे। "आओ, मैं तुम्हें आज उनसे मिला दूँ।"

डा० मेहता के यहाँ जाने से पूर्व दोनों ने चाय पी और प्रेम के आग्रह पर जयदेव ने कुछ पथ्य भी लिया।

संयोग से डा० मेहता घर पर ही थे। प्रेम को मम्मी के पास भेजकर जयदेव डाक्टर साहब के पास बैठ गया।

"मैं आज भी आपके यहाँ अकारण नहीं आया हूँ। मुझे आपसे कुछ पूछना है।"

डा० मेहता बोले, "महाभारत के अर्जुन और सूर की गोपियों को तुम जानते ही हो। गोपियों ने कृष्ण से कभी कोई प्रश्न नहीं किया और अर्जुन ने प्रश्न करना युद्ध से पूर्व भी नहीं छोड़ा। क्या तुम यह बता सकते हो कि गोपियों की श्रद्धा और अर्जुन की तर्कबुद्धि दोनों में कौन श्रेयस्कर है?"

जयदेव डा० मेहता का शिष्य था, इसलिये यह समझते उसे देर नहीं लगी कि डा० साहब सारा मामला भाँप चुके हैं। वे यह भी जान गये हैं कि वह क्या पूछना चाहता है। उसने प्रश्न के उत्तर में गोपियों की श्रद्धा की श्रेष्ठता स्वीकार की।

"अब पूछो, क्या पूछना है ?"

'जी, मुझे यह अविश्वसनीय सा लगता है कि अर्जुन, पांचाली और यह प्रेम बिना किसी शिक्षा-दीक्षा और संस्कार के इतनी आसानी से हम शिक्षित संस्कृत लोगों के समकक्ष कैसे हो गये ? कभी-कभी तो ऐसा भी लगता है कि सभ्य कहे जाने वाले औसत सफेद पोशों से ये लोग कहीं अधिक सभ्य हैं।"

"मुझे तो इसमें अविश्वसनीय कुछ भी नहीं दीखता। रही समकक्ष आने की बात तो तुम्हारा यह कहना अन्याय है कि इतनी आसानी से उन्होंने कुछ पाया हो। एक वट वृक्ष के नीचे बैठे सिद्धार्थ यदि बुद्ध बन सकते हैं, निर्जन वनों में कठिन जीवन यापन करते हुए भी यदि कोई ऋषि महर्षि बन सकता है,तो ये लोग क्यों नहीं ? क्या इन दोनों लड़कियों ने लाला के अबला-सदन में रहकर किसी ऋषि से कम तपस्या की है, या अबला-सदन के बाहर रहकर तुम्हारे अर्जुन की साधना में कोई कसर रह गई है ?"

जयदेव ने डा० मेहता के चरण छुए। बोला, मुझे क्षमा करें। किन्तु अपने मन में आई शंका का भार मुझसे तब तक नहीं सहन हो पाता, जब तक मैं उसे आपके सामने प्रकट न कर दूँ। अपनी अधमता मैं स्वीकार करता हूँ।

डा० मेहता हँस पड़े। बोले अधमता नहीं यह तुम्हारी युक्ति है, तुम्हारी मेरे प्रति श्रद्धा है, प्रेम है। तुम प्रश्नों के बहाने मुझे सिर्फ छेड़ते हो। तुम्हारे प्रश्न मुझे बुरे कदापि नहीं लगते।

जयदेव मौन रहा। डा० साहब ने आवाज दी, "लीलू, जरा प्रेम के दर्शन हमें भी तो कराओ, जिसने हमारे जयदेव को इतना चमत्कृत कर दिया है।"

लीला बेन प्रेम को साथ लिये बैठक में आ गयीं। कहने लगीं "चमत्कृत

क्यों न होगा ? इसने अपने स्पर्श के जादू से जयदेव का बुखार जो उतारा है।

"अरे वाह ! यह बिटिया तो सचमुच चमत्कारी है।"

"जी, चमत्कार वगैरह की कोई बात नहीं है। मुझे थकान की हरारत के अलावा और कुछ हुआ ही न था।"

"ठीक तो है, "डा० मेहता ने कहा' "न तन की बीमारी दूर होना कोई चमत्कार है और न ही मन की बीमारी दूर होना। किन्तु फिर भी जो निमित्त बने, श्रेय उसी को है।"

18

जयदेव को विद्रोही ने बुलाया तो अपने वह साथ पीयूष को भी ले गया। 'बात का धनी' का पाठक परिवार तो बढ़ा था, किन्तु प्रबंध परिवार सिकुड़ कर इन दो का ही रह गया था।

विद्रोही ने उन्हें बताया कि लाला के वकील हरिमोहन ने गिरफ्तारी से पहले ही अदालत से उनकी जमानत मंजूर करा ली है। मजिस्ट्रेट ने पचास हजार की जमानत और पचास हजार का मुचलका लेकर उन्हें तारीख पेशियों के लिए पाबंद कर दिया है। सहायक इन्जीनियर हरिदेव और स्टोरकीपर गुरुदयाल को भी दस-दस हजार के जमानत और मुचलके भरने पड़े हैं।

"लाला," जयदेव ने बताया, "अपने पापों को धोने के लिए तीर्थ पर गये हुए हैं। मेरे विचार से यह मात्र संयोग नहीं है कि जिस दिन हमने लाला के बारे में आक्रामक रुख अपनाया उसी दिन वे अकस्मात तीर्थ यात्रा की बात सोचें।"

"लेकिन," विद्रोही ने कहा, "उस दिन हमारा यह निर्णय गोपनीय था, और भ्रष्टाचार निरोधक पुलिस के अलावा इसकी जानकारी सिर्फ हमी लोगों को थी। यह बात लाला तक पहुँची कैसे ?"

उत्तर पीयूष ने दिया "लाला शहर की एक बड़ी हस्ती है। लाला के यहाँ से सरकारी विभागों के उन सभी अफसरों की दस्तूरी बँधी हुई है, जिनसे उन्हें

काम पड़ता है। यह हमारे यहाँ भी चलता है। इसीलिए मुझे खान ब्रदर्स के काम में अरुचि है। आपने तो खुद ही देखा होगा, सन् 42 के आस-पास लाला वार फंड में अंग्रेजों को चंदा देने के साथ कांग्रेस को भी दान दिया करते थे। ऐसा मैंने वावूजी–अपने ससुर के मुँह से कई वार सुना है।"

जयदेव ने जोड़ा, "लाला ने पिछली सरकार को तो वनाकर रखा ही था अब उसने आपकी सिफारिश पर मुझे विज्ञापन देकर नई सरकार पर भी डोरे डाले हैं।"

विद्रोही बोले, "यह फैसला तो लिया जा चुका है कि फर्जी विल कांड के लिये लाला पर मुकदमा चले। यदि लाला कानून में अपराधी न सिद्ध हो पायें, तब भी मैं समझता हूँ, उन्हें कुछ सबक तो मिलेगा ही। एक वार उन्हें अपराधी कटघरे में खड़ा तो होना पड़ेगा।

पीयूष ने कहा, "और इतना भी काफी होगा, क्योंकि लाला की जड़ें इतनी भीतर घुसी हुई और इतनी मजबूत हैं कि उनका मूलोच्छेद संभव नहीं।"

"यहीं" विद्रोही ने कहा, "मैं भी कहना चाहता हूँ। जब तक समाज की पूरी रचना को ही नया रूप न दिया जाये, तब तक ऐसे लोग भी उपयोगी हैं। हम सिर्फ टैक्स के वूते पर लाला जैसे चतुर और धूर्त व्यक्तियों को कील नहीं सकते, जिनके पीछे टैक्स सलाहकारों और विधि परामर्शदाताओं की एक लम्बी कतार है।"

जयदेव मात्र इतने से ही संतुष्ट नहीं था, किन्तु यह देख रहा था कि पहला हमला विफल हो जाने के कारण लाला को सुरक्षा और प्रतिरक्षा का मनचाहा अवसर मिल चुका है। इसलिए वह चुप ही रहा।

वकील हरिमोहन के निर्देशों के अनुसार मुनीम रामगोपाल ने निर्माण विभाग को दो लाख रुपयों के हार्डवेयर की सप्लाई से सम्वन्धित सभी कागजात

तैयार करा लिये थे। इनके अनुसार कलकत्ता, जमशेदपुर और दिल्ली के थोक व्यापारियों से माल खरीदा गया और लाला के गोदामों से दस दिन के भीतर यह पूरा सामान, जो बिल में विभाग ने तसदीक भी कर रखा है, निर्माण विभाग को सौंप दिया गया।

शाम 7.30 बजे के आस-पास जब लाला ने हरिद्वार से फोन किया, मुनीम जी ने उन्हें यह शुभ सूचना दी की इधर की सब कार्यवाई मुकम्मिल है और सेठ जी जब चाहें वापस लौट सकते हैं। वकील साहब ने गिरफ्तारी से पूर्व उनकी जमानत भी मंजूर करा ली है और संकट पूरी तरह टल गया है। हाँ, उनके कार्यालय पर और हवेली पर चुपचाप नजर जरूर रखी रही है, ताकि जब सेठ साहब लौटें तो पुलिस गफलत में न रहे। वे ऐसा नहीं सोचते कि उनके सुरक्षा प्रयासों की कोई भनक भ्रष्टाचार पुलिस को मिली हो।

"कब कब तक वापस पधारना होगा", मुनीम रामगोपाल ने फोन पर पूछा।

"मैं यह तीर्थ यात्रा मैदानों तक ही सीमित रखना चाहता हूँ, क्योंकि पहाड़ी तीर्थों की चढ़ाई उनके वश की नहीं है। लेकिन इसके लिये मुझे सेठानी साहिबा को भी रजामंद करना पड़ेगा।"

19

पीयूष ने अर्जुन से पूछा 'उस दिन शरफू तुम्हारे पास आया, तो क्या गुजरी ?"

"मैंने उसे अपने साथ रेडीमेड डिवीजन में काम देने के लिए राजी करना चाहा, किन्तु वह इसके लिए तैयार न था। वह तो मुझे अपना काम छोड़कर उसका साथ देने के लिए तैयार करना चाहता था। यह रेडीमेड रकम चाहता था।"

"क्या उस दिन भी उसने वही बात कही कि आज धंधा मंदा है ?"

"जी । किन्तु उस दिन मैं उसके आने से घबराया नहीं और मैंने उसके सामने यह भी साफ कर दिया कि अब उसकी मेरे यहाँ दाल नहीं गलेगी। यह भी एक तरह से अच्छा हुआ कि इसी बीच मैंने अरोड़ा साहब के यहाँ काम छोड़ दिया था और हैण्डलूम बोर्ड का कार्यालय अपने अर्द्धसरकारी रुतबे की वजह से उसकी पहुँच के बाहर है।"

'उसने घर पर आने की धमकी नहीं दी ?"

"वह ऐसा कहे, इससे पहले ही मैंने उसे यह जता दिया कि ऐसा सोचना भी उसके लिए एक गलत कदम होगा। पांचाली को विद्रोही जी अपनी पुत्री के समान मानते हैं और यदि उसने मेरे घर की ओर कदम उठाया तो उसे अपनी आजादी को दाँव पर लगाना पड़ेगा।"

"तुमने अपने घर पर उसका जिक्र किया ?"

"हाँ, क्योंकि उस दिन आपने और जयदेव बाबू ने मेरा भय निकाल दिया था। यह बात समझने में ज्यादा मुश्किल भी नहीं है कि शराफत को शैतानियत से डरने की जरुरत नहीं। भय तो अपराधी को होना चाहिये।"

पीयूष ने कहा, "अपराध या तो मजबूरी में होता है, या फिर आदतन। मजबूरी में किया हुआ अपराध तो क्षमा किया जा सकता है। कभी-कभी अपने अस्तित्व या प्रतिष्ठा को बचाने के लिए ईमानदारी से कोई रास्ता नहीं मिल पाता। सीधी ऊँगली से घी न निकलने का यही अर्थ है। किन्तु अपराध यदि बीमारी की तरह काबू के बाहर हो जाये, तो उसका इलाज भी जरूरी है।"

अर्जुन जो अपने नाम के अनुरूप एक जन्मजात शिष्य था, बात को पकड़ते हुए बोला, "उसका इलाज दो साल तक चला, कुछ ही महीने पहले वह जेल से छूटा है, मगर बीमारी बदस्तूर है।"

"ऐसा भी होता है। बीमारी लाइलाज भी हो जाती है। आदत स्वभाव से दूसरे नम्बर पर नहीं वह स्वभाव की भी परदादी है। यह बात वह सिपाही बता देगा, जिसने अटेन्शन सुनते ही अपने खाने को नाली में गिरा दिया था। अपराध आदत बन जाये तो चोर चोरी से जाकर भी उठाईगिरी से नहीं जा पायेगा।"

अर्जुन को इन दिनों अवकाश मिलने लगा था और इस अवकाश का जो क्षण जयदेव और पीयूष के साथ ऐसी चर्चाओं में बीतता था, वह उसके लिये मूल्यवान होता था। उसने कहा, "तो क्या शरफू अब लाइलाज स्थिति में पहुँच चुका है?"

"नहीं पहुँचा है, तो पहुँच जायेगा। किसी आदत को छोड़ना भी एक तरह से नई आदत डालना होता है। जैसे कोई व्यक्ति सिगरेट छोडना चाहता है, तो उसे सिगरेट न पीने की लगातार आदत डालनी होगी। जो लोग धीरे-धीरे सिगरेट छोड़ना चाहते हैं, वे कभी नहीं छोड़ पाते और जो एक बार कसम खा लेते हैं, अक्सर सफल हो जाते हैं। तुम्हारा शरफू अपने अपराधी जीवन का तो निरन्तर अभ्यास करता रहता है किन्तु शराफत की जिन्दगी का कभी कोई अभ्यास नहीं करता। तुम अपना ही उदाहरण लो। यदि तुम अपनी पिछली आदतें एक दम से नहीं छोड़ते, तो आज तक उसी कुत्ताघसीटी में पड़े रहते। तुमने संकल्प लिया, उस पर दृढ़ रहे, तो आज तुम्हारे मन में अपराध का स्फुरण ही नहीं हो पाता।"

"मैंने तो अपने लिए चैन का रास्ता चुना है। उन दिनों, जब मैं भी शरफू की तरह हाथ की सफाई पर गुजारा करता था, मन में हमेशा एक भय का आंतक छाया रहता था। लगता था किसी ने गरदन पकड़ रखी है और अब वह उसे दबाना ही चाहता है जिस दिन मैंने अपनी हाथ की सिली शर्ट-पैंट पहनी उस दिन मुझे लगा कि मैं आजाद हो गया हूँ।"

"इन्सान की बस्ती में कई तरह के, तरह तरह के लोग मिलेंगे या लाला की जड़ें सात पीढ़ियों से भी ज्यादा गहरी हैं। शरफू जड़ से उखड़ा हुआ है और तुम जड़ से उखड़ जाने के बाद भी जड़ें जमाने में कामयाब हुए। जयदेव के और तुम लोगों के जीवन में ऐसा ही हुआ है। उखड़ जाने के बाद भी ये बालपादप मुरझाये नहीं बल्कि धरती को छोड़कर इन्होंने अपनी जड़ें खुद घुसाई हैं। खानाबदोशी जयदेव के स्वभाव में है। उसका कुछ ठीक नहीं किस दिन क्या कर बैठे, कहाँ चल दे लेकिन इन दिनों देख रहा हूँ कि जयदेव जमने की और बसने की सोच रहा है, मुसाफिरी की नहीं। क्यों ठीक है न?"

अर्जुन ने कहा, "जयदेव बाबू, लगता है जैसे इस लोक के प्राणी नहीं हैं। लगता है कोई आसमान का सितारा, कोई प्यारा पहचाना सा अजनबी हम लोगों के बीच हो।"

"बिल्कुल", पीयूष ने जोर देकर कहा, "हम लोगों ने खास तौर से मेहता परिवार ने जयदेव को स्नेह के अदृश्य बंधनों से बाँध रखा है, वरना यह जीव किसी खूँटे से नहीं बँधे रह सकता। कवि होने के नाते पागल और भावुक मुझे होना चाहिए था, अपने ससुर की व दीगर पार्टनर की नजर में मैं हूँ भी कोरा कवि, भावुक पागल वगैरह। मगर मैं तुम्हें इस जयदेव की सुनाता हूँ। एक दिन आकर बोला, अखबार निकालूँगा। मैंने पूछा, भाई कैसे निकालोगे, नामा है अंटी में ? बोला, वह सब होता रहेगा, मेरे पास तो कहने के लिए बात है। मुझे उसकी इस सादगी पर मरना आया कि हाथ में तलवार न होते हुए भी आप लड़ रहे हैं।"

अर्जुन और पीयूष पुलकित होकर जयदेव के इस संस्मरण पर हँसे। फिर अर्जुन ने याद दिलाया कि कैसे वह लाला जैसे चतुर और काइयाँ सेठ को उसकी गद्दी पर ललकारने पहुँच गया था, और एक ही मुलाकात का यह असर हुआ कि अर्जुन को पांचाली मिल गई। "मैं भी", अर्जुन ने कहा, "जयदेव बाबू से यही पूछने गया था कि अखबार में बात छपाने के पैसे मिलते हैं क्या ?.. फिर, उनका अखबार कैसे निकला ?"

"अरे, निकलता कैसे ? हम लोगों को उसकी खातिर रुपयों-पैसों का बंदोबस्त करना पड़ा। विद्रोही जी ग्राहक बनाते थे, मदनगोपाल नाम का एक मोटर वाला है, उसे कुछ दिनों सौ रुपये में ट्रांसपोर्ट वालों की पोल खोलने का चस्का रहा। लाला के वकील हरिमोहन, जिनका हम लोगों के बीच भी उठना-बैठना है, अखबार को ब्लैकमेल शीट बनाना चाहते थे; कुछ तीर-तुक्के उनके लगे भी। जयदेव तो मुझे साहित्य के दो पृष्ठ देकर प्रसन्न था कि सारी बकवास के बावजूद उसके पत्र में कुछ पठनीय सामग्री मिल जाती है।"

"मैं", अर्जुन ने कहा, "पत्रकारिता को समझने का दावा तो नहीं कर सकता, क्योंकि पढ़ना सीखे ही मुझे जुम्मा-जुम्मा आठ दिन हुए हैं। मगर मैं

इतना कह सकता हूँ कि जयदेव बाबू का अखबार शहर के दूसरे साप्ताहिकों से बाजी मार चुका है।"

"यह सही है", पीयूष बोला, "कि इन दिनों जबसे उसका अखबार मोटरों और स्कैन्डलों से बचकर निकलने लगा है, काफी अच्छा निकल रहा है। एक बार डा० मेहता तक उसकी तारीफ कर चुके हैं।"

थोड़ी देर और इधर-उधर की बातें करके अर्जुन अपने गैरेज वाले कमरे में आ गया।

20

प्रेम घर पर न थी। अर्जुन ने पूछा तो पांचाली ने बताया वह अपनी ड्यूटी पर गई हुई है।

"ड्यूटी" ? अर्जुन ने पूछा।

"एकदम ड्यूटी। जयदेव बाबू की देखभाल करना वह किसी धार्मिक अनुष्ठान से कम नहीं मानती। उस दिन वह डाक्टर मेहता के यहाँ से लौटी, तो उसके पाँव जमीन पर नहीं पड़ रहे थे। मालूम होता है, डाक्टर साहब और मम्मी ने इन दोनों को हरी झंडी देकर काफी आगे बढ़ा दिया है।"

"आज पीयूष जी भी ऐसा ही कुछ कह रहे थे। कहते थे, ऐसा लगता है कि जयदेव अब जमने और बसने की सोच रहा है, वरना उसका कोई ठीक नहीं कब कहाँ चल दे या क्या कर बैठे।"

"मैं तो", पांचाली ने कहा, "यही कहूँगी कि लड़की के भाग खुल गये हैं। उसके इस जन्म के या पिछले जन्मों के पुण्य उदित हो गये हैं, जो इसे जयदेव भइया का स्नेह मिला।"

"जैसे हम लोगों के भाग्य जागे ?"

"अरे, हम लोगों के भाग्य भी अपने आप नहीं जागे हैं, उन्हे भी इस देवता ने जगाया है।"

"तुम भी इन्हें देवता कहती हो ? मुझे भी जब उनका ध्यान आता है, तो लगता है मेरे हृदय से कविता फूट रही हो। जयदेव बाबू के बारे में पीयूष जी भी बड़े भावुक बन जाते हैं, और कभी उनकी बात करते नहीं थकते।"

"मैं बहुत पहले से यह देख रही थी कि प्रेम अब अपने वश में नहीं है। आखिर वह चन्द्रमा को छूने में सफल हो ही गई। कहती थी, उन्होंने मुझे आसमानों में पहुँचा दिया है। कहते हैं, तेरे हाथ के जादू से मेरा बुखार उतर गया।"

दोनों ने बातें करते हुए अपना खाना खत्म किया और घूमने के लिये सड़क पर आ निकले। जयदेव और प्रेम के संबंध में बातें हो ही रही थीं, उनसे तत्काल मिलने और सपनों के नींद की झलक पाने के लिए दोनों जयदेव के आवास की तरफ चल पड़े।

प्रेम उस समय जयदेव को अपने हाथ से बना हुआ खाना खिला रही थी, और जयदेव खा कम रहा था और हँस अधिक रहा था। अर्जुन और पांचाली को देखा, तो बोला, "अरे जल्दी इधर आओ। इस प्रेम ने अपने हाथ के बनाये खाने को इतनी तारीफ की, इतनी तारीफ की कि मैं होटल में खाना खाने नहीं जा सका। अब यह सूखी रोटी और बेस्वाद सब्जी खिलाकर पूछ रही है, खाना ठीक बना है ना ?"

प्रेम ने प्रतिवाद किया, "वाह, खुद ही कह रहे थे कि अब होटल नहीं जाऊँगा, और खाने की छुट्टी। मैंने खाना बना दिया। अब घंटा भर से खा रहे हैं और मुझे छेड़ रहे हैं। अरे सब्जी बेस्वाद है, तो चाटते क्यों हैं ?"

"वाह ! यह भी खूब रही। खुद ही तो जिरह करके पूछ रही थी कि एक बार खाने का कितना बिल देते हो, और जब मैंने बताया कि वहाँ के खाने में जो कुछ है, बिल की ही माया है, प्याज और चटनी के भी वहाँ पैसे लगते हैं, तो कहने लगी, उतने पैसों में तुम दो दिन घर पर खा सकते हो।"

"मैंने इनसे कहा था, "प्रेम बोली, "कि तुम पेटभर कर खा सकते हो। अब यह सवा घंटे से खाये जा रहे हैं और कह रहे हैं, पेट नहीं भरा।"

पांचाली ने फतवा दिया, "मामला गम्भीर मालूम देता है। लगता है फैसला मुश्किल से हो पायेगा।"

अर्जुन ने कहा, "फैसले के काबिल मामला ही नहीं है, यह मामला तो चलता ही रहेगा।"

"कौन सा मामला ?" जयदेव ने पूछा।

"वही, "अर्जुन ने पांचाली की ओर इशारा करते हुए कहा, "जो गम्भीर बताया जा रहा है। अब बताओ कौन सा मामला है ?"

"यह कौतुक जो तुम मुझे साथ लेकर देखने आये हो। यहाँ जादू के खेल होते हैं, इस कमरे में बैठे-बैठे ही कोई सातों आसमानों की सैर कर लेता है।"

"लो, भाई। टोकाटाकी होने लगी है, दस्तरखान छोड़ें, चलो, अब तुम भी फटाफट खा-पीकर इन्हीं लोगों के साथ लौट जाना।"

पानी पीकर उठते हुए जयदेव ने कहा, "मजा आ गया। प्रेम की बात सही है होटल में ऐसे पेटभर नहीं खाया जाता। वहाँ यह ध्यान आता रहता है कि जितना खाओगे उतना बिल बढ़ेगा इसलिये जल्दी पेटभर लेना पड़ता है।"

उस रात ने जयदेव को सोने नहीं दिया। उसके कानों में चूड़ियों की खनक गूँजती रही, उसके मानस पर एक मुस्कुराहट बिजली सी चमकती रही और कोई स्पर्श उसे बार-बार गुदगुदाता रहा।

जयदेव ने ताजे खिले फूलों से हँसते सितारों को आसमान में देखा, तो उन्हें बिना बोले अपने मन की बात बता दी। चमकते चाँद को उसने अपनी आत्मा का निःशब्द आवेदन भेजा। क्या इस चंद्रमा की किरणों से, जो एक और तन को भी छू रही होंगी, कोई संदेशा नहीं भेजा जा सकता ? एक बादल से भेजा गया संदेश अमर हो चुका है, यह किरण की पाती क्या कहीं पहुँचेगी ?

कई पुराणग्रंथियों को यह तथ्य स्वीकार नहीं है कि मनुष्य चंद्रतल पर अपने चरण चिन्ह छोड़ आया है। इस समय मन की बातें समझने वाले इस

चंद्रमा के लिए, शायद जयदेव भी उन्हीं पुराणपंथियों से सहमत हो जाता। उसकी प्रेम के सस्मित मुख जैसा यह चाँद इसलिये है ही नहीं कि यहाँ बग्घी या रिक्शा चलाया जाये। शाश्वत काव्य का यह विषय विज्ञान के लिये कुछ अनधिकार चेष्टा है।

प्रेम सो रही थी, तो क्या हुआ। उस रात उसके पास एक सपना आया।

21

हरिद्वार से फोन करने के बाद लाला छदामी लाल को लौटने के लिये लाइनक्लियर तो मिल गया, मगर वे अपने मन को नहीं समझ पाये। धन्ना घर लौटने की बात पर खुश हुआ, तो लाला उस पर बिगड़ उठे।

लाला ने कहा, "अरे, पेमा का दिल जीतने के लिये अभी तुझे और पुण्य कमाना पड़ेगा। गंगाजी के दो-चार घाटों का पानीं तेरे जैसों के पाप धोने के लिये काफी नहीं है।"

"मैं तो मालिक, जितना पुण्य कमाना होगा, आपकी चाकरी से ही कमाऊँगा। गंगाजी के दर्शन भी मुझे इसी चाकरी में मिले हैं।

मालिक की नौकर पर झल्लाहट तो कम हुई मगर अपनी ललाइन से वे घर लौटने की बात नहीं कह पाये। ये लोग काशी, प्रयाग तो हो आये थे, मथुरा, वृन्दावन नहीं जा पाये थे, इसलिये दिल्ली रुककर, जहाँ लाला को व्यापार सम्बन्धी भी कुछ काम था, यमुना-स्थान का कार्यक्रम भी तय हो गया।

लाला को यह यात्रा सपनों जैसी सुखद लग रही थी। यहाँ उन्हें कोई झंझट, कोई चिन्ता न थी और चैन की नींद आती थी। आखिर लक्ष्मी भी तो नारायण की सेवा करती है, फिर ताज्जुब क्या कि पैसे की पूजा भगवान की पूजा से थोड़े दिन पिछड़ जाये?

सही बात यह है कि लाला आद्योपान्त सम्पूर्ण वणिक थे। वे जय-पराजय को मूँछ ऊँची करना या नीची करना मात्र मानते थे और दोनों स्थितियों के लिये समान रूप से तत्पर रहते थे। इसीलिये उन्होंने पांची के मामले में पाँच मिनट में हथियार डाल दिये। बड़ों की बड़ी बातें, इन पर छोटे मापदण्ड कारगर नहीं हो पाते। एक सेठ अपने कारखाने में बीस दिन की हड़ताल का घाटा खा लेता है, हारकर यूनियन की शर्तें मान लेता है, मजदूरी बढ़ा देता है, छँटनी नहीं करता, और फिर भी अंत में कमाकर उठता है। उसे दो पैसे का मुनाफा चाहिये, उसे कारीगर के दो रुपये बढ़ाने में ऐतराज नहीं। ऊँच-नीच, तेजी-मन्दी के लिए वह तैयार रहता है, और दिवाला पीटकर फिर से दीवाली पर घी के दिये जला लेता है।

लाला यह समझते थे कि कौन सा पैसा किस पैसे को खींचता है। इसका नियम यह है कि बड़ी ढेरी बड़ी होती जायेगी और छोटी ढेरी छोटी। शरफू एक पैसा अपनी जेब में रखकर सोच ले कि वह तिजोरियों के पैसे अपनी तरफ खींच लेगा, तो अपना धंधा ही खोटा करेगा। गाँव का महाजन मामूली से सूद पर सारे किसानों की कमाई खींच लेता है। कमाने में आज के बैंक भी पीछे नहीं हैं, लाला क्यों पीछे रहें? लाला जिस कमाई की मशीन हैं, वह मशीन कुछ देर ठंडा होना चाहती है। कभी मशीन भी रुककर तेल, पानी, मरम्मत माँग लेती है। लाला महीने-दो-महीने का अवकाश ले लेंगे तो आकाश टूटकर तो गिरने से रहा। पर बेवकूफ धन्ना लाला की गहरी बातों को क्या समझे?

लाला सोचने लगे, धन्ना को घर लौटने की तो पड़ी है, पर पेमा तो उसे ठेंगे पर रखती है। बाप रे, त्रियाचरित्र भी किसी ने समझा है? उन्होंने पांची को पटाना चाहा, धन्ना ने पेमा को, मगर छोकरियों ने ऐसे पंख निकाले कि फुर्र हो गयी। लाला ने उस छोकरे के बारे में पूछताछ की थी, जो पांची को ब्याह कर ले गया था। वे चाहते तो एक इशारे पर उसे तंग कर डालते, पर वे ऐसे ओछे जीव नहीं हैं।

सिर्फ जयदेव के मामले में लाला को दीवार से टकराना पड़ा। वह एक तेज-तर्रार आदमी है, खरी बात कहना चाहता है और लालू खाँ के दामाद और विद्रोही के अलावा उसका कोई हिमायती भी नहीं दीखता। लाला ने यह भी सुना था कि वह डा० मेहता का विद्यार्थी रह चुका है। मगर डा० मेहता लाला की परिधि के बाहर की वस्तु थे। इसीलिये लाला ने जयदेव के साथ टकराव की स्थिति नहीं आने दी। लाला के जीवन दर्शन के अनुसार टकराव की स्थिति कहीं आनी भी नहीं चाहिये।

रही बात फर्जी बिल्बांड और पचास हजार के डूबने की, तो यह लाला की दृष्टि में व्यापारिक ऊँच-नीच थी। कभी गाड़ी नाव पर, तो कभी नाव गाड़ी पर। उनके खाते कुछ भी कहें, सारा खेल मुनाफे में से ही हुआ और लाला को अपनी गाँठ से कुछ नहीं देना पड़ा। इधर मुकदमे की भँड़ास निकली, उधर कोई दूसरा सौदा पटता नजर आयेगा।

बहरहाल, लाला की तीर्थ यात्रा अभी जारी है, यद्यपि उनके घर लौटने का रास्ता साफ हो चुका है।

22

कवि घायल, जो पिछली अस्पताल यात्रा के बाद कहा करते थे "भर तो गया घाव दिल का पर हाय ! निशान अभी बाकी है, इस बार सचमुच जोर की कविता लिख रहे थे। इसकी पहली पंक्ति उन्होंने जयदेव को सुनाई थी।

स्वर में चिनगारी शब्दों में ज्वाला है . . . दूसरी पंक्ति बने तब तक वे पीयूष के पास पहुँच गये थे।

असंतोष के मुँह पर लेकिन ताला है . . . और विद्रोही के यहाँ उन्होंने एक छंद पूरा कर लिया।

. . . . साजिश ने सैलाब रोशनी का रोका
अंधियारे को सूरज बना उछाला है !

चार पंक्तियाँ बनते-बनते शाम भी हो गई थी और शाम उनके लिये अब भी शामेशराब थी। नशे के पहले शरूर में उन्होंने खुद को ही अपना छंद सुनाया।

स्वर में चिनगारी शब्दों में ज्वाला है
असंतोष के मुँह पर लेकिन ताला है
साजिश ने सैलाब रोशनी का रोका
अंधियारे को सूरज बना उछाला है।

और खुद ही इस छंद पर दाद दी। कवि घायल के स्वर में चिनगारी और शब्दों में ज्वाला नहीं आयेगी, तो क्या आरामकुर्सी के कवियों के स्वर में आयेगी ? गूंगा असंतोष एक क्रान्तिकारी को जैसा चूमेगा, पीयूष जी क्षमा करें, वैसा और किसको चुभ सकता है। संक्षेप में कवि घायल की दाद यह थी कि जो बात इस छंद में है, वह सिर्फ कवि घायल के ही बूते की बात है, सिर्फ वे ही ऐसा लिख सकते हैं। उन्हें लगा, अब कलम तोड़ी जा सकती है।

कवि घायल ने कलम नहीं तोड़ी, क्योंकि इस वक्त तोड़ने के लिए उनके पास गिलास था, कलम थी ही नहीं। गिलास तोड़ना यों भी व्यर्थ था और न तोड़ने के पक्ष में कई पुष्ट कारण थे। बहरहाल, जो वे कर सकते थे, उन्होंने वही किया, यानी वे गिलास खाली करके उठ गये।

शहर में इस वक्त रोशनी का सैलाब आया हुआ था। कवि घायल का मन भी जगमगा रहा था। इस समय उन्हें सिस्टर विलसन याद आ रही थी और वे चाहते थे कि मिस विलसन के आँखों की थाह लें। उनके पैर मुड़े भी अस्पताल की ओर थे, मगर शायर जख्मी ने रास्ता काटकर अपशकुन कर दिया। यही नहीं, जख्मी उन्हें कुछ सुनाना चाहते थे। शायद कोई ताजी चीज, इसलिये उन्हें जो कहना था, रास्ता रोककर कहा।

यह भी एक संयोग रहा कि दोनों की जेब की सम्मिलित सामर्थ्य एक पउए के बराबर थी और दो दीवानों की महफिल फिर से जुड़ गई। सुनने-सुनाने और पाव भर शराब के छोटे से दौर के बाद घायल और जख्मी एक जान दो शरीर होकर दोस्ती के प्यार में सराबोर झूमते हुए जब फिर दुनिया में लौटे तो उनकी बातचीत का रुख साहित्यिक था।

दोनों को सहसा बोध हुआ कि भाषा के परदों के आरपार सभी लेखक सरीखे हैं, उनके दर्शन में, लेखन में, विषय चयन में, यहाँ तक कि शैली में भी समानता है। सब भाषाओं के लेखकों की जिन्दगियों के कड़ुवे-मीठे अनुभव भी कुल मिलाकर एक से हैं।

''मैं तेरा दर्द समझता हूँ, प्यारे'' जख्मी ने कहा।

''हम दोनों हमदर्द हैं,'' घायल ने संशोधन किया।

''सुभान अल्लाह! मिसरा सानी भी फरमाइये।''

''ऐसा!'' चुनौती स्वीकारते स्वर में घायल ने कहा, ''हमदर्द-मर्द, गर्द, सर्द, जर्द ...... । बात यह है, ''उन्होंने बचते हुये कहा, ''काफिये इस मिसरे का साथ नहीं दे पा रहे हैं। आप खुद कोशिश फरमाइये।''

''अजी छोड़िये। हमने तो आपकी बात पर जरा शायराना दाद की थी। हम दोनों हमदर्द हैं, यह जुमला जितना छोटा है, उतना ही बड़ा भी है, मायनों में।''

''जो लोग हमजमाना हैं, उनमें हमदर्दी होनी ही चाहिये। मगर ऐसा देखने को कम मिलता है। लोग एक दूसरे को देखकर जलते हैं। चोर-चोर भाई हो सकते हैं,' कवि घायल बोले, ''मगर कवि' कवि को देखकर जलेगा।''

शायर जख्मी ने कहा, ''जमाने की आप जानें, हम तो एक अदबी इत्तिफाक आपको बता रहे थे। मैं जख्मी हूँ और आप घायल हैं।''

''है तो यह एक साहित्यिक संयोग ही। जरा और गहराई से देखो तो पता चलेगा कि यह जमाना लोगों को हिन्दी में घायल करता है, और उर्दू में जख्मी चोट उसी जमाने की पहुँचाई हुई है, जो हमें भोगने को मिला है।''

''देखते जाओ प्यारे! अभी तक हमें जमाना मिला है। वह दिन भी आयेगा, जब जमाने को हम मिलेंगे–जमाना हम को मिला, हम मिले जमाने को।''

''सिलसिला खूब बना जोर अजमाने को।''

''क्या कहने हैं,'' जोश में आकर शायर जख्मी बोले, ''लगता है जानेमन,

शायरी और शराब में कोई रिश्ता जरूर है। आज तो दोनों ने एक दूसरे का मजा देकर रूह को तर कर दिया।"

"तभी तो मैं अक्सर कहता हूँ कि शराबखाने शायरों के लिए खोल दिये जायें। मगर इन सरकारों को न जाने क्या हुआ है कि दारूबंदी के पीछे लट्ठ लिये फिरती हैं।"

"नाम मत लो सरकार का—थूः ! सालभर से वजीफा बंद किये बैठी है, और न जाने क्या-क्या बंद करेगी। मयखाने में एक शेर सुनकर आया था—मेरा भी वही कहना है—

"साकी जरा मयखाने का दर खोलके रखना
शायद मुझे जन्नत की हवा रास न आये !"

'अरे वाह रे 'शायद' ! इस शायद ने तो कमाल कर दिया। इसका बिल्कुल उल्टा मतलब है। कहना है जरूर, मगर शायद से काम चलाया" घायल भी चहके।

"अरे वाह प्यारे।" जख्मी अलापे, "यह जरूर आप कहाँ से पकड़ लाये। बात जन्नत में मयखाने की हवा खाने की है, और आप शायद और जरूर की टाँग खींचने लगे।"

"आ गये न मियाँ जख्मी अपनी असलियत पर ! तो जनाब यह रस की दावत अदावत न बने, इसलिये अलविदा !"

कहकर कवि घायल तीर की तरह यह जा और वह जा और जख्मी महाभाग मुँह बाये खड़े रह गये।

कवि घायल ने पीयूष को आरामकुर्सी का कवि मानकर उनसे क्षमा माँगते हुए सोचा था कि गूँगा असंतोष क्रांतिकारी को ही चुभ सकता है। पीयूष को आरामकुर्सी पर ही यह गूँगा असंतोष चुभ रहा था और चुभन गहरी थी।

कुछ नहीं, यह सब झमेला है, बकवास है। शायद बाबूजी का सोचना सही है, दुनिया का सबसे अहम काम पैसा कमाना है। मुझे उन्होंने जबर्दस्ती पैसा कमाने के काम में जोत रखा है। मेरी कविता मेरी भावुकता के कारण है,

पीयूष ने सोचा, लेकिन लोग उस पर दाद इसलिये भी देते हैं कि यह बात लखपतियों के दामाद ने कही है, और बाज लोग यह कहने से भी नहीं चूकते कि लालू खाँ ने दामाद छाँटकर लिया है। गोया, जो कुछ है, सब पैसे की माया है, और कवि पीयूष या वह जो कुछ भी है, इस पैसे की माया के इन्द्रजाल का ही चमत्कार मात्र है। क्या मैं, जो वाणी के माध्यम से अपने विशिष्ट, निजी अस्तित्व की खोज में लगा हूँ, वह खोज ही नितान्त व्यर्थ और अपदार्थ है ?

यह जो अपना दर्द है, उसमें से कुछ ऐसा भी है, जो बँट नहीं पाता। मेरा दर्द, पीयूष ने सोचा, शायद लोग बाँटना तो दूर, समझ भी न पायें। खाता हूँ, पीता हूँ, रहने को मकान है, लोग पूछेंगे फिर रोना किस बात का है ? मैं तो आज तक यही नहीं समझ सका कि लोग जिन्दा कैसे हैं, दुनिया चल कैसे रही है। घायल तंगदस्ती के बावजूद मस्ती की गुजार लेता है। उसे अगर कोई परेशानी है तो एक यही है कि शाम का पौवा कहाँ से आयेगा। उसके लिए वह कविता और क्रांति की दुहाई दे लेता है।

जयदेव आमतौर पर मेरी परेशानी समझ लेता है। हम दोनों की सहानुभूति एक मिलन सेतु का काम दे जाती है। किन्तु इन दिनों सपनों का एक सूक्ष्म ताना-बाना उसके चारों ओर छाया रहता है। मेरा साहस नहीं होता, मैं उस ताने-बाने को छिन्न-भिन्न कर उसे तपते यथार्थ पर वापस खींचूँ।

पीयूष की भोहों पर पड़े बल और गहरे हो गये। रुपया-पैसा और उसके बूते पर बनी हैसियत से पीयूष में इन दिनों एक विद्रोह भावना पनप रही थी, किन्तु यह भावना असहाय थी। इस भावना से प्रेरित होकर वह कुछ कर नहीं सकता था। कवि होते हुए स्वयं उसने एक बड़े घर की बेटी से शादी इसलिये की थी कि ससुराल की दौलत के साये में वह चैन से बैठकर कविता की कला साधना करता रहेगा। उसने इस विवाह के लिये अपनी स्वीकृति देकर न केवल बूढ़े पिता पर एहसान किया था, बल्कि अपनी बहिन के निकाह का रास्ता भी साफ कर दिया था।

किन्तु रुपया-पैसा कमाने की प्रक्रिया को निकट से देखने पर कवि पीयूष का मन खट्टा हो गया। ठेकेदारी के काम में काम से अधिक महत्व ओवरसियरों

और इन्जीनियरों को बनाये रखने का था। इसके लिये तेल तिलों में से ही निकालना होता था। ठेकेदारी के इस गुर को ध्यान में रखते हुये उसे प्रधान कार्यालय में बैठाया गया था, जहाँ उसका काम इधर-उधर से आये रुपयों को जमा करना और पार्टनरों की पर्चियों के अनुसार लोगों को पेमेन्ट देना था। आसान सा काम, कोई ठेकेदारी नहीं।

पीयूष कवि की आँखों से देखता था, इस लेन-देन से बहुत कुछ होता था। ऐसे काम भी जो अनहोने होते थे। उसके पार्टनरों में से कोई सुना रहा था—एक जिलाधीश और एक इन्जीनियर नहर के किनारे घूम रहे थे। चर्चा चल पड़ी कि जिलाधीश जिले का राजा है, वह जो चाहे कर सकता है। जिले के दीगर अफसरान उसके मातहत हैं। कुछ देर तो इन्जीनियर ने इस चर्चा को चलने दिया, फिर जिलाधीश से कहा, "मैं भी आपका एक मातहत हूँ, किन्तु जो मैं कर सकता हूँ, शायद आपके बूते के भी बाहर हो," कहकर उसने अपनी हजारों रुपयों से भरी थैली नहर के पानी में डाल दी।

ठेकेदारी का सारा काम इस लेन-देन पर ही चलता था। काम है ही लेन-देन का, निर्माण विभाग के एक डिवीजन ने बरसों एक फरजी गैंग के नाम पर उसी तालाब की खुदाई, और उसे पाटने के भुगतान साल दर साल उठाये और किसी को कानों-कान खबर नहीं हुई। पीयूष के ससुर लालू खाँ और दूसरे खान ब्रदर्स पैठ वाले और साख वाले ठेकेदार थे। वे हर तरह के निर्माण के ठेके लेते थे और हर तरह की सपलाई के भी। चाहे सड़क बनाने का काम हो या नहर खोदने का, या फिर इमारती काम, खान ब्रदर्स हर बड़े काम के लिए हाजिर थे। फिर उस काम में जैसे और जितने माल की जरूरत होती थी, उसकी सपलाई भी दूसरे पार्टनर कर देते थे।

शहर के इस मुख्य बाजार में यह इतना बड़ा दफतर लालू खाँ ने पीयूष के लिए खोला था। उनका यह पढ़ा-लिखा शायर मिजाज दामाद इस दफतर में मुड्ढे पर बिठाकर एक कैम्पा कोला या चाय पिलाकर और 'कुछदेर हँस-बोलकर किसी अफसर को जितना राजी कर देता था, उतना फर्म के दूसरे पार्टनर लाल कालीन बिछाकर, नोटों की मालाओं के साथ स्वागत करके भी नहीं कर पाते

थे। कुछ साहित्य प्रेमी अफसर मिनिस्टर भी पीयूष के घर आने या उसे अपने निवास पर गोष्ठियों में बुलाने में गौरव महसूस करते थे।

एक साधारण बाप का बेटा चाँद खाँ पहले तो इन लोगों के बीच आकर स्वयं चमत्कृत हुआ। उसे लगा जैसे जिन्दा रहने के लिये लगाया हुआ उसका पहले तक का कुल हिसाब बेमानी है। यहाँ खर्चे का नहीं, आमदनी का हिसाब होता है। उन अकेले पति-पत्नियों के लिए अलग रहने को पूरा एक बँगला नौकरों सहित मिला हुआ था। शादी के बाद उसे समाज के उच्च वर्ग के लोगों की सारी सुविधायें सहज रूप से उपलब्ध हो गई थीं। उसके माता-पिता और बहिन उसका यह वैभव देखकर गद्‌गद् हो गये थे। वे जब भी उसके यहाँ गये, संकोच से रहे और कुछ दिन रहकर लौट गये। अधिक दिन रुकने को कोई तैयार नहीं हुआ।

पीयूष को तब पहला झटका लगा। उसे महसूस हुआ, उसे खरीद लिया गया है। वह सोने के पिंजरे में बंद किसी तोता-मैना की तरह है, जिसकी पानी पीने की प्याली चाहे हीरों जडी हो, पर पानी पीकर पंख फड़फड़ाते ही जो तीलियों से टकरा कर अपनी बंदी स्थिति की अनुभूति प्रति, क्षण करता रहे।

शादी के बाद बने नये रिस्तेदारों के बीच रहते हुए भी चाँद खाँ उनके रंग में पूरी तरह रंगा नहीं, और सी० के० पीयूष के नाम से उसने अपनी एक अलग शख्शियत कायम की। उसका घर शहर की साहित्यिक गतिविधियों का केन्द्र बन गया और सी० के० पीयूष शहर के साहित्यिक सांस्कृतिक जीवन में सबकी जबान पर चढ़ा नाम बन गया। खान ब्रदर्स के कार्यालय में भी वह अपने इस साहित्यिक रूप में ही बैठता। रुपयों-पैसों के लेन-देन के हिसाब में उससे चूक हो जाती। अपने छात्र जीवन में वह कई बार घर का सौदा खरीदने गया था और कभी उसने हिसाब में भूल नहीं की। मगर यहाँ भूल हो जाती। इसलिए आजकल पीयूष को इस काम में एक सहायक मिल गया था, जिसका काम रुपयों को सावधानी से गिनना, परखना और हर लेन-देन को कागज पर टीप लेना होता था।

खान ब्रदर्स के कारोबार में पीयूष अपनी अक्षमता से पूर्णतः परिचित था, और इस कारोबार में सक्षम लोगों का संस्कृति और संस्कार के क्षेत्रों में कोरा होना भी उसकी जानकारी में था। उसका साला अनवर पांच-छह बार बी० ए० की परीक्षा में फेल होकर पढ़ाई लिखाई से छुट्टी ले बैठा था। ठेकेदारी का काम सीखने में उसे दिक्कत नहीं आई।

पीयूष के साले अनवर, या ससुराल के दूसरे रिश्तेदारों को अपने व्यवसाय से एक सहज लगाव था, क्योंकि इस व्यवसाय के माध्यम से उनके पास पैसा आता था और पैसा अपने-आपमें शक्ति का पुंज है। उनके संस्कार उन्हें इस पैसे से प्रेम करना सीखा देते थे। पीयूष को जो पैसा मिला वह व्यवसाय के माध्यम से नहीं आया। इसके लिए जितनी कृतज्ञता आवश्यक थी, वह शबनम (पत्नी) के प्रति प्रेम के रूप में व्यक्त हो जाती थी। पीयूष को अपने शब्दों से कोई शिकायत न थी और वह खुले तौर पर यह मानता था कि यह विवाह करके उसने कोई गलती नहीं की है, जहाँ तक उनके दाम्पत्य सुख और गृहस्थी की सुविधा का प्रश्न है। किन्तु इस विवाह के कारण जिन नये लोगों का दायरा उसे मिला, वे लोग उसकी समझ में कम बैठे।

पीयूष का अनुभव यह था कि जयदेव और अर्जुन जैसे लोग आर्थिक संघर्षों से घिरे रहकर भी जितने उदात्तता के धनी हैं, पैसे के धनी ये लोग उस मामले में उतने ही निर्धन हैं। पैसा बटोरने के लिये कहीं न कहीं आदमी को अपने मूल्यों और आदर्शों को ताक में रखना पड़ता है। फिर धीरे-धीरे उसका यह स्वभाव ही बन जाता है कि आदमी धर्म, समाज और ईश्वर सबको चकमा देते हुए वह पैसा बटोरता रहे और जो बातें गुणों के रूप में व्यक्त होना चाहिये, उन्हें पैसे के रूप में व्यक्त करे। इसलिये पीयूष के मन में एक कुंठा जनित आक्रोश ने जन्म लिया, जो उसकी सहज संवेदनशीलता से युक्त होकर उसके काव्य का एक विभूषण बना। यह परिस्थितियों और परिस्थितियों से जनित गूगा असंतोष ही कवि घायल को संघर्ष की कविता देता था और वही कवि पीयूष के काव्य का भी उपजीव्य था। अंतर केवल उनकी अभिव्यक्ति में था। पीयूष प्रतीकों में बात कहता था और घायल सीधी-सपाट बात उगलता था।

23

सपनों का जो सूक्ष्म ताना-बाना जयदेव के चारों ओर बुन गया था, वह इसलिये कसता जा रहा है कि पूरा जमाना अभी इस ओर से आँख मूँदे बैठा है। अभी उस ताने-बाने को तोड़ने का किसी ने यत्न ही नहीं किया जबकि ऐसे यत्न करने में हमारा यह समाज सिद्धहस्त है।

जयदेव के साथ वसुन्धरा नाम की एक लड़की पढ़ती थी। कालेज में वह उस समय मिस यूनिवर्स (विश्वसुन्दरी) थी, और वसुन्धरा को यह बात कभी भूलने न देने के लिए उस सौन्दर्यशिखा के चारों ओर मँडराने वाले शलभों की कमी नहीं थी। पहले तो ये अफवाहें ही थीं कि अमुक-अमुक इस नदी के घाट उतर चुके हैं, पर एक दिन कालेज में सहसा एक सनसनी फैली। दरियाब सिंह, जिसे लोग दारासिंह कहते थे, हाथ में स्टिक लिये दस-पाँच के गिरोह का नेता बना फनफना रहा था। जयदेव को उसने बताया कि आज सी० आई० डी० ने पक्की खबर दी है। पिन्टू कपूर और वसुन्धरा ठीक ३॥ बजे अमुक होटल के अमुक कमरा नम्बर में पहुँच रहे हैं। दोनों को रँगे हाथों पकड़ने और पिन्टू कपूर को सबक सिखाने के लिये दरियाब सिंह दलबल लेकर सीधा वहीं पहुँच रहा था।

खुद दरियाब सिंह वसुन्धरा की तरफ कई बार दिल फेंकने की कोशिश कर चुका था, पर चिड़िया चारा चुनकर फुर्र हो जाती और उसके हाथ नहीं आती थी। इसलिये पिन्टू कपूर को इस चिड़ीमारी का सबक सिखाना बहुत जरूरी हो गया था। दरियाब सिंह के दल में दमित उत्साह और दुरभिसंधि का दौरा-दौरा था। या तो लोग कानाफूसी करके पैंतरेबाजी के दाँव सोच रहे थे, या भुजायें और नथुने फड़का कर पिन्टू कपूर की होने वाली हालत का बखान कर रहे थे। दरियाब सिंह ने जयदेव को भी अपने दल में सम्मिलित करना चाहा और घड़ी पर नजर रखते हुए ताजा स्थिति की उसे पूरी रिपोर्ट दी।

जयदेव ने दरियाब को एक तरफ ले जाकर समझाया, तुम्हारा क्रोध इसीलिये तो है कि पिन्टू कपूर की जगह तुम नहीं हो पाये। हम लोग इस अभियान पर क्यों चलें ? फिर जयदेव ने उसे समझाया, इस समस्त जानकारी से दरियाब चाहे तो भविष्य में लाभ भी उठा सकता है। अभी तो बात सिर्फ बिगड़ सकती है, बनती किसी पक्ष के लिये नहीं है।

दरियाब नें एक मिनिट सोचा और हँसकर जयदेव से हाथ मिलाया। अपने साथियों को उसने चाय पिलाकर विदा कर दिया।

यों मामला टल गया। मगर टला इसीलिए कि दरियाब सिंह ने हँसकर बात मान ली। यदि वह न मानता तो कैसा कांड न हो जाता। कम से कम पिन्टू कपूर की ठुकाई और पुलिस केस बनने की नौबत तो धरी-धराई थी।

वह पिन्टू वसुन्धरा और दरियाब का त्रिकोण था, और यह त्रिकोण धन्ना, प्रेम और जयदेव का, किन्तु अलग तरह का। जयदेव जब चाहता तभी हाथ बढ़ाकर चाँद को छू सकता था। चन्द्रमा उसके बिल्कुल निकट था, उसका हाथ ही नहीं उठ पाता था। जैसे हाथ लगाने से चन्द्रमा कीं शुभ्रता पर दाग लग जाने का खतरा हो।

लेकिन ताने-बाने को तो कसना ही था और उस दिन जब प्रेम आई तो बरबस उसका हाथ चांद को पकड़ने के लिए उठ ही गया। धन्ना की चिट्ठी आई थी कि लाला और वह अब भगवान ने चाहा तो जल्दी ही वापस लौटेंगे। प्रेम नें जयदेव से यह चिट्ठी पढ़वाई और जयदेव ने चिट्डी पढ़ते ही कहा," इस सपने को टूटना ही था।

प्रेम जानती थी कि कौन सा सपना है, जो टूटेगा, किन्तु फिर भी उसने अनजान बनकर पूछा कि इस समय दिन-दहाड़े सपना कौन सा आ गया, और आया तो फिर वह टूटेगा क्यों ? इसलिये सपने की बात तो समझने के या समझाने के लिये उन दोनों को वे बातें करनी पड़ीं जिन पर अभी संकोच की अर्गला थी। और बांध जब टूटा, तो सारी सीमायें डूब गईं।

प्रेम जब जयदेव के यहाँ से लौटकर पांचाली के घर गई, तो पांचाली ने देखा कि प्रेम के पाँव जमीन पर नहीं पड़ रहे हैं और आँखें तो कहीं ठहरती ही नहीं।

लाला पूरा एक माह गुजार कर लौटे थे। ललाइन बड़ी मगन थीं। जिन तीर्थों और देवों का नाम लेकर वे रोज स्नान करती थीं, वे सभी तीर्थ और देवता उनके समक्ष थे। मगर जब लाला ने एक दिन कहा कि उन्हें अपने मुरली मनोहर ने रात में सपने में इस बात के लिये डाँटा है कि आजकल वह उनकी सेवा से विमुख हैं, तो ललाइन तत्काल पिघल गईं और लौटने को तैयार हो गईं।

दो-चार बार डाँट खाने के बाद धन्ना का लालाजी से घर लौटने की बात चलाने का साहस पूरी तरह चुक गया था। वह भी अपने मालिक-मालकिन की तरह भक्ति-भाव में तल्लीन होकर तीर्थों से पुण्य अर्जित करता रहा। यों तो चाहे वह बाकी की सारी उम्र तीर्थाटन करते हुए आनन्द से गुजार देता, पर घर का लैला-मजनूँपन कहीं उसे लग जाये तो? इसलिये लाला की अकस्मात घर लौटने की घोषणा पर धन्ना एक बार चौंका मगर फिर उत्साह में भरा लौटने के लिये बाँधा-बूँधी करने लगा।

इस एक महींने में लाला छदामी लाल ने नई व्यापारिक स्फूर्ति प्राप्त की थी। वे अब नये सिरे से ताजादम थे। एक बार फिर उन्होंने पुण्य के बही-खाते ललाइन को सौंपे और कारोबार के बहीखाते खुद संभाले। वकील हरिमोहन से बात की, मुनीम जी से हिसाब लिया और पाया कि उनकी ग्यारह फर्में यथावत कमाई की मशीनें बनी हुई हैं और सरकारी टैक्स वगैरह का हिसाब नक्की है। हर फर्म का एक खाता सेठ जी ने बारीकी से देखा, जो नकद और बैंक में जमा की तरह खर्च का खाता था, उनका अपना चोर खाता।

मुनीम रामगोपाल के पेट में कुछ बात शायद फूल रही थी और जैसे ही सेठजी ने खातों का निरीक्षण समाप्त किया, वे बोले, "चैम्पो बाई

ट्रस्ट की रकम बीस साल से बैंक में थी, उसकी मियाद पूरी हो गई है और बैंक ने पूछा है कि क्या हम लोग मियाद और आगे बढ़ाना चाहेंगे।

"आपका क्या विचार है, मुनीम जी ?"

"अब यह रकम 23 लाख से ऊपर हो चुकी है और अपने नोहरे में चम्पोबाई मार्केट बनाने की योजना पूरी हो सकती है।"

"मुनीम जी, मार्केट बनाने से पहले आपको मेरी एक बात माननी होगी। जिस दिन मार्केट बनकर तैयार होगा, उस दिन हवेली कंवर महल आपको मेरी तरफ से कबूल करनी होगी। आपका किराया आज से माफ, चम्पोबाई मार्केट का फीता जिस दिन कटेगा, हवेली की लिखा-पढ़ी आपके नाम कर दी जायेगी।"

"सब आप ही का दिया है, दाता का भंडार बड़ा है और याचक की झोली छोटी सी।....हाँ, तो मार्केट बनाने का ठेका दे दें ?"

"हाँ, मगर ध्यान रहे, ठेका लालू खाँ को मिले और उनसे कहना कि लाला की बस एक ही शर्त है।"....ऐसा करो मेरी ठेकेदार जी से बात करा दो।"

लाला छदामी लाल और ठेकेदार लालू खाँ के बीच शर्तें तय हो गईं। चम्पोबाई मार्केट सालभर में बनकर खड़ा हो जायेगा। वह एशिया का सबसे खूबसूरत एयर कन्डीशन्ड मार्केट होगा। ठेका लालू खाँ के नाम न होकर उनके दामाद के नाम होगा। लाला ने इस बारे में कोई आपत्ति नहीं सुनी कि चाँद खाँ को ठेकेदारी में कोई रुचि नहीं।" अरे भाई, लड़का कवि है तो क्या हुआ, होनहार है। नाम कमायेगा। फिर हम तो उसे नहीं, जो देंगे, अपनी बेटी को ही देंगे। चलिये, बात पक्की, " लाला ने फैसला किया।

ठेकेदार लालू खाँ के जाते ही मुनीम जी ने लाला से अपनी जिज्ञासा प्रकट की, "आपने यह ठेका सीधे लालू खाँ को न देकर उसके दामाद को क्यों दिलाया है ?"

इस पर लाला छदामी लाल ने बताया कि कुछ लोग गुड़ खाते हैं, गुलगुलों से परहेज करते हैं। यह ठीक है कि लालू खाँ ने दामाद छाँटकर रखा है। उसने अफसरों और राज्य सरकार के मंत्रियों से मेलजाल बढ़ाया है। मगर हजरत अपने-आपको कमल के पत्ते की तरह गीला होने से बचाये हुए हैं।

"जानते हो," लाला ने मुनीम रामगोपाल से पूछा, "चाँद खाँ, जिसने अपने नाम के आगे एक पुछल्ला और जोड़ रखा है, पैसे वालों को गाली देता है। जैसे, उसका ससुर या खुद वह अपनी गाली से बच जायेगा। मैंने उस लड़के की खोज-खबर ली है। बड़ा साधू-वैरागी बनता है, कारोबार से चिढ़ता है और बैठा-बैठा कविता जोड़ता रहता है।"

विज्ञापन दाता होने के नाते जयदेव का अखबार "बात का धनी" लाला के यहाँ नियमित रूप से पहुँचता था। यों लाला अपना समय उस परचे को पढ़ने में बेकार नहीं गँवाते थे मगर इतना तो समझते थे कि "बात का धनी" में हर बार लालू खाँ का दामाद भी कुछ न कुछ लिखता था। उनकी नजर में चोर चोर मौसेरे भाई थे। कवि, नेता, सम्पादक वगैरह दूसरों के सहारे जीते हैं। लाला का अपने ढंग से सोचना सही था कि जो लोग अपनी मर्जी का लिखते, बोलते या छापते हैं उन्हें दूसरों की जेब में हाथ डालने का कौन सा अधिकार है?

"बात का धनी" ने जब उसके अबला सदन के बारे में लिखा तो लाला का चंदा देना वाजिब था। मगर फर्जी बिल कांड भी छापो और उसी पार्टी के दो-दो विज्ञापन भी, इसमें कौन सी तुक है? जिसकी खाते हो, उसकी बजाओ भी। यों लाला जैसे सात पीढ़ी के सेठों को क्या फरक पड़ता है? पहले क्या राजा के हाथी मारने की शिकायत दरबार में नहीं हुई? अब फिर वैसी ही बात दोहराई जा रही है, और क्या! जब तक उनके पास राजा के महल्ले तक चाँदी के हाथियों की कतार खड़ी कर सकने की ताकत है, तब तक उनका, मुरली मनोहर की दया से, कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

चलो, एक खेल यह भी सही, तुम मुझे पत्थर मारो, और मैं तुम्हारी तरफ सोने-चाँदी के ढेले फेंकूँ। मुनीम जी को लाला ने भेद की बात कहकर कर समझायी कि जो कीचड़ में पत्थर फेंकते हैं, वे छींटे खाने के लिये भी तैयार रहें। वह दामाद होगा अपने ससुर का। लाला का तो वह ठेकेदार होगा, हुकुम के मुताबिक काम करने वाला है न ?

प्रेम ने अपने पुराने घर लौटने से पहले दो रातें और दो दिन जयदेव के साथ ही बिताये। पांचाली इस सम्पूर्ण प्रसंग में उसकी अतरंग सखी रही थी और प्रेम अपने समर्पण की कथा भी उसे सुना चुकी थी। दोनों ने ही इसे सुहागरात मान लिया था। इस रात को प्रेम जितना चाहे उतनी बड़ी करे और मधु चन्द्र से आलोकित होती रहे। यही नहीं, पांचाली ने अर्जुन को, और अर्जुन और जयदेव ने अपनी-अपनी तरह सब कुछ पीयूष को भी बताया। अब तो बात फैल गई, क्या करेगा कोई !

जयदेव यह अच्छी तरह जानता था कि यह कहानी जो शुरू हुई है किसी भी दिन कैसे भी ढंग से खत्म हो सकती है। वह प्रेम के साथ इस विषय पर परामर्श करना चाहता, तो परामर्श जम नहीं पाया। और बातें जमने लगतीं। प्रेम जयदेव के वक्ष पर सिर टिकाये आँख मूँदकर जो वह कहता सुनती, बात को सोचने-समझने की कोशिश में दोनों की देहें कुछ और कसमसातीं और बात पूरी हो या समझ में आ सके इससे पूर्व दोनों की देहें बंध जातीं।

प्रश्न तो था, किन्तु प्रश्न ही प्रश्न, जिसका कोई उत्तर न हो ! वे आपस में परामर्श करते तो क्या करते ? उनकी समस्या का क्या समाधान था ? दोनों के चारों ओर हमदर्द लोग थे, जिन्होंने इस झूले को इतना ऊँचा बढ़ जाने दिया था। इस झूले की रस्सी भी कमजोर थी और जिस डाल पर झूला पड़ा था, वह भी कोई मजबूत डाल न थी।

"प्रेम", जयदेव ने कहा।

"हूँ !" प्रेम ने उत्तर दिया।

"तुमने भटकी हुई हवा का एक झोंका अपने आँचल में तो बाँध लिया, पर यह कैसा बँधना है ? झोंका एकदम खो गया और तुम्हारा आँचल खाली रहा।"

"मेरे आँचल में तो आसमान के सारे सितारे भर गये हैं, चंद्रमा का सारा अमृत भर गया है, वह खाली नहीं है। हवा का झोंका अपनी जाने।"

"और जब यह सपनों की रात बोतेगी, तब भी क्या तुम्हारी झोली में चाँद-सितारे भरे रहेंगे ?"

"फिर भटकी हुई हवा का एक झोंका आयेगा, और फिर मैं अपना आँचल उसे बाँधने के लिये फैलाऊँगी।"

"क्या वह झोंका समाज के इन वंद खिड़की-दरवाजों से सर पटक कर फिर भटक न जायेगा ?"

ढाई अक्षर की पंडित प्रेम ने कहा, "उस दिन सुना रहे थे न, अब हम अमर भये न मरेंगे। जिन दिनों मन के गहरे अँधेरे में उजाले की कोई छोटी सी कोर भी नहीं थी, तब न मरी, तो अब कैसे मरूँगी ? अब हम अमर भये, न मरेंगे।"

जयदेव एक बार फिर चमत्कृत हुआ। एक बार पहले भी वह अर्जुन और पांचाली के कायाकल्प से चकित हुआ था। इन लोगों की सभ्यता सहज थी। असभ्यता को भोगकर, समझकर उन्होंने सभ्य जीवन को अपनाया था। संत पागलानन्द के बारे में भी उसने यही सुना था कि उन्होंने अपने जीवन में स्कूल का दरवाजा विद्यार्थी के रूप में कभी नहीं देखा। किन्तु डा० मेहता जैसे विद्वान उन पर श्रद्धा रखते थे, और स्वयं उसे उन्होंने एक ही बात में चित्त कर दिया था। स्कूल-कालेज और ये किताबें वे पाठ नहीं पढ़ा सकतीं जो जिन्दगी के मोड़ अपने-आप सिखा देते हैं। कुछ लोगों को बाहर से जगाया जाता है, कुछ लोग भीतर से अपने-आप जग जाते हैं। ऐसा ही डा० मेहता का भी मानना है।

जयदेव और प्रेम क्यों सीधी बात मुँह पर न लाकर यह प्रतीकों की बोली बोल रहे थे, इस प्रश्न का उत्तर शायद मानस शास्त्रियों के पास भी न हो। सीधी बात दुखती थी। जयदेव कहना चाहता था, कल की सोचो। प्रेम का कहना था, तृप्ति को उसकी लम्बाई से नहीं, गहराई से नापो। यह जो होता है, होने दो। आज के सुख को हम कल के दु:ख के विरुद्ध कवच बनाकर पहनेंगे।

"सुनते हो?" इस बार प्रेम बोली।

"हूँ।"

"ऐसा मत सोचना कि मैं कुछ अशुभ बोलती हूँ, तुम्हीं ने एक बार बताया था, जो मन में उठे वही उस समय सच है, उसे कह देना चाहिये। सोचती हूँ, इस समय मर जाने से बड़ा और सौभाग्य क्या होगा?'

"हम दोनों का सौभाग्य?"

प्रेम ने आँखे खोलीं, भरपूर दृष्टि से जयदेव को देखकर सस्मित वदन कहा, "हाँ! क्या विचार है?"

"तब तो ठीक है, वरना अकेले जाने की सोचती, तो मुझे गुस्सा आता।"

"हाय राम! गुस्सा आता, मेरे मर जाने पर?"

इस बार भरपूर दृष्टि से हँसकर हाँ कहने की बारी जयदेव की थी, "तुम्हारे अकेले मरने पर!"

पीयूष ने जब पहली बार जयदेव के मुख से प्रेम के "अलौकिक, वासना-हीन पुनीत समर्पण" की कथा सुनी, तभी मैत्री भरे उमंग-उत्साह के पहले दौर के बाद उसे उस गूँगे असंतोष ने घेरा, जिसके लिए कवि घायल ने अपने-आपको दाद दी थी। उन दोनों ने इस समस्या पर खुलकर सभी पहलुओं से विचार किया था, प्रेम, पांचाली और अर्जुन सहित पूरी पंचायत इस पर

विचार कर चुकी थी। पांचाली के इस सुझाव को छोड़कर और कोई कारगर उपाय किसी को न सूझा कि प्रेम थत्ता के आ जाने के बाद भी, जैसे है, वैसे रहे। जो होगा, देखा जायेगा।

वह समय निकाल कर अभी जयदेव से मिलने आया था। जानता था, प्रेम वहीं है। वह उसे प्रेम के साथ ही देखना चाहता था।

जयदेव के कमरे का परदा हटाते ही उसने जैसे किसी दूसरी दुनिया में कदम रखा। उसे लगा, उन दोनों के शरीर से कोई कांति फूट रही है जिसने चारों ओर उजाला सा कर रखा है। वह चिरपरिचित कमरा किसी जादुई स्पर्श से भरा-पूरा घर वन गया है। दोनों के प्रेम की पुलक से पूरा कमरा भरा-भरा, महका-महका सा है, जैसे किसी मंदिर में सुवासित अगर-धूम की गंध भरी हो। वार-बार देखी हुई प्रेम आज उसे ऐसी लगी जैसी मयंक घोषाल के चित्र की वीणावादिनी सरस्वती। क्या मयंक घोषाल ने ऐसी ही किसी प्रेम मग्ना प्रफुल्ल वदना देव-कन्या को धरती पर विचरते कहीं देखा था ?

पीयूष को देखकर जयदेव ने जोर से हँसकर उसका अभिवादन किया और प्रेम ने जव थोड़ा सा लजाकर उससे 'आइये' कहा, तो पीयूष वे सब बातें भूल गया, जो वह जयदेव से करना चाहता था। उसे लगा, जैसे सहसा वह बहुत हल्का हो गया है, बहुत साफ, एकदम संत कबीर जैसा।

"गृहस्थी मुबारक हो," पीयूष ने कहा।

"तुलसी गाई बजाइ कैं दियो काठ में पाँय 'वाली गृहस्थी से मतलब है ?' 'गृह कारज नाना जंजाला 'वाली गृहस्थी से ?"

"अरे नहीं, यह नई किस्म की तुम्हारी गृहस्थी जो एक उभरती चुनौती जैसी है।"

"तो मुबारकवाद के लिए शुक्रिया भी कुबूल फरमायें," जयदेव ने हँसकर कहा।

"और यह विस्कुट भी," प्रेम ने विस्कुट की प्लेट आगे बढ़ाते हुए कहा।

"आज भी नमकीन बिस्कुट ? यह तो ज्यादती है, सरासर !" पीयूष ने आपत्ति की।

"जी नहीं, "पीयूष का लाया मिठाई का पैकेट खोलते हुए, जयदेव बोला, "रसगुल्लों का भोग लगाइये।"

जिस आसन्न भविष्य की चिन्ता में पीयूष दो दिन से परेशान था, उसकी कोई छाया इन दोनों के मुख पर न थी। शायद पांचाली का सुझाव ही ठीक था–जैसा चल रहा है, चलने दो। जो बातें मैं कहना चाहता था, भूल गई, यह भी अच्छा हुआ। अभी जो चाँदनी स्वभावतः खिल रही है, उसे आने वाली धूप के भय से म्लान क्यों किया जाये ?

"ठीक है," कहकर पीयूष चौंका, वह मन में चल रही विचारधारा पर अनायास अनजाने में यह शाब्दिक मोहर लगा बैठा था। किन्तु इस आत्म-स्वीकृति से उसके मन में चल रहे अंतर्द्वन्द्व से उसे छुट्टी मिली और वह सहज होकर बोला, "दुनिया की ऊँची-ऊँची दीवारों में कैद एकाध आत्मा इस बार भी मुक्त हुई है।"

"ये दीवारें मायावी हैं। हम एक बार इन्हें तोड़ेंगे और ये फिर अपने आप उग आवेंगी।"

"नहीं, इस तिलिस्म को तोड़ने की चाबी जरूर मिलेगी।"

और जैसे उसे अचानक कोई जरूरी काम याद आ गया हो, पीयूष हड़बड़ाहट में उठा और बिना कुछ कहे-सुने, घर से निकल गया।

पीयूष को सहसा यह बात सूझी कि वह विद्रोही को माध्यम बनाकर लाला से सीधी बात करे। विद्रोही खुद लाला को धमकी दें कि उनके अबला सदन की पोल पांची. पेमा और चंदो की कहानी सहित "बात का धनी" में छपे और

प्रेम इनके षड्यन्त्र के विरुद्ध कानूनी चारा जोई करे, या वे माफी मांग कर राजीनामा करना चाहेंगे ? विद्रोही की यह धमकी कारगर होगी।

यही सोचकर वह सीधा विद्रोही से मिलने गया। विद्रोही के यहाँ पहुँच कर उसने श्यामा भाभी को भी बातचीत में शामिल करने पर जोर दिया।

'भाभी,'' उनके आते ही पीयूष ने बात शुरू की, ''आप जयदेव की बहू देखेंगी ?''

''अरे वाह ! पीयूष, तुम्हारे मुँह में घी-शक्कर ! जरूर दिखाओ।'' श्यामा भाभी बोलीं। विद्रोही ने भी समर्थन प्रकट किया।

''तो आप उसे फौरन बहू समेत यहाँ बुला लीजिये। अभी दोनों पंछी घोसले में हैं।''

पीयूष की इस बात पर विद्रोही जी एकदम उठकर दोनों को 'गिरफ्तार' करने को उद्यत हो गये। इतना बड़ा काम और चोरी से, सबसे छिपाकर ?

25

ऐसे जवानी जमा खर्चों में विद्रोही जी को कभी कोई जोर नहीं आता। उन्होंने अपना पार्ट पूरा-पूरा अदा किया। जब लाला छदामी लाल तीर्थ यात्रा से लौटे, तो विद्रोही ने फोन पर उन्हें धर दबोचा। जब लाला को फोन मिला, तो एक बार तो उन्हें अपनी दूरंदाजी पर गर्व हुआ कि उन्होंने लालू खाँ के दामाद को अपने काम का ठेका देकर अपने पक्ष में किया। किन्तु फोन सुनकर लाला का माथा ठनका। अभी तो तीर्थ यात्रा की थकान का पसीना भी नहीं पोंछ पाये थे कि एक नया धड़ाका ठीक उनके पैरों के नीचे हुआ।

बिल्कुल, पसीना पोंछते हुये लाला ने मंजूर किया। राम भजिये, वे उनसे लड़ेंगे ? हाँ, हाँ ! धन्ना को समझा दिया जावेगा। वे बिल्कुल चिन्ता न करें।

टेलीफोन सुनकर एक बार लाला कुछ हतप्रभ हुए। आँख मूँदकर कुछ हिसाब लगाया, जो उनकी प्रकृति के अनुसार सोचने का पर्यायवाची है। लाला जी ने आँखें खोलीं, तो वे हँस रहे थे।

"मुनीम जी," उन्होंने आवाज दी और मुनीम जी के आते ही बोले, बैठिये !"

"हुक्म ?"

"बात यह है कि सकल पदारथ हैं जग माहीं, करमहीन नर पावत नाहीं। जानते हैं, करमहीन कौन है ?—अरे, अपना घन्ना !" लाला यह कहकर फिर हँसे।

"सो कैसे ?" मुनीम जी ने राहत की साँस ली। घन्ना के करमहीन होने से उनका कुछ बनता-बिगड़ता नहीं।

"चिड़िया खेत चुगकर उड़ गई, मुनीम जी।" लाला को हँसी का एक और दौरा आया। "कहता था, पेमा को मैंने राजी कर लिया है, घर बसा दो, बंस चलाना है।"

"अपने अबला सदन का पेमा, जिसने घन्ना से शादी की थी ? उनमें क्या खटपट हुई ?" मुनीम जी ने रसिकता से पूछा।

"होना क्या था," लाला बोले, "अपनी बेटी की उमर की लड़की से ढलती उम्र में बच्चू को शादी का चस्का लगा। इन लड़कियों का उस अखबार वाले से किसी तरह मेल हो गया। एक लड़की तो आराम से घर बसाकर रह रही है। मगर दूसरी वाली घन्ना के घर नहीं टिकी। पेमा कानून और मुकदमे की धमकी देती है, कहती है उसके साथ बदनीयती भरा धोखा और खिलवाड़ किया गया है। अबला सदन की जिन्दगी और वह दिखावटी विवाह मर्जी के खिलाफ होने की वजह से कानून के खिलाफ है।"

"शिव, शिव ! हमको मामले-मुकदमें या कानून अदालत से क्या ? घन्ना को समझा दें, मालिक। वह बिना घरवाली के संतोष करे।"

घन्ना, जिसे अब तक अपनी घरवाली की कोई खबर नहीं मिल पाई थी, सहसा लाला की डाँट खाकर तिलमिला गया। जिसके लिये चोरी करो, वही

घोर कहे तो और भी बुरा लगता है। खबर भी मिली तो यह कि उसका बना-बनाया घर एक बार फिर उजड़ गया।

धन्ना लाला के व्यसनों का साथी था। लाला के मन में कोई बात उठे, और उसे उठाने की भरपूर कोशिश धन्ना करता, तो धन्ना उसे पूरा करने में तत्परता दिखाता। वही लाला को पहली बार गाना सुनवाने ले गया। लौटती बार लाला बोले, "क्या हुस्न पाया है, एक-एक अदा पर दिल फिदा होता है।" यह मिसरा लाला ने उसी दिन सीखा था, किन्तु रसिकता में सरोबोर उन्हें यह एकदम अपनी भावना लगी और उन्होंने उसे अपना लिया।

फिर धन्ना ने लाला को गाना सुनने से और भी आगे बढ़ाया। वह इस प्रकार युक्ति से लाला के साथ गुलछर्रे उड़ाता और इनाम-इकरार उसे ऊपर से और मिलते। इन्हीं दोनों की बनाई यह अबला सदन की योजना थी, जिसे शुभचिन्तकों ने सप्रयास पुण्य कार्य का जामा पहना दिया था। किन्तु यह बाद की बात है। पहले तो प्यास लगने पर ही कुँआ तलाश करना होता था।

और अब अबला सदन में चन्दो को छोडकर और कुछ भी न था। पूरी स्कीम ही फेल हो गई। लाला को चंदो से तृप्ति नहीं हो पाती और उन्होंने उसे बुलाना भी छोड़ दिया है। यों धन्ना की अवस्था भी अब 60 के आस-पास थी, किन्तु सूना घर उसे काटने को दौड़ता। घर पर अपनी खाट पर पड़ा धन्ना अपनी किस्मत को कोस रहा था, और पास में कहीं रिकार्ड बज रहा था, 'राम दुलारी मैके गई, खटिया हमारी खडी कर गई।"

प्रेम विद्रोही के यहाँ से पांचाली के पास आई थी। उसे यह पता न था कि लाला विद्रोही की डाँट खाकर दुम दबा बैठे थे। मगर उनकी दुम धन्ना को दुगुनी चौगुनी डाँट पिलाकर फिर ऊँची हो गयी थी।

जो चिन्ता जयदेव के सामने सिर उठाने की हिम्मत नहीं कर पाई थी, वह उस पर अब सवार थी। "अब क्या होगा, जीजी?" प्रेम ने पूछा।

"कुछ नहीं होगा। जो होगा, ठीक ही होगा। तू क्या समझती है कि जयदेव भइया ने तेरा हाथ पकड़ते समय कुछ सोचा न होगा ? मैं नहीं समझती कि वे तुझसे कभी मुँह मोड़ें।"

"सो तो मुझे भी भरोसा है। मगर कल वह राक्षस लौट आया है। वह फिर मुझे उसी नरक में खींच ले जायेगा।"

"मुझे कुछ ऐसा लगता है प्रेम, कि अब तू उस राक्षस की कैद से छूट गई है। याद है, उस दिन की बात ? उस दिन भइया अपना अखबार लेकर आये थे और उन्होंने बताया था कि लाला छदामी लाल के सताये तीन ऐसे जीते-जागते उदाहरण मौजूद हैं जिन्हें अत्याचार के विरुद्ध संघर्ष में आखिरी जीत मिली है। तब मैंने पूछा था कि प्रेम को कौन सी जीत मिली है। याद है न ?"

"उसी दिन तो मेरा नया नामकरण हुआ था, और उसी दिन से अपने नये नाम को सार्थक करने में लगी हुई हूँ।"

"हाँ प्रेम ! और उसी दिन तेरी आँखों को देखकर मैंने यह भी पूछा था कि राक्षसों के चंगुल में फंसी एक राजकुमारी को जिस बहादुर राजकुमार ने आजाद कराया है, उसे क्या मिलेगा ?"

"मैंने तो उसी दिन कह दिया था कि छुड़ाया हुआ सारा राज राजकुमारी समेत उसी राजकुमार का है।"

"उस दिन भइया कहाँ थे ? कहते थे एक राक्षस मरा है, और दूसरा राक्षस अपने भाई की मौत का बदला लेने आया है, और राजकुमारी अभी कैद में है। अब जो भइया मान गये हैं, और उन्होंने तेरे जेल का ताला तोड़ा है, तो उन्हीं पर भरोसा रख।"

प्रेम ने कहा, "तुम उन पर भरोसा रखने को कहती हो जीजी। और मैं अभागी उस दिन उन्हीं को भरोसा दिला रही थी। वे कहते थे तुमको हवा का झोंका आँचल में बाँधने पर क्या मिलेगा, वह तो खो गया। और मैं कहती थी, मेरे आँचल में तो चाँद-सितारे बँधे हैं, मेरा आँचल खाली नहीं है।

"तूने बिल्कुल सही कहा है, प्रेम ! जिसे जयदेव भइया जैसे देवता का हृदय मिला हो, उसके लिए सारे ऐश्वर्य फीके हैं।"

"हाँ, जीजी ! उस दिन जब सवेरा हुआ—और वे पूछते थे सपनों की रात का सवेरा होगा तो क्या होगा—तो तुम्हें क्या बताऊँ वह कैसा सवेरा था ! खिड़की पर एक चिड़िया बैठी थी। सामने डाल पर एक फूल खिला था, पास में एक गाय चर रही थी। मेरा मन फूला नहीं समा रहा था, चाहती थी उस चिड़िया को, उस फूल को, गाय को और उस घास के तिनके-तिनके को जाकर बताऊँ कि देखो सवेरा कितना अच्छा है, तुम सब कितने अच्छे हो। बिस्तर पर सोये हुए वे कितने अच्छे हैं। और उस दिन तो सच कहूँ जीजी, उनके शीशे में खुद अपनी ही परछाईं मुझे बहुत अच्छी लगी। उस दिन मैं बहुत खुश थी, बहुत खुश।"

"फिर," पांचाली ने उसे प्रोत्साहित किया।

"वे पूछ रहे थे सपनों की रात का सवेरा कैसा होगा और मैं बता रही थी कि फिर हवा का एक झोंका आयेगा, और फिर उसे बाँधने को मैं अपना आँचल फैलाऊँगी। मुझे तो ऐसा लगा जीजी कि उस दिन अगर मौत आ जाती, तो वह कैसी प्यारी, कैसी अच्छी मौत होती ? उस खुशी के सहारे तो मैं मौत और प्रलय के सातों समन्दर पार कर सकती थी।"

"तो अब क्यों पूछती है कि क्या होगा ? जब तू खुद उनका भरोसा बनी है, तो अपनी न सही उनके भरोसे की तो लाज रख। हूँ ! क्या होगा ?" पांचाली ने यह अन्तिम बात कुछ विलम्बित स्वर में कही।

इतने में उनके कमरे में जैसा भूचाल आ गया। अर्जुन और पीयूष हो हल्ला करते और धमा-चौकड़ी मचाते हुए वहाँ आये और मिठाइयों के साथ हँसी बिखेरते हुए दोनों ने प्रेम और पांचाली को लाला के हथियार डालने की कथा मिर्च-मसाले लगाकर सुनाई।

पीयूष ने घोषणा की कि वह इस उपलक्ष्य में "तृप्ति" में एक लम्बी-चौड़ी दावत दिये बिना नहीं मानेगा।

बस्ती और बेटा

(1)

पिछली 'तृप्ति' में हुई उस लम्बी-चौड़ी दावत के बाद अब दो वर्ष बीत चुके हैं।

इन दो वर्षों से आई राजनीतिक उथल-पुथल से विद्रोही का सिविल लाइन्स का बंगला छूट गया है। उन्होंने हाथ करघा बोर्ड से इस्तीफा देने में देर न कर दूरंदाजी से काम लिया और अब उनका दावा है कि मुख्य मंत्री भी उनकी सलाह मानकर लोकसभा चुनाओं के चमत्कारी परिणामों के बाद यदि तत्काल त्याग पत्र दे देते, तो राज्य में चुनाव उनकी कामचलाऊ सरकार कराती और उसे बर्खास्त न होना पड़ता। इस गिरगिट की तरह रंग बदलती राजनीति में कुछ दिनों उन्होंने चुनावी पचड़ों से बचने और फिर से 'सेवा कार्य' अपनाने का फैसला किया।

उधर लाला का चम्पो बाई मार्केट बना और इन दो वर्षों में पीयूष भी आखिर अपने साले अनवर खाँ के साथ ठेकेदारी के काम में पड़ गया। लाला का चम्पोबाई मार्केट एशिया का सबरे अच्छा स्थर कंडीशन्ड मार्केट तो नहीं बन पाया मगर उसकी सारी दुकानें हाथोंहाथ उठ गईं और उस किराये की आय से चम्पो बाई ट्रस्ट के ट्रस्टी लाला छदामी लाल ने दान-पुण्य के कई नये काम शुरू कर दिये। इसी मार्केट में पीयूष और अनवर का 'फ्रेन्ड्स' के नाम से नया कार्यालय खुला था।

ठेकेदारी के साथ ही पीयूष ने शब्बो (पत्नी, शबनम्) का परदा तोड़ कर उसे घर के बाहर अपनी मित्र मण्डली में निकाला व उसे सभी से परिचित

कराया। शबनम, जो दशवीं पास थी, प्रेम और पांचाली के साथ भी खूब घुली-मिली और उनकी निरक्षरता दूर करने में भी सहायक हुई। अक्षर ज्ञान के इस नये आलोक में इन दोनों ने जयदेव और पीयूष द्वारा छाँटे हुए अच्छे साहित्य को पढ़ा और उससे लाभ उठाया।

इन दो वर्षों में जयदेव और प्रेम में खूब निभी। निभती क्यों नहीं, प्रेम उसके संकेतों को आदेश मानती थी। उसका तो बुद्धि-विवेक सब कुछ जयदेव था। उधर जयदेव ने जीवन में एक नई स्फूर्ति का अनुभव किया और 'बात का धनी' को न केवल अपने पैरों पर खड़ा किया, वल्कि उससे अपना पारिश्रमिक भी निकाला और दो वैतनिक सहयोगी भी रखे।

अर्जुन और पांचाली भी हँसते-खेलते जिन्दगी गुजार रहे थे। अर्जुन ने चम्पो बाई मार्केट में अपनी नई दुकान खोली थी, सिले-सिलाये कपड़े तैयार करने की, सिलाई की फैक्ट्री। सिलाई के लिये अनवर मियाँ ने डबल दुकान लेकर सिलाई मशीनें आदि लगाई थीं और अर्जुन फैक्ट्री का टेक्नीकल डाइरेक्टर था। कुछ पैसा पीयूष ने लगाया था, जो कपड़े आदि खरीदने के काम आता था।

डॉ० मेहता लीलू बेन की मृत्यु के बाद (यह इतनी आकस्मिक थी कि पीयूष या जयदेव को इसका पता तक न चला था) विदेश चले गये थे। कुछ दिनों स्विटजरलैण्ड रहकर फिर अमेरिका गये और वहीं बस गये। थोड़े दिनों जयदेव का उनसे पत्र-व्यवहार रहा, फिर बन्द हो गया। उनका वैराग्य समझ में आने जैसा था, जरूर वह यूरोप-अमेरिका वालों की भी समझ में आया होगा सुना, उनकी वहाँ बड़ी धूम है।

मौत ने शायद लीलू बेन को छीनकर अन्याय किया, तो थोड़ा-बहुत न्याय उसने धन्ना को उठाकर कर दिया।

(2)

कवि घायल पीयूष और जयदेव के कारण अर्जुन से भी परिचित हो गये थे और प्रायः अपनी कवितायें सुनाने और लनतरानियाँ हाँकने के लिये उसके

पास पहुँच जाते थे। उनमें इतना सुधार भी हुआ था कि वे हर हफ्ते एक अनिवार्य और एकाध स्वेच्छा की नागा अपने नैश कार्यक्रम में कर लें। फिर वे दो-तीन की इकट्ठी प्यास बुझाते। जब और पीने की इच्छा होती और जेब में पैसे न होते तो वे यह 'कहकर उठते' झोली ही अपनी तंग है, तेरे यहाँ कमी नहीं।

आज जब से वे घर से निकले और उन्होंने संघर्ष चालू किया, तबसे अब तक यानी शाम 7 बजे तक अब कविता की एक भी पंक्ति उनकी पकड़ में नहीं आ पाई थी। इसका कारण भी उनकी समझ में आ गया। समग्र क्रान्ति और समग्र क्रान्ति के जनक दोनों ही आगे-पीछे मर गये। ऐसी स्थिति में निरीह संवेदनशील कवि क्या करें? ऐसी क्रान्ति के लिये जिन्दगी क्यों खपाई जाये जो खुद भी न टिक पाये? विद्रोही जी कहते हैं, क्रान्ति पीछे, पहले राज्यसत्ता को हथियाना जरूरी है। जब घायल ने उन्हें याद दिलाया कि अभी तो उनकी धोती से कुर्सी की छाप मिटी भी नहीं है, तो कहने लगे, वह सत्ता सुख निर्बाध नहीं था।

कुछ संघर्ष की व्यर्थता और कुछ क्रान्ति की उधेड़-बुन में खोये कवि घायल जब अर्जुन के पास पहुँचे तो बरस पड़े, "इन्हें निर्वाध सत्ता सुख चाहिये। तानाशाही चलाना चाहते हैं।"

अर्जुन ने आसन (कुर्सी), अर्घ्य (पानी का गिलास) और मधूपर्क (चाय) से अतिथि का सत्कार करते हुए कवि को बताया कि उन्होंने संज्ञा बताये बिना ही सर्वनाम का प्रयोग कर दिया है। वे कौन लोग हैं, जो तानाशाही चलाना चाहते हैं और जिन्हें निर्बाध सत्ता-सुख चाहिये?

"जो; यही क्रान्ति से पलायन करने वाले लोग जैसे विद्रोही जी। अरे भाई, तुम्हीं लोग कहते थे – हम मुल्क को दूसरी आजादी देने वाले हैं, उनसे पूछा, आदरणीय, आप तो सर्वशक्तिमान, सर्व सत्ता सम्पन्न थे। आपने कुछ किया क्यों नहीं? तो जानते हो माननीय विद्रोही जी ने क्या कहा? वह सत्ता सुख निर्बाध न था।

"अर्जुन ने कहा, ऐसा! यह तो सरासर तानाशाही है। मगर आप तो कहने से चूकने वाले नहीं, आपने क्या कहा?"

कवि घायल ने बताया कि उनके बोलचाल या व्यवहार की शैली ताना-शाही से मेल नहीं खाती, इसलिये उन्होंने अंधे के आगे रोकर दीदे खोने की हिमाकत नहीं की और चले आये।

"यानी, आपने वाक आउट कर दिया ? विद्रोही जी कटकर रह गये होंगे" अर्जुन ने फिर शह दी।

"अरे नहीं, कवि घायल ने भेद की बात बताई, "ये राजनीति वाले गेंडे की खाल रखते हैं, ये लोग कटने-कटाने के कायल नहीं होते।"

"लेकिन काटने के कायल तो होते होंगे," अर्जुन बोला।

"हाँ अपनी जान में ये काटते तो बहुत हैं, मगर उनसे कटता कुछ नहीं। प्रत्यंचा हिलती नहीं, शब्द के बाण चलाया करते हैं।"

विद्रोही की संगति में अर्जुन ने राजनीति के खेल को बहुत निकट से देख लिया था, सो उसने उत्तर दिया 'जन-जन का मन राखताँ वेश्या रह गई बांझ यह तो जनतंत्र है, यहाँ सबका मन रखना जरूरी है। इसीलिये कोई प्रसन्न नहीं हो पाता।"

"हाँ, "घायल ने सहमति दी, जन-जन का मन रखने से किसी का मन नहीं रह पाता। पहले जब एक राजा को राजी करने की बात होती, तो लोग अच्छे से अच्छी इमारत अच्छे से अच्छी कारीगरी का कमाल पेश कर देते थे।

"अब नहीं हो पाता ?"

"अब इन जैसों से नहीं हो पायेगा। उसके लिये क्रान्तिदर्शी लोग चाहिये। हमारी चिराचरित रूढ़ परम्पराओं को तोड़ने के लिये बड़ी क्रान्ति चाहिये। उस क्रान्ति के लिये शक्ति जुटानी होगी और उस शक्ति के पीछे क्रान्ति का एक सम्पूर्ण दर्शन होगा।"

"एक क्रान्ति तो हमने भी देखी है," अर्जुन ने कहा, "जो अकाल-मृत्यु का शिकार हुई।"

"वह मुरादाबादी क्रान्ति थी।"

अर्जुन कवि घायल की बातों का रस ले रहा था कि किसी काम से वहाँ अनवर मियाँ आये। अनवर को देखते ही कवि घायल ने जोरदार संवर्ष किया और दस रुपये सीधे करते ही वहाँ से वे चल दिये।

कवि घायल स्वभावतः अवैयक्तितक थे, और अर्जुन के लिये क्रान्ति का विषय उसके व्यक्तित्व का की परिधि से बाहर था। लगभग यही बात जयदेव और पीयूष के बीच हुई। किन्तु उनके विचार विमर्श का स्तर कुछ कुछ व्यक्तिगत था। ये लोग विद्रोही के सहयोग से लाला छदामी लाल के साथ हुए संघर्ष की शव-परीक्षा कर रहे थे।

"मैंने पहले भी कहा है कि लाला की जड़ें समाज में बहुत गहरी हैं, उन्हें उखाड़ फेंकना आसान नहीं", पीयूष ने कहा।

"और उनकी शाखायें लचीली हैं, जो हवा के जोर से झुकना जानती हैं, टूटना नहीं," जयदेव ने मुँह बनाकर पीयूष की बात को समर्थन दिया।

"बिल्कुल। वे उगते सूरज को प्रणाम करना जानते हैं। वे हनुमान की तरह उसे गेंद समझकर मुँह में भरने की कोशीश नहीं करते।"

"हाँ बनिया वही है जो सबका बन जाय और सबको बना ले।"

"तुम चाहे बुरा मानो, जयदेव। सही बात यही हैं। वे क्यों रोज पूजा-पाठ करते हैं, मंदिर में जाते हैं, क्यों इतना दानधर्म करते हैं, क्यों बिना सोचे-समझे, मांगते ही, उन्होंने ग्यारह रुपये कवि घायल को या इक्यावन रुपये विद्रोही को दिये? यह सब इसीलिये कि किसी और से उन पर सीधा हमला न हो और हर क्षेत्र में उनक लिये मुरौवत हो।"

जयदेव ने चिढ़कर कहा, "यही नहीं, पिछले मुख्य मंत्री की कुर्सी बचाने के लिए लाला छदामी लाल ने और उनके जैसे दूसरे सेठ साहूकारों ने लाखों रुपयों की थैली उन्हें भेंट की थी। यदि विद्रोही जैसे दो चार कार्यकर्ता गाँव-गाँव दौड़-कर न जाते, तो विद्रोही जी को हाथ करघा बोर्ड की अध्यक्षता न मिल पाती।"

पीयूष ने कहा "यह सब बनने और बनाने की बनिया विधि है। फर्जी बिलकांड में आँख मूँदकर पिछली सरकार ने लाला को बनाया और लाला ने शक्ति परीक्षण के लिये पुराने मुख्यमंत्री को थैली भेंटकर उन्हें बनाने की कोशिश की। इसी को तो लाला कभी गाड़ी नाव पर और कभी नाव गाड़ी पर होना बताते हैं यह उनका रटा हुआ मुहावरा है।"

जयदेव को पीयूष का यह ठंडा स्वर अच्छा नहीं लग रहा था। "आखिर लाला कोई बहुत बड़ी तोप हैं ?"

"हाँ", पीयूष ने यह भी सहजता से मान लिया।

"तो हम लोगों को चाहिये, हम हाथ पर हाथ धरे बैठे रहें और लाला जैसे लोगों को दोनों हाथों से चाँदी बटोरने दें। यही कहना चाहते हो ? मैं लाला के सामने नाक रगड़ूँ ?"

"क्यों तुम क्यों नाक रगड़ने जाओगे ? तुम्हारे पास अखबार है। विद्रोही भी नाक रगड़ने नहीं जायेंगे, उनके पास उनका राजनीतिक वर्चस्व है। मगर तुम लोग यह अपेक्षा भी मत करो कि तुम लाला से नाक रगड़वा लोगे। तुम लाला से एक-दो बाजी जीते जरूर हो, और दोनों बार उन्होंने धन्ना को बलि का मोहरा बनाया।"

"दोनों बार ?"

"याद करो, जब तुम पहली बार लाला से पांचाली और अर्जुन के विषय में बात करने गये थे, तो लाला ने अपनी भँड़ास किस पर निकाली। धन्ना पर ही न ?"

"हाँ प्रेम बता रही थी।"

"वही कहता हूँ। एक तालाब के किनारे एक मेंढक निकल कर आया। थोड़ी देर बाद दूसरा मेंढक तालाब से निकला और पहले मेंढक की पीठ पर चढ़ बैठा। फिर एक और मेंढक उस दूसरे की पीठ पर जा चढ़ा, तो बीच वाला चिल्लाया, टर्रक-टम। ऊपर वाले ने सुर मिलाया, मजे में हम और बेचारा नीचे वाला कह रहा था, मरे तो हम। करीब यही हाल अपने समाज

का है। यहाँ ऊपर वाला मजे में है, नीचे वाला मर रहा है, और हम-तुम जो बीच के लोग हैं, बेकार में टर्रक-टम चिल्लाते हैं।"

हाँ, जयदेव ने सोचा, हम लोग बेकार ही चिल्ल-पों मचाते हैं। विद्रोही जी समझते थे वे अपने गुट की सरकार बनने पर न जाने क्या कर लेंगे, मैंने सोचा था एक अखबार निकाल कर दुनिया को बदल दूँगा। इस दुनिया में ईसा और बुद्ध हुए, अशोक और सिकन्दर हुए, गांधी, मार्क्स, हिटलर आदि हुए। किन्तु दुनिया वैसी की वैसी रही।

"क्या सोचने लगे ?" पीयूष ने पूछा।

"कुछ नहीं। यही सोच रहा हूँ कि आदमी इतना खून-पसीना आखिर क्यों बहाता है ? वह क्या करेगा ? कर क्या लेगा ?"

"यों करने को आदमी ने बहुत कुछ किया है। सृष्टि के कार्य में ही उसने ईश्वर और प्रकृति के साथ स्पर्धा की है। आज तो यह भेद करना भी कठिन है कि ईश्वर की सृष्टि कहाँ समाप्त होती है और मनुष्य की सृष्टि कहाँ से प्रारम्भ होती है। किन्तु आदमो को आदमी की दृष्टि से ही हमें देखना होगा, व्यक्ति की दृष्टि से नहीं।"

"यह तो ठीक है : मगर यह भी तो बताओ कि लाला कि प्रतिष्ठा आदमी के रूप में है या व्यक्ति के रूप में," जयदेव ने फिर कहा।

"और तुम भी यह बताओ कि यह सवाल तुमने किस रूप में किया है, व्यक्ति के रूप में या आदमी के रूप में ?"

"मैं तो पूँजीवाद की समूची परम्परा और इस संस्था को ही समाज के लिए हितकर नहीं मानता। व्यक्तिशः रूप में लाला अत्यन्त भीरु हैं, किन्तु उनके पास जो पूँजी की अमोघ शक्ति है, वही सर्वत्र उनकी विजय पताका फहरा देती है। उनका समस्त यश और पराक्रम इसी अमोघ शक्ति के सुफल हैं।"

इस पर पीयूष उत्तर दिया, "मैं फिर तुम्हें याद दिलाऊँगा कि तुमने कम से कम दो-तीन बार लाला को नीचा दिखाया है। यही नहीं, तुमने लाला को

राज्य का कोपभाजन भी एकाधिक बार बनाया है। हमारी ये सफलतायें ओछी नहीं मानी जानी चाहिये। कुछ तो बात थी कि वे प्रेम के और तुम्हारे मामले में चीं तक नहीं कर पाये।"

3

"बम बम भोले ! माई तेरा सुहाग बना रहे, साधु को भिक्षा मिल जायँ" भिखारी ने जयदेव के दरवाजे पर हाँक लगाई।

जयदेव उसे भीख देने के पक्ष में न था, किन्तु प्रेम का कहना था, उसने मेरे सुहाग की अशीष दी है, भीख उसे मिलनी चाहिये। प्रेम हाथ में आटा लेकर भिक्षा देने और जयदेव उस साधु से चुहल करने के लिये साथ ही दरवाजे पर निकले।

साधु ने फिर आवाज लगाई, "धरम-करम बना रहे।"

"लो बाबा," प्रेम ने उसे आटा दिया।

"जीती रहो बेटी, जुगल जोड़ी बनी रहे।"

"बाबा, हट्टे-कट्टे आदमी हो। कोई काम क्यों नहीं करते ?"

"हम नाम स्मरण के अलावा और कोई काम नहीं करते, बच्चा," साधु ने कहा।

"नाम-स्मरण या भीख माँगना ? दुनिया छोड़ दी है, पर छोड़ी नहीं जाती ? नाम-स्मरण में मन नहीं लगता, तो बस्ती की तरफ भागते हैं, यही न ?" जयदेव ने हँसकर कहा।

"ऐसा न बोल, बच्चा। यह बस्ती तो माँ है। यह बस्ती ही तो साधु को पालती है।"

"और सेठ को भी ?"

"सबको पालती है, बच्चा। साधु और चोर सबको ! भगवान तुम्हारा भला

करे। सीताराम, सीताराम !" कहकर साधु आगे बढ़ गया।

जयदेव और भी बहस करने को तैयार था, किन्तु साधु की यह बात सुनकर वह चुप हो गया। बस्ती सबकी माँ है, वह साधु, सेठ और चोर सबको पालती है।

साधु शायद ठीक कहता है। यह बस्ती प्रो० रामचरण विद्रोही और जयदेव को भी पालती है। प्रकारान्तर से विद्रोही और स्वयं वह वही कर रहे हैं, जो यह साधु कर रहा है। वह सीताराम या बम भोले बोलता है, विद्रोही जी सेवा की बात करते हैं, और उसका अखबार भी कुछ न कुछ कहकर एक चुटकी चून या चंदा एवज में चाहता है।

बस्ती तो माँ है, साधु ने कहा था। उसने भी अर्जुन और पांचाली के विवाह पर कहा था कि बस्ती को अपने दो खोये हुए बेटे-बेटी मिले हैं। खुद को भी वह बस्ती का बेटा कह चुका है। किन्तु बचपन में इन लोगों को यह बस्ती माँ क्यों नहीं लगी और उसके बेटी-बेटा खो क्यों गये ? यह बहुत सही है कि दुर्भाग्य इन्हें हरा नहीं पाया ... किन्तु सौभाग्य ने पीयूष को हरा दिया है। लगता है, पीयूष को अपना सुख-भोग सहन नहीं हो पाता, उसका न्याय-बोध और स्वयं को और अपने पैसे वाले सम्बन्धियों को इतने वैभव और विलास का अधिकारी नहीं मान पाता।

इसलिये पीयूष, को अखबार के लिए, घायल के लिये या और किसी सामाजिक,सांस्कृतिक आयोजन के लिये अपना धन बाँटने में संकोच नहीं होता। लाला भी दान करते हैं, चंदा देते हैं, घूस देते हैं। किन्तु दोनों के देने में अन्तर है। पीयूष यह समझ कर ऐसे कामों के लिए "हुकुम कीजिये" कहता है कि वह ठेकेदारी की घूस वगैरह से तो कहीं अच्छा देने का काम है। लाला और लालू खाँ जैसों की नजर दूसरी थी।

उस साधु की तरह हमारी पूरी राजनीति भी तो बस्ती के सहारे ही पालती है। इसी बस्ती में चोर हैं। उनके भी माँ बाप, भाई-बहिन हैं, चाचा-ताऊ, साले-ससुर वगैरह हैं जिनमें से कोई थानेदार है, कोई मजिस्ट्रेट है,

कोई सरपंच या मिनिस्टर है। नहीं है, तो हो सकता है। उसके मित्र इनमें से किसी बड़े ओहदे पर हो सकते हैं। फिर चोर को क्यों पनाह न मिलेगी — सैंया भये कोतवाल अब डर काहे का ? यदि चोर-डाकू और सेठ पल सकते हैं, तो नाम-स्मरण करने वाले एक साधु को भी पलने दो, जो बस्ती को माँ कहता है, जयदेव ने सोचा।

मुरली मनोहर के मंदिर में अब तो प्रमुख मूर्ति दूसरी है, जो लाला ने लगवाई थी, किन्तु यह मंदिर बहुत पुराना है, लगभग छह सौ वर्ष पुराना और पुरानी मूर्ति भी अत्यन्त भव्य थी। उस मूर्ति को हटाकर एक ओर कर दिया गया था, क्योंकि उसकी पालिश में दरारें आने से मूर्ति कुछ विद्रूप हो गयी थी। इस मंदिर में पुराने समय से चला आ रहा, पूजार्चन में काम आने वाले चाँदी का सामान भी रखा रहता था।

एक दिन जब सुबह-सुबह मंदिर के पट खुले, तो पुजारी को मन्दिर कुछ खाली-खाली लगा। थोड़ी ही देर में पुजारी जी बदहवाश बाहर आये और चिल्ल-पुकार करने लगे। मंदिर में चोरी हो गयी थी। चाँदी और पीतल का पुराना पूजा आदि का सामान और पुरानी मुरली मनोहर की मूर्ति अपने स्थान पर नहीं थीं।

भीड़ लगी, लाला को खबर हुई, पुलिस में रिपोट हुई और उस दिन लाला जी द्वारा स्थापित नये मुरली मनोहर न स्नान कर पाये और न ही भोग लगा पाये, क्योंकि तफतीश के लिए दिनभर मंदिर पुलिस के कब्जे में रहा। दूसरे दिन मुरली मनोहर के मंदिर में घंटे बजे, आरती हुई, लेकिन उदासीनता बनी रही। मंदिर के उद्धार के लिए उसी दिन धर्मपरायण लोगों ने लाला छदामी लाल को अध्यक्ष बनाकर एक समिति बनाई और एक हफ्ते के भीतर-भीतर मंदिर में बहुत सा नया सामान आ गया। धीरे-धीरे मंदिर में लोग आने लगे। उद्धार समिति के पास कोष में अभी थोड़ी राशि पड़ी थी, फिर लाला की उदारता भी ऐसे मामलों में निस्सीम मानी जाती थी। इसलिए उचित तिथियाँ देखकर मंदिर में एक सप्ताह भर तक तरह-तरह के धार्मिक आयोजन हुए। फिल्मी

धुनों पर आधारित कीर्तन और धर्म निरपेक्ष नृत्य भंगिमाओं को धार्मिक जनता ने खूब सराहा। मंदिर में फिर पहले जैसी चहल-पहल होने लगी।

पुलिस ने एक दिन में पुजारी से जितना पूछना था, उतना पूछकर उसे मुक्त कर दिया था और मंदिर दूसरे दिन से फिर खुल गया था। मूर्ति चोरी की ऐसी कई घटननाये हाल में और भी हुई थीं। इसलिए इस चोरी को भी उन्हीं घटनाओं की एक कड़ी माना गया। पुजारी ने बताया कि उसकी बिरादरी की दो-तीन बरातें आई हुई थीं और वह पिछले तीन-चार दिनों से रात में देर हो जानेके कारण मंदिर नहीं लौट पाता था। उसका आना सुबह ही हो पाता था। पुलिस ने पुजारी की गैर जानकारी में पता लगाया, पुजारी के बयानों की पुष्टि हुई और उसे इस चोरी में किसी प्रकार लिप्त नहीं पाया गया।

शरफू ने पाकेटमारी का काम छोड़ दिया था। इस धंधे में इन दिनों बरकता नहीं रही। लोगों के जेबों में पर्स तो मोटे होते थे, मगर उनमें नकदी कम मिलती और कागजात-पत्र ज्यादा मिलते। कई बार पर्स के भ्रम में डायरी हाथ लग जाती। ज्यादा पैसा लोग ब्रीफ के केसों में लेकर चलते थे। इसलिए जब उसकी मुलाकात 'बास' से हुई, तो उसने 'बास' की बात मानकर धंधा बदल लिया। अब उसका काम प्राचीन मूर्तियों और पुरानी दुर्लभ वस्तुओं को उड़ाकर 'बास' तक पहुँचाना था, और उसका काम खलास, वह अपना हिस्सा तत्काल ले लेता, आगे की बात 'बास' जानें।

शरफू के चेले चांटी शहर में घूम-घूमकर ऐसी चीजों की टोह लेते, और शरफू 'बास' को 'माल' दिखाता। 'बास' की दृष्टि पारखी थी और वह देखते ही यह बता देते कि चीज काम की है, या नहीं। यदि माल चोखा होता तो शरफू अपना कमाल दिखाता।

शरफू 'बास' का अता-पता नहीं जानता था। इसकी जरूरत भी न थी। उसे पैसा मिलते ही वह हाथ झाड़ कर निश्चिन्त हो जाता। 'बास' कहीं बाहर से आता और मुश्किल से रात को ठहरता। आमतौर से घंटे दो घंटे

में काम निबटा कर अपनी कार से चल देता था। रात को रुकने पर उसे किसी होटल आदि की शरण लेनी होती थी, जो वह कम पसंद करता। शरफू को बराबर ड्यूटी पर रहना होता था, न मालूम 'बास' कब आ धमके? इसके लिए उसे नियमित वेतन मिलता था और एक ठिकाना बनाकर रहना होता था।

'बास' ने जब मुरली मनोहर की पुरानी मूर्ति के लिए हरी झंडी दी, तो शरफू उसी दिन से ताक में लग गया। जल्द उसे पता लगा कि इन दिनों मंदिर सूना रहता है। वह खुद पुजारी के पीछे जाकर उसे बरातियों के साथ छोड़ कर आया, आस-पास आहट लेने के लिए साथी खड़े किये और मूर्ति आदि ढोने के लिए कार सहित 'बास' को तैनात करके माल बटोरने में जुट गया। जब तक पुलिस को इस चोरी की रिपोर्ट मिले तब तक तो 'बास' माल सहित अपने रहस्य लोक में लीन हो गया था।

एक ओर मंदिर की खोई हुई प्रतिष्ठा को पुनः प्राप्त करने के लिए कथा, कीर्तन, रासलीला आदि के ललित आयोजनों की धूम थी, दूसरी ओर नगर में कुछ लोगों ने पुरानी मुरली मनोहर की वापसी के लिए आंदोलन छेड़ रखा था, जिसमें धीरे-धीरे उपद्रवी और असरवादी राजनीतिक तत्व भी शामिल हो गये। मूर्ति की वापसी के लिए जो आंदोलन एक चिनगारी के रूप में शुरू हुआ था, उसने एक विशाल ज्वाला का रूप धारण कर लिया। दो साधु कहीं से पकड़ कर लाये गये, जो 71 दिनों तक निराहारी रहने का दावा करते थे। दोनों साधु पुराने विग्रह की वापसी तक आमरण अनशन पर बैठ गये। इन साधुओं की इस 'धार्मिक' आन्दोलन में इसलिए रुचि जागृत हुई थी कि वे एक भंडारा करना चाहते थे। यदि उनकी भूख-हड़ताल से आन्दोलन सफल हो गया तो भक्त जनता उन्हें मन माफिक भंडारा करने की शक्ति जुटा देगी।

साधुओं का साथ देने के लिए कुछ टोलियाँ निरंतर 24 घंटे के क्रमिक अनशन पर रहीं और अनशन स्थल पर हर समय मेला सा लगा रहा। आंदोलन ने तेजी पकड़ी और अखबारों में उसकी सुर्खियाँ छपने लगीं। आंदोलन के नेता जिस अतिरंजना पूर्ण रौद्र शैली में पुलिस पर निष्क्रियता और आयोजकता

का आरोप लगाये, उसे भी समाचारों में उदधृत किया गया। इस धुंआधार आलोचना से पुलिस वालों की नींद हराम हो गयी। संगठन में हलचल हुई, वायरलेस संदेश थाने-थाने में भेज दिये गये, तफतीश के लिए आदमी दौड़े और पुलिस ने निष्क्रियता छोड़कर अपनी योग्यता सिद्ध करने का अभियान शुरू किया।

संयोग से पुलिस को सुराग हाथ लग गया। निवाई कस्बे में एक आदमी शराब के नशे में एक होटल पर दो आदमियोंसे लड़ बैठा। शोरगुल बढ़ता देखकर किसी ने पुलिस वालों को बुला लिया। पुलिस की वर्दी देखते ही शराबी लड़ाई छोड़कर भाग खड़ा हुआ। उसे भागते देखकर सिपाही ने सीटी बजाकर और पुलिस वाले बुला लिये और बुल्ले पकड़ा गया। जब वह पकड़ा गया तो उसके पास एक तेज धार वाला रामपुरी चाकू और एक पिस्तौल बरामद हुए। अब तो यह लाजमी था कि पुलिस उसे थाने की तरफ घसीटे।

शायद बुल्ले का नशा पूरी तरह उतरा न था। उसने अपने प्रतिवाद में कहा कि इस थाना हल्के में उसने कोई वारदात नहीं की है। इसके बाद तो पुलिस द्वारा उससे यह उगलवा लेना बायें हाथ का खेल था कि उसने कौन सी वारदात किस थाने में की है। जिस बोतल ने झगड़ा कराया था, उसी ने पुलिस वालों से मेल कराया और बुल्ले ने अपना और शरफू उस्ताद का सारा भंडा फोड़ दिया।

आंदोलन को देखते हुए पुलिस ने जल्द ही अदालती कारवाई की· शरफू को मोहरा बनाकर पुलिस 'बास' तक पहुँची तो, किन्तु उसके खिलाफ तगड़ा मामला नहीं बना। उसे जुर्माना अदा करने पर छोड़ दिया गया, क्योंकि उसने शरफू पर दया करके चुराई हुई मूर्ति उससे लेकर अन्यत्र रख दी थी। वह चाहता था कि शरफू मूर्ति मंदिर में वापस रख दे। शरफू और बुल्ले को चोरी के इल्जाम में जेल की सजा हुई। तथापि, 'बास' ने उन्हें आश्वस्त किया था कि वे जल्द ही छूट जायेंगे।

सारा काम युद्धस्तर पर होने के बावजूद मुरली मनोहर की मूर्ति मंदिर में पहुँचे तब तक 26 दिन गुजर गये थे। इस दौरान इस लम्बे आन्दोलन में कोई शिथिलता नहीं आई। कहते हैं, वे साधु वास्तव में चमत्कारी थे, इस लम्बे अरसे में किसी ने उन्हें कुछ खाते-पीते नहीं देखा, जबकि उनके पास हर समय भीड़ रहती थी। बुल्ले शरफू का जेल जाना और मुरली मनोहर का अपने पुराने मंदिर में लौटना एक ही दिन हुआ।

4

घन्ना की मौत पर लाला ने मन ही मन कहा, अच्छा हुआ।

उसी की वजह से वे कुसंगत में पड़े थे और उसी ने बदनामी का घर अबला सदन उसके सर पर लाद दिया था। एक बार तो उसने आश्रम में दस-बारह लड़कियाँ इकट्ठी करके उन्हें और उनके सात पीढ़ी के सुयश को मुसीबत में फँसा दिया था। उन्हें एक के बाद एक इतनी शादियाँ करवानी पड़ीं कि मन-चले कुँवारों के लिए आश्रम की तफरीह की जगह बन गई थी। लोग दुलहिनों का मोलभाव करने आते। बड़ी कोशिशों और पानी की तरह पैसा बहाने के बाद उसे अबला सदन का रूप दिया जा सका।

खैर, लाला ने नैशविलास के पिछले तीन अनुभवों से और अपनी अंग गलितं पलितं मुण्डं आयु से सबक लिया। पांची और पेमा ने विरोध किया, चन्दो ने कुछ नहीं किया। पगली चन्दो ने फिर भी व काम कर दिखाया जो पांची और पेमा से नहीं हो पाया। लाला जी ने न केवल अपना नैश विलाश ही त्यागा, उन्होंने पूरा आश्रम भी सरकार को सौंप दिया। अब अबला सदन से उनका केवल एक ही सम्बन्ध है कि वे मकान मालिक की हैसियत से भवन का किराया लेते हैं और तब तक लेते रहेंगे, जब तक सरकार इस महिला सदन को (सरकार ने अबला के स्थान पर महिला शब्द फिट कर दिया था) अपने स्वनिर्मित भवन में न ले जाये।

लाला ने भगवान को फिर धन्यवाद दिया, अच्छा हुआ। धन्ना की मौत ने उनके मन में वैराग्य और विवेक जागृत कर दिया। उनका वार्धक्य भी न चाहते हुए अपने-आप जागृत हो गया था। फिर भी वार्धक्य, वैराग्य या विवेक किसी की मात्रा इतनी अधिक न थी कि लाला संन्यास ही ले लें। तीर्थयात्रा के बाद उनकी भगवत,भक्ति और व्यापार-बुद्धि दोनों ही तीव्र हुई थीं। अब तो वे कभी-कभी ललाइन से हँस-बोल लेते थे। उन्हें ऐसा लगता था कि धन्धा ने दुनिया छोड़ी, तो उनकी कई बुरी आदतें अपने-आप छूट गई। अब वे किराया लेने के अलावा आश्रम का भूलकर भी नाम नहीं लेते। अच्छा ही हुआ, चंदो उनकी थुलथुल कामुकता का अपने पागलपन की उदासीनता द्वारा जैसे जमकर मजाक उड़ाती थी।

लाला जवानी के दिनों में गाना सुनने गये। यह उतनी बुरी बात नहीं है। तब सिनेमा नहीं था और अक्सर लोग थोड़ी देर सुगल के लिए गाना सुनने जाते थे। यह भी सही है कि गाने वाली बाई जी की एक-एक अदा पर दिल फिदा होता था। मगर धन्ना ने उन्हें शराब और मैथुन के जिन दुर्व्यसनों में प्रवृत्त किया, अब वे उन्हें शोभा नहीं देते। भगवान की कृपा से अब वे सत्तर पार कर चुके हैं।

इन कुटेवों के कारण कई बार मुसीबत आई, पर लाला उस समय धन्ना को आगे कर देते। लाला निर्दोष रहते थे, सारे गुनाहों का ठीकारा धन्ना के माथे फूटता। धन्ना के लिए यह सौदा बुरा न था। हर पिटाई पर उसे पिटाई के हिसाब से इनाम मिलता और हर तरह से गुलछर्रे उड़ाते समय उसका हाथ लाला की जेब में रहता। यदि मौत ने उसे उठा न लिया होता, तो वह लाला के लिए कई बार और बलि का बकरा बनता। बलि के बकरे को खिला-पिलाकर मोटा करना लाला का काम था।

भगवान जाने धन्ना कहाँ से ढाई मन वजन रखने वाले लाला के लिए वे कनकछड़ियाँ जुटाता था? लेकिन उन दिनों धन्ना ऐसा आड़ा टेढ़ा खूसट न होकर एक बाँका जवान था और स्वभाव के लिये लजीले लाला के लिए शुरू-शुरू में उसने आश्रम में जवान छोकरियों की भरमार कर दी थी। यों धन्ना की जवानी जल्दी आई, जल्दी ही चली गयी। लाला के लिए माल चखकर लाने के अतिरिक्त धन्ना ने अपनी घरवाली को भी ग्यारह बार गर्भवती किया। यह और बात है कि वह गर्भ से बाहर आई सभी सन्ततियों को जीवित नहीं रख

पाया। उसे लाला की चाकरी में पितृधर्म या पतिधर्म निभाने की फुरसत ही नहीं मिल पाई।

लाला को उन दिनों की याद आते ही फुरफुरी आती है, जब बिना पाँट में टका लिए हर कोई अपना कुँवारापन दूर करने के लिए उनकी हवेली के इर्द-गिर्द मँडराया करता था। बड़ी मुश्किल से पाँच-सात प्रौढ़ायें और वृद्धायें पकड़ में आईं और उन्हें बहला-फुसला कर आश्रम में रखा गया। पंडितों ने अबला सदन स्थापित करने के पुण्य को यशस्वी बनाने के लिए जो पुस्तिकायें लिखीं, उनके एक-एक शब्द को लाला ने चाँदी से तोला था। अबला सदन का विधान बनाना पड़ा, उसकी रजिस्ट्री करायी गई, और न जाने क्या-क्या पापड़ बेलने पड़े, तब कहीं वर्षों में जाकर यह कलंक धुल पाया। स्पष्ट है, धन्ना को इस प्रक्रिया में कई बार पिटने वाला मोहरा बनाया गया। आदतन, पांची और पेमा के मामले में भी वही पिटने के लिए सामने आया।

अब लाला ने अबला सदन को सरकार को देकर और उस कुत्सित रात्रि विलास से छुटकारा पाकर अपने ढंग से ठीक ही नतीजा निकाला है कि अच्छा हुआ, भगवान ने धन्ना को उठा लिया।

5

लाला ने ठीक गोटी खेली थी। उनका अबला सदन बंद होते ही जयदेव ने उन्हें अखबार की सामग्री मानना छोड़ दिया था। सच पूछा जाय तो उसकी प्रतिशोध और विद्रोह की भावनायें ठंडी पड़ गयी थीं। प्रेम ने अपने मृदु स्पर्श से जयदेव के मन के काँटे बुहार दिये थे। उसके मन में शांति थी, और प्रेम के प्रति कृतज्ञ भावना, जिसने उसके जीवन के समस्त तापों पर स्नेह की शीतल वर्षा कर दी थी।

किन्तु जयदेव और लाला का संघर्ष समाप्त होते ही हमारी यह कहानी भी समाप्त हो जाती है। अब इसके बाद बताने को रह क्या जाता है? अर्जुन और जयदेव अपना-अपना संघर्ष समाप्त करते ही दुनिया की भीड़ में खो गये। पांचाली को पाकर अर्जुन ने क्या पाया, यह वह नहीं बता सकेगा। किन्तु जयदेव ने अपनी सीमा समझ ली। यहाँ पिटने के लिए धन्ना या शरफू बुल्ले जैसे लोग ही हैं। लाला जैसों तक कोई हमला नहीं पहुँच पाता। इस बीच वाले

मेंढक की तरह अखबार छापकर टर्रक-टम करता रहा और उसी की पीठ पर सवार लाला कहते रहे 'मजे में हम'। दुनिया की समूची व्यवस्था अपने आप को बचाये रखना चाहती है। मनुष्य की सभी आस्थाओं और सिद्धान्तों का यह दुनिया परीक्षण की चिरन्तन प्रक्रिया में कचूमर ही निकाल देना चाहती है।

ऐसा नहीं कि दुनिया बदलती न हो। वह बदलती है। किन्तु परिवर्तन की यह क्रिया अत्यन्त दीर्घसूत्री है जो अपने प्रयोजन को ही निष्फल कर देती है। एक समूचा देश शताब्दियों तक किसी विदेशी प्रभुत्व से मुक्ति के लिए संघर्ष करता है। तब संघर्ष की शक्ति को जीवित रखने के लिए कई पीढ़ियों को निरन्तर इस छलना में भुलाये रखना होता है कि मुक्ति के प्राप्त होते ही समृद्धि के समुद्र तट तोड़ने लगेंगे। किन्तु मुक्त होने के कई वर्ष बाद तक समृद्धि की एक पतली धारा भी कठिनता से प्रवाहित हो पाती है।

जीवन एक फव्वारे की तरह पहले ऊपर उठता है, और ऊँचाई पर क्षण भर ठहर कर वह नीचे की ओर गिरता है। जब उमंगें जवान होती हैं और जब फव्वारा ऊपर उठ रहा होता है तो दुनिया हथेली पर आँवले की तरह कब्जे में दीखती है। लेकिन कब फव्वारे का पानी नीचे गिरता है और आँवला हथेली से फिसलता है, पता ही नहीं चलता।

यों हमें यह भी मान लेना चाहिए कि प्रेम के रूप में जयदेव को अपनी मंजिल मिली है। वह यदि और भटकता तो अपने दमित आक्रोश से त्रस्त ही रहता। दुनिया में बदलने लायक बहुत कुछ है, और ऐसा जितना कुछ जयदेव को दीखता, वह उतने के पीछे लट्ठ लेकर पड़ा रहता। किन्तु अब उसके मन में कल्याण-भावना का एक अजय स्रोत फूट उठा है। या यों कहें कि बस्ती का रूठा बेटा अब मान गया है। प्रेम ने उसके जीवन में आकर रूठने को कोई ठौर ही नहीं छोड़ा है। उसे पाकर उसने बहुत कुछ पा लिया है।

जयदेव अपने स्वभाव के अनुसार कभी-कभी विचारों की उधेड़बुन में पड़कर अब भी उदास होना चाहता है, किन्तु उसकी यह उहापोह और उदासी टिक नहीं पाती। आज जब वह अन्य-मनस्क होकर आगे-पीछे के और अपने-पराये दर्द लेकर सोचने बैठा, तो प्रेम ने उसकी समाधि फिर भंग की। वह उसे यह बताने आई थी कि जयदेव शीघ्र ही पिता बनने वाला है।

डा. डिल्ली रमण रश्मी
कल्याणी ... 52 867
पुस्तकालय
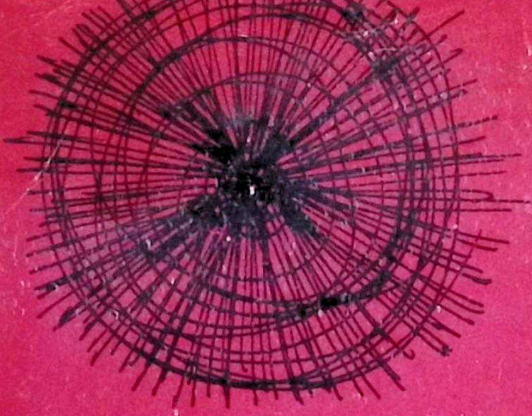
C59.833
4738x8